

श्रीराजलक्ष्मी ।

उपन्यास ।

प्रथम खण्ड ।

(वङ्गभाषासे अनुवादित ।)

मडेल भगिनो, कालाचाँद, चन्द्रभूषण चरितान्त,

राजगोपाल प्रभृति उपन्यास लेखक

द्वारा विरचित ।

कलकत्ता,

१८१९ भवानीचरण दत्त स्ट्रीट, हिन्दी बङ्गवासी

इष्टिकरी मेथीन प्रिन्स

चीफ्टवर चक्रवर्ती द्वारा मुद्रित

द्वारा प्रकाशित ।

सन्वत् १८१२ ।

मूल्य २, दो रुपया ।

अट्टालिकाने निकट पहुँची । राजभवन सरोखा प्रसाद है ।
उमके सामने फुलवारी, सरीजर, देवालय, अतिधिशाला, नौबत
खाना और बडा भारी आगन—है नहीं क्या ? मझीके
लडनेका असाडा अलग,—नाचने और गाने बगानेका स्थान
खतन्न,—एक साथ दो हजार आदमियोंके भोजन करनेकी
जगह जुदा, ब्राह्मण पण्डितोंके बैठकर विचार करनेका स्या
खतन्न,—पूजा पाठकी जगह अलग,—है नहीं क्या ? इमके
बाद अन्दरमहल । वह भी बडा भारी और कई खण्डोंमें
विभक्त है ।

देखते हैं,—ट्टा इसी राजभवनमें जाना चाहती है । इतनी
देरमे ममभा, बुढ़ी इसी घरकी लौंडी है । मालूम होता है,
राजकन्या सवेरे ही गङ्गाजलसे स्ना करती है । इसीसे दासो
पवित्रतापूर्वक जल लाती है ।

ट्टा मकानके अन्दर गई । फुलवारीमें कोई नहीं देखता,—
माली कहा गये ? जाड़ेका सवेरा है न ?—अत्यन्त जाड़ेके
भारे माली लोग अभी काममें नहीं लगे ।

अन्दरमहलके दूमरे दरवाजे,—सिंहद्वारमें,—ट्टाने प्रवेश
किया । वहाँ एक तबडुब्बादनश्याम, दीर्घकाय, विशालवक्ष,
भीमाकृति, लोहितलोचा पुरुष खडा है । उमर चालीससे
अधिक है । देह सुडौल, सुट्ट—कटि फेशरीमदृश,—तेज और
फुत्ताकी मूर्ति । जवागीके आरम्भमें यह आदमी कैना बलवा
रहा होगा, इस समय यही विचारनेकी दृष्टा होती है । मालूम
होता है, यह राजभवाका पुराना दरवा है ।

ट्टाकी नेरे देखकर इसने साधाङ्ग दण बत् किया । राह

दीनो पाव और अङ्गुलियोंको देखनेसे मालूम होता है, कि उद्वा गौराङ्गी है । उमर प्रचामसे अधिक होनेपर भी मालूम होता है, कि वृद्धाकी देहमें बल है ।

मा । राहमें तो इस वक्त कोई व्यादमी नहीं है । फिर तुम भीगे कपड़ेसे सारा शरीर ढाँके क्यों जा रही हो, मा । तुम्हारी उमर इतनी अधिक हो गई है, तौ भी तुम घूँघट क्यों ढाँके हो, मा । तुम खुद क्यों पायीं छोटी हो ? इतना बड़ा घडा उठा वे जाग क्या तुम्हारा काम है ? क्या तुम्हारे घरमें सौंड़ी नहीं है, मा ।

मा । बडा जाडा है । एक सूखा कपडा क्यों न लेती आईं । उसे पहनकर, जानेमें तो इतना कष्ट न होता, मा । क्या तुम्हारे पास और दृमरा लपडा नहीं है ?

इतना सनेरे स्नान क्यों मा ? अभी रात ही है । चिटिया भी अभी नहीं बोलती । क्या यह स्नान करनेका समय है ? कुछ धूप निकलनेपर स्नान करनेसे तो इतना कष्ट न होता ?

किन्तु वृद्धा अच्छी तरह जा रही है । चाहे जाड़ेसे घर धर कापता हो, चाहे बड़ेके बोभासे ही डग मारती हो, पर जा रही है वह अच्छी तरह । नहीं, नहीं, मागो वृद्धाको बडा कष्ट मालूम हो रहा है । कापना और हिलाना—क्या करने चिन्ह नहीं है ?

पौष मासमें उडे तडने ही वृद्धा इस भाति पाव मील घी आई । धीरे धीरे आकाश साफ हुआ । चिटिया चहचहाने लगी । राहमें दो एक व्यादमी देख पडने लगे । वृद्धाने और

अट्टालिकाले निकट पहुँची । राजभवन सरोखा प्रासाद है । उसके सामने फुलजारी, मरोवर, देवालय, अतिथिशाला, तैन्त-खाना और बड़ा भारी आगन—है नहीं क्या ? मझोंके लडनेका अखाडा अलग,—गाघने और गाने बगानेका स्थान अलग,—एक साथ दो चमार आदमियोंके भोजन करनेकी जगह जुदा, ब्राह्मण पण्डितोंके बैठकर विचार करनेका स्थान अलग,—पूजा पाठकी जगह अलग,—है नहीं क्या ? इसके बाद अन्दरमहल । वह भी बड़ा भारी और कई खण्डोंमें विभक्त है ।

देखते हैं,—बड़ा इसी राजभवनमें जाना चाहती है । इतनी देरमें समझा, बुझी इसी घरकी लौंडी है । मालूम होता है, राजकुन्या सबेरे ही गङ्गाजलसे स्नात करती है । इसीसे दासी पवित्रतापूर्वक जल लाती है ।

बड़ा मजानके अन्दर गइ । फुलजारीमें कोई नहीं देखता,—माली कहा गये ? जाडेका सबेरा है न ?—अत्यन्त जाडेके मारे माली लोग अभी काममें नहीं लगे ।

अन्दरमहलके दूसरे दरवाजे,—सिंहद्वारमें,—बड़ाने प्रवेश किया । वहाँ एक तबडुर्जादलश्याम, दीर्घकाय, विशालवक्ष, भोमाकृति, लोहितलोचन पुरुष खड़ा है । उमर पालीससे अर्धशत है । देह सुदौल, सुडुँठ—कटि केशरीमण्डल,—तेज और फुराकी मूर्ति । जवाहीके चारम्भमें यह आदमी कौना बलवा रहा होगा, इस समय यही विचारनेकी इच्छा होती है । मालूम होता है, यह राजभवाका पुराना दरवान है ।

बड़ाने नेरे देखकर इसने साष्टाङ्ग दण्डन दिया । राह

छोड़कर अलग खड़ा हो गया। कुछ बोला भी नहीं। केवल टक लगाये बड़े घड़ेकी ओर ताकता रहा।

यह क्या? दरवानने लौंडीकी प्रणाम क्यों किया?

अधिकतर आश्चर्यकी वशाततो यह है, कि सदरखण्डमें जीव मात्रका समागम नहीं है। धू घट उठाकर वृद्धा शिर भुकाये सदरखण्डसे चली जाती है। अन्दर जानेकी राहमें वृद्धाने देखा, कि पाँच वर्षकी एक लड़की दौड़ी चली आती है। उसने इस और क्रोधमे आकर वृद्धाको घूसा मारनेके लिये हाथ उठाया।

वृद्धा। हमे मत छूना। अभी पूजा समाप्त नहीं हुई।

बालिका। मा! तू बता, इतनी देर करने क्यों चाई?

वृद्धा। गङ्गा क्या नरे है, बेटी।

बालिका। मा! तुम्हें देरी हुई, यह देखकर बहू कितना रोई है। बोल, अबतो देर न करोगी? नहीं तो अभी घूस लगाती हूँ।

वृद्धा। नहीं, बेटी। अब देर न होगी।

इस तरह बातचीत करते करते वृद्धा आगे बढ़ी जाती है। इसी बीचमे एक अर्द्ध अवगुण्ठनवती स्त्री शुद्ध वस्त्र धारण किये चाई और घड़ेको लेकर वृद्धाके पीछे पीछे जाने लगी। जिस कोठरीमें पूजाकी तय्यारी हुई है, उसीमे घड़ेको रख दिया। वहने धूप धूना—गूगुलमे आग छोड़ दी। एक मन्दरह वर्षके लड़केने आकर वृद्धाने निकट निखपत्र आदि पूजाकी सामग्री रख दी। वृद्धा देवीजीने सामन पूजा करनेके लिये बैठ गई।

दूसरा परिच्छेद ।

बृहदा गृहस्वामिनी है । बधू,—बृहदाने प्रथम पुत्रकी सद्यध-
र्मिणी है, बालिका,—बधूकी कन्या है, बालक—बृहदाका छोटा
लडका है । बधू—सधवा है, पर स्वामी नहीं है—ब्याज माल-
भरसे अधिक हुआ वह न मालूम कहां चले गये है । कि-
सीको कुछ भी मालूम नहीं है । बालिका अभ्यासद्वयसे
अपनी पितामहीको मा कहकर पुकारती है,—अपनी माको
बहू कहती है ।

बृहदाका नाम कात्यायनी है और पौत्रीका लक्ष्मी । पत्नी
बृहदा नाम यशोदादेवी है । निरुद्धिष्ठ ष्येष्ठ पुत्रका नाम है
भवानीप्रसाद मिश्र और छोटे लडकेका रमाप्रसाद । और वह
भौमाशक्ति पुरुष जिनने सिद्धदागके निकट बृहदाको प्रणाम किया
था, मकानका दग्धान है । बालिका गोब्याला,—नाम रघुदयाल
है । उसकी मा उसे "निरुद्धू" कहकर पुकारा करती थी ।

बृहदाका मकान,—फुलवागे, तालाब भिलाकर प्राय व्याधा
गाव ऐसे हुए था । मकानकी चाने ओर दीवार खिंची हुई
थी । ऐसे भारी घरमें केवल तीन स्त्रिया—रमाप्रसाद और
रघुदयाल दो पुरुष,—इन पांच आदमियोंके सिवाय और कोई
नहीं रहता । केवल रघुदयालके यम और गुणसे मकान अभी
बैसा खीरी नहीं हुआ,—भ्रमशा नहीं बा । रोज कुछ फल
बानूषूना गिरता है मही, पर रघुदयाल उसे उठाकर

फेर देता है। दागाग्ने चमगीदड़ोको चोमला जाने नहीं देता। उन्हें गुलाब मारकर नन्देड बाहर करता है, पर कतंगोंको झुल नहीं रहता। गृहस्वामिनीकी भी आज्ञा है, कि कबूतरोके साथ ट्रेड्डनड मन करी। रघुदयालने एक किनारे उनके रहनेके लिये खाया वाग दिया है। वहीं बघान य घोडा बहुत उनके दागा भी देता है। सदरसख और अन्दरखरमे गगर कतंग जाते, तो रघुदयाल हला सचावर उन्हें उडा देता था। बडे भारी उद्यालमें ब्येक प्रकारके फलके पेड थे। अथ एक भी नहीं है। बत्तीस माली थे। अब केवल रघुदयाल है। फिर उद्यानकी सुरक्षा कैसे हो ? जब कभी कोई पूजा पेड खस जाता, तब रघुदयाल उसे काट कर फेंक देता था, सभी कभी गृहस्वामिनीके ईशाने काम आता था।

इसी तरह एक वर्षमें मन पेड नाफ हो गये। सिर्फ देवी-पूजाके दिमित झुङ्ग पेड बचा रखे गये। यह उन्हें खुद गोपता था। मिथाय पुष्पवृक्षोंके और किमी किमसा पेड उद्यानमें नहीं था। यदि था, तो केवल एक बालका पेड। गृहस्वामीने उसे अपने छाघसे लगाया था। लोग कहते है कि येना पीठा आम उस देशमें ब्यार नहीं था। वह खुद जालमें उसे तोडते, पात रखवार पकाते, फिर देवताको अर्पण करते और प्राजायोंको बाट देते। अन्तमें तद्दुर्गमिणी काव्यायनीसे कहते,—“वन कोई आम पा चुका, वाग वन भी एक आम खा लो तो हम भी चोखे।” काव्यायनी हलकार जाती,—“आम खडा है, निना प्रवाद पने भीटा नहीं होगा। गृहस्वामि मैं क्यों प्राजा ?” आम जब पजनेपर होगे, त-नेउपर रेशमवा जाल

झात दिया जाता था। दो दरवा पहरा दिया करते थे।
मालिक मोनेने पहले एक बार उस पेडके पास जाते और
रघुदयालसे कह आते,—“देखना, पहरेपावे काही सो न जाय।”
अप फल टकनेके लिये वह रेशमी बाल गही है। रघुदयाल
तीर कमान लेकर बन्दर और चिडियोंको दिनें खदेडता है
और गलमें दो तीन बार बादुरीको उडा देता है।

अब भी ग्राम उमी तरह प्रकटा है। अब भी गृहस्वामिनी
गावके सब देवातायो और सुजाअणके यहा उमी तरह अब म
भेज दिया कामी है। सब उमा तरह हीता है, पर वह रुद
अब ग्राम गही चीखती। जब कभी पुत्रवधू यशोदा उन्हें
ग्राम खाने कहतीं, तब वह हमका कहतीं,—“खड़ा ग्राम में
नहीं खानी। पत्नीह दम्का मतलब गही मनभक्तो थी। मा
नदी धान काटना अचुचिन समझकर वधुधुप रह जाती। और
ग्राम गहा खाता था,—वही दरमा रघुदयाल। गृहस्वामि
निनेने अचुगीय करनेपर वह हाथ जोडता था। बहुत विष
करनेपर ग्राम लेकर फिर चढ़ाना और कहता—“मा। जिस
ग्रामको मालिक बहुत प्यार करते थे, उसे हम कैसे खाय ?”
इसका कहत कहते रघुदयालके नांगोसे वासकी भन्नी लग
जाती थी। माताकिन फिर वहा न ठहरतीं, लोटकर अजर
फती जातीं।

रघुदयालको चेष्टासे मखेश्वर नाक रहता है। पहले मर
सोते भरा था,—अब गले है। अब मखली छातीगाप
ग्रामी ही नहीं है, मखली बड़े ती कदाचि ? पहले सुखद
धार्मिसातक मुरके मुर आदमी खाते हैं,—अब १३

नहीं देखता। सम्राटका महाराज्य है। मालूम होता है, उस राह आदमी चलते ही नहीं। चलनेपर भी कोई उस मकानकी तरफ शिर उठाकर देखता नहीं, देखनेपर भी लक्ष्य नहीं करता। शायद उस भवनके ऊपर होकर चिड़िया भी नहीं उड़ती। सब कुछ था,—सभी चला गया। अथवा है सब कुछ पर है कोई नहीं। उस समय मित्र थे, स्वजन थे, गुरु थे; पुरोहित थे, साले थे, बहनोइ थे,—और भी कितने ही थे,—अभी है अभी,—पर है कोई भी नहीं। अब यदि रघुदयाल भी अलग हो जाय, तो सोलहो कला पूरी हो जाय।

— — —

तीसरा परिच्छेद ।

— — —

हाय ! क्यों और किम तरह ऐसा हुआ ? किसके दोष, किसके पाप, किसके अभिशाप, किस बुरे कर्मफलसे यह सोनेका ससार,—यह स्वर्णप्रतिमा मट्टीमें मिल गइ। हाय ! कौन इसका कारण बता देगा।

जमीन्दारी थी, तिजारात थी, कन्पनी कागज था, नौकरो थी, किमानी थी, धाकी सैकडों मोरिया बधी रखी थीं, अब कुछ भी नहीं है। व्याज दो वर्ष हुए, भालिककी मौत हो गइ,—मानो षाडूके मन्त्रसे सब उड़ गया। अगणित दाम राधियां थीं, सोलह दरवान थे, कलमधारी कर्मचारी तीसरे

कम गये, हाथी थे, घोड़े थे, गावें थीं। अतिथिप्रालामें
नित्य ही पचीम अतिथियोंकी सेवा होती थी, देवसेवाके
लिये वारह ब्राह्मण नियन थे, भौ भाखरियोंकी रोज डेट
पाव चावल दिया जाता था। रघुकी अघिष्ठाती देवी शङ्करीकी
सेवामें प्रतिदिन डादण बलिदान होते थे, अब वह सब कुछ
भी नहीं है। कभी रक्षा, कि नहीं, उमका चिन्ह भी शायद
नहीं है।

मालिकका नाम था,—शङ्करीप्रसाद। वह शाल और
सुक्तहस्त पुरुष थे। उनका ललाट उन्नत, नेत्र उज्ज्वल और
वर्ण तप्तकाश्चन मरोखा था। वह ब्राह्ममहूर्तमें उठते और
पूजा तथा होम समाप्तकर सवेरे आठ बजे जब सदरमहलमें
पहुंचते, तब उनका तेज पुन्न कबेवर देखकर ऐसा मालूम
होता था भागे कोई राजर्षि पृथ्वीपर पैदा हुए है। उनके
गांव तथा आसपामके गांवके आदमी,—अदालतमें सुकदमा
करने न जाते थे,—शङ्करीप्रसाद ही उनके विचारपति धम्मा
पतार थे।

इस परम भाग्यवान पुरुष शङ्करीप्रसादकी गत्य हुई। दो
वर्ष बीतते बीतते मत्र स्वाहा हो गया। हे मनुजो! क्या
अभिमान मत करो। ऐश्वर्यशाली होकर कभी ऐश्वर्यका
धमक मत करो। विचारो, यह केवल छायामात्र है, कत्रिको
कल्पना है, आकाश युसुम है। यह विकारयस्त रोगीका
दुःस्वप्न अथवा माया है,—“जक्षादि लक्षणव्यन्त मायया
कल्पित जगत् ।”

शङ्करीप्रसादने सबका उपकार किया। जिन जिलेमें वह

रहते थे, यदि उममे अन्नवृष्ट उपस्थित होता, तो अन्नमत्र खुलवा देते थे। जहाँ पाणीका अभाव होता, वहाँ तालाब खोदवा देते थे। यदि कोई कन्यादान करनेके लिये धन जाधने आना, तो वह अवस्था देखकर अवस्था करते थे। अगर वह किसी रईसको नष्टते कारण जेल जाते देखते, तो खुद रुपया चुका देते थे। बहुतोको उन्होंने माता पिताके अणसे सुक्त किया था। गुरुको भूमिदान देकर धनी बना दिया था। पुरोहितको कई मञ्जिलका मकाग बनवा दिया था। परित्त ब्राह्मणोको बराबर दान देकर परितुष्ट करते थे।

सुक्ताहस्त होनेपर भी शङ्करीप्रसाद बडे हिमावसे चलते थे। उनको बुद्धिकी धार करेकी तीक्ष्ण धार जैसी थी। अनेक विषयोंमें वहदक्षिंता भी थी। वह अकेले धन उपार्जन करके इतने ऐश्वर्यके अधिपति हुए थे। तेरह वर्षकी अवस्थामें आवकारी विभागके किमी दारोगाके तम्बाडू भरनेवाले सुहरिंठ थे। यहीं उन्होंने पढाा लिखना अच्छी तरह सीखा। वह बङ्गला और फारसी जानते थे। अन्त अवस्थामें कुछ अङ्गरेजी भी सीख ली थी। सतरह वर्षकी उमरमें उन्हें पुलिस विभागमें डेडकनिष्टबलकी नौकरी मिली। बीस वर्षकी अवस्थामें दारोगा हो गये। एक वर्षके बाद मेदनीपुरके पास किमी हस्तान कम्पनीकी गीलकोठीके शीवान सुकरर हुए। पाच वर्षके उपरान्त उन्होंने गौकरी छोडकर थापार करार आरम्भ किया। थापार होसे उाको विशेष वृद्धि हुई। नमकाका रोजगार करके एक वर्षमें चार लाख रुपया कमाया। जब वकालतकी परीक्षा देकर वकील बा गये। दो सालके अन्दर,

निलेमें यह सर्वप्रधान और प्रथम वकील हो उठे। व्यामदनी भी खूब चोरी लगी। व्यामदनीने साथ साथ खर्च भी ज्यादा था। आगकल अनेक वसील कमाते हैं सिर्फ स्त्रीके सहने अथवा कम्पनी कागजके लिये। जिस समय शङ्करीप्रसाद नील कोठीके दीवाना हुए थे, उन्हीं वक्त पहले वर्ष ही उन्होंने गृहकी अधिष्ठात्री देवी शङ्करीके लिये एक बड़ा भारी मन्दिर बनवाया था। अब रुपया कमानेपर देवमन्दिरकी बात तो दूर रहे कोई तालान भी नहीं खुदवाते। इस समय धा उपाच्यन करनेपर मकान, धडी गाडी, जोड़ी,—बाकी रह जाता है सिर्फ एक रस्सा।

आगकल अतिथिशालामें अतिथिसेवाने बदले चन्दकी बहीमें सही की जाती है। मृती भर भीख देनेकी जगह गरदनिया ही जाती है। इस समय अनेक छाकिम वकील, व्यवसायी, जमीन्दार रोजगार करते हैं,—रोजगारके लिये। सभी लोग रोजगार करने थ,—क्रियाकलापके लिये, पूजा पर्वात्सवके हेतु। इस समय भी उत्सव होता है सही, किन्तु पैंतिक देवीको घरमें न खानेसे स्त्रिया क्रोध करती है,—इन्हींसे मालिक धर्म-कर्मका भार चौरतोपर छोड़कर मपेरेसे दश बजे राततक केवल गेजगार होको चिन्तामें चूर रहते हैं। नखसे शिखतक केवल चिन्ता,—केवल पैसा, केवल तान्त्रखण्ड, केवल रगतखण्ड, केवल ह्या हुब्या कागजखण्ड। किन्तु क्यों पैसा, क्यों रुपया और क्यों कागज,—उनके लिये एकवार भी चिन्ता नहीं करते। दोनो आखें सु दनेपर ही अन्धकार का नायगा, यह उन्हें सभी ख्याल ही नहीं होता। सिर्फ कम्पनीके घरमें रुपया डाल देनेमें क्या होगा, भाद ? शङ्करीप्रसादके तो मव कुछ था, पर

इस समय वह कष्ट भला गया, भाई ! तबद रूपसे घे, चांदी सोनेके वस्तु ध, मोहर घे, जमीन्दारी थी, व्यापार था, मभी था,—फिर बताव्यो तो सही, उनकी गत्युके बाद देखते ही देखते सब स्वाहा क्यों हो गया ? भला बताव्यो तो उनकी स्त्री राजराजेश्वरी छोकर व्याज भिखारिणी क्यों हो रही है ? राजराजेश्वरी,—व्याज बगलमें घटा दनाकर गङ्गाजल क्यों लाती है ? राजराजेश्वरी,—व्याज माड भात क्यों खाती है ? राजराजेश्वरी,—व्याज गङ्गास्नान करके भींगा वस्त्र पहने ही घर क्यों आती है ? राजराजेश्वरीके व्याज और दूमरा वस्त्र क्यों नहीं है ? राजराजेश्वरी,—चूल्हेपर छाडी पढ़ाकर तीसरे पहरतक जल क्यों गर्म करती है ? रघुदयाल तीसरे पहरतक पावल क्यों नहीं जुटा सकता ? सब कर्मफल है,—

सुख दुख सकल कर्मफल भारी ।

कोउ राजा कोउ रद्द भिखारी ॥

इसीसे, कहते हैं धन बटोरनेमें सुख नहीं है,—सुख है सद्व्ययमें । कर्म कर जाव्यो, शास्त्रानुमोदित कर्म कर जाव्यो, देवसेवा, अतिथिसेवामें तत्पर होव्यो, सुभाषणकी रक्षामें मा लगाव्यो, तुहारा धन सार्थक होगा ।

शङ्करप्रसादकी मारी सम्पत्ति किस तरह उड गड, इमने कहनेकी आवश्यकता इस समय नहीं है समय आने पर सब मालूम हो जायगा । इस वस्तु इतना ही समझ रखिये, कि काव्यायनी व्याज दाने दानेके लिये तरस रही है । भाद्र मासकी भगे पूरी गङ्गा व्याज बारि हीना,—अत्रपूर्णा हटानु व्याज अत्रहीना है ।

चौथा परिच्छेद ।



सत्सुच ही भीगा कपडा पहने कात्यायनी शङ्करीके समीप हाथ जोड़े ध्यानमें निमग्न है। उसे पूजा, जप, होम, वाराधना, ध्यान आदिमें प्रायः साठे तीस घण्टे लगते थे। भीगा वस्त्र देह हीमें सजता था। उसने दूसरा कपडा एकदम धा ही नहीं, ऐसा नहीं था, गूँज था, पर बह छोटा और पेवन्दार था। बभू यशोदा मिलाइके काममें बड़ी निपुण थी। उसने फटे कपडेको स्थान स्थापर भी डाला था और जहाँ जहाँ जरूरत थी, पेवन्द भी लगा दिया था। रभू और चिन्गारु करनेपर भी बख्तरा कू आना व्यग्र नहीं था। जिता बहुत फट गया था, उतना फाड़कर गमछा बना लिया गया है। बाकी बचा हुआ अश पाच हाथसे अधिक न होगा, फिर उससे लष्णा निम्न तरह नियारण हो सकती है ? लाचार कात्यायनी गङ्गातटसे भीगा कपडा पहने आती जार उसी तरह ध्यानमें निरत हो जाती।

मास पूजापर बैठ गईं। अब दश बजेतक यह तिष्ठित है। इतर आन "अन्नचिन्ता चमत्कारा।"—घरमें चावल नहीं, नमक नहीं, तरकारी नहीं, तेल नहीं, है निर्म घोड़ोमी खेना गीको दान। यशोदा स्मोड बनाती और यह देखती, कि घरमें कौन चीज है, कौन नहीं है,—कात्यायनीका इन विभागमें कोर, सम्यक्त न था। कुछ गत रहते ही कात्यायनी गङ्गा

मान करने गई है और इधर यशोदा, घरमें कुछ भी नहीं है, यह देखकर बैठी रो रही है। "मा गङ्गास्नान करके जब आवेंगी, तो कैसे कहूंगी, कि आज खानेके लिये घरमें कुछ भी नहीं है। लक्ष्मीका दूध भी गोव्यालिनके कलसे बन्द कर दिया है। यह किस तरह पूछूंगी, कि पहर दिन चढ़ते चढ़ते लक्ष्मी क्या खायगी। मा जब पूजा समाप्त करके उठेगी और यह सुनेगी, कि आज देवसेवा और भोजनके लिये चावल नहीं है, मोदी मीथा देता नहीं, पडोसी उधार देते नहीं, तब उन्हें कितना कष्ट होगा। वह कष्ट हमसे कैसे देखा जायगा।"—इसी तरहकी अनेक बातें विचार विचारकर यशोदा पिछली रातसे बैठी केवल रो रही है।

सबरे लक्ष्मीने उठकर यशोदासे पूछा "बहू! तू रो क्यों रही है?" यशोदाने असली बातको छिपाकर कहा,—“मा गङ्गास्नान करने गई है, बड़ी देर हुई अभीतक आई नहीं, इसीसे रो रही हूँ।” यही कारण है, कि लक्ष्मी अपनी दादीको अन्दर आनेकी राहमें घूमा मारने गई थी।

धीरे धीरे धूप निकल आई, आठ बज गये—लक्ष्मी माताका अश्रुल पकड कर खड़ी हुई और बोली,—“मा! भूख लगी है। कुछ खानेको दे न।” यशोदाने लडकीके हाथमें अश्रुल छुड़ा लिया। कुछ दूर जाकर उसने कहा,—“देती हूँ, बेटी।” मुहसे और बोली न निकल सकी, आखीने, आसू आते देखकर वह रनोडंघरकी और भाग गई।

कन्यालक्ष्मी, "बहू! कहा भागी जाती है?" कहकर माताके पीछे पीछे दौड़ी। माता—लडकीको आते देखकर

बहुत घबराई और अचलके कोनेसे आंख पोछने लगी, पर वह जल बग पोछा जा सकता है । जिताग पोछती है, उससे दुगुना जल बहता है, मानो जलकी झडी लग गई है,—संभारमें किसे ताकत है जो उसे रोक सके ? देखते देखते कन्याने आकर फिर माका अचल पकड़ा और कहा,—“अरी ! यह क्या ? तू रोती है क्यों ?”

मा । (रोती हुई) नहीं बेटी ! रोती नहीं हूँ ।

कन्या । यह जो रो रही है । अगर फिर रोई, तो जाकर मासे कह आऊंगी ।

इतना कहते कहते बालिकाकी आंखे डबडबा आईं । माको रोती देखकर कौन लडकी नहीं रोती ? सच्चीकी आंखोंसे आंखकी धारा चलने लगी । इसके बाद रोनेका सुर बघा । माने उसे गोदमें उठा लिया, मुख चूमा और कहा,—बेटी ! रो मत । रोती क्यों है ?

कन्या । तू ही क्यों रोती है ?

माताने इस बातका कोई जवाब न देकर लडकीको गोदमें उठा लिया और रसोईघरमें चली गई । रसोईघर ऐसा वैसा नहीं, बहुत भारी है । इसमें पांच हजार आदमियोंकी रसोई एक साथ बन सकती है । अनेक बड़े बड़े चूल्हे हैं । कहीं माड पसानेका स्थान है, कहीं भात रखनेके लिये मङ्ग मरमरके बड़े बड़े चहबचे हैं और कहीं तरकारी और लकड़ी रखनेकी जगह है । पाकगृह वैसाही विस्तृत और सुसज्जित बना है, पर उपकरण नहीं हैं ।

इस अपूर्व रसोईघरके एक बड़े चूल्हेके पास माता बेटीकी

गोदमें लिये बैठ गई। लडकी गोदमें उतगर इधर 'उधर खेलने लगी। बालिका दौडकर कभी चूल्हेपर चढ़ जाती है, कभी चहवर्षमें कूदती है और कभी चूल्हेमें छिपकर माको ऊ—ऊ—ररने पुकारती है।

नगनी यशोदा भी कुछ प्रकृतस्य हुई। अब वह निम्ने षण्ण्य लोचासे उम अपूर्व पाव गृहकी शोभा निरखने लगी। जहा एक एक दिन पांच भात मन चावलका भात प्रस्तुत होता था, आज वहा पांच वर्षकी लडकीके लिये पकानेको एक भूठी अन्न नहीं है। सर्व ग्राहक कारने सब कुछ हर लिया है।

खाली पेट खेलना अच्छा नहीं लगता। थोटी ही देर खेलकर लडकीने कहा,—“बह ! गोबालिन अबतक दूध क्यों नहीं दे गई ? अच्छा, तबतक तू चूल्हा जला रख, दूध आते ही गर्म कर देना।”

अच्छा कहकर माता बालिकाको अकेली छोड़ वहासे चली गई। जाकर पहले यह देखा, कि मासगीकी पूजा अभी समाप्त हुई है, कि नहीं। पूजा तबतक खतम नहीं हुई थी। खुदयालने जलानेके लिये लकड़ी तय्यार कर दी थीं, उसमेसे अबतक कुछ बच रही है। चूल्हा जलानेके इरादेसे यशोदा लकड़ी चुनने लगी। चुनती थी और मोचती थी,—मिर्झ लकड़ी चुनकर क्या होगा ? चूल्हा जलाने हीसे क्या फायदा है ? कुछ फल नहीं, लाभ नहीं,—यह जानकर भी यशोदा लकड़ी चुनने लगी। अच्छी अच्छी लकड़ो लेकर रसोईघरकी ओर चली। खुद यशोदा लकड़ीके लिये रसोई जाने जाती है, पर मिवाय लकड़ोके और कुछ नहीं है। हा

“मा ! तू कक्षां जाती है, बोल ? अभीतक दूध नहीं आया—मैं क्या खाऊँ ? बड़ी भूख लगी है !”

दादीके समीप आकर लक्ष्मीने देखा,—तीन सन्यासी बैठे हैं । वृद्धाके इशारा करनेपर लक्ष्मीने पारापारी मजकी प्रणाम किया । सुन्दरी—सुलक्ष्मणमम्पन्न बालिका देखकर सन्यासियोंने लक्ष्मीके शिरपर हाथ रखा—गायद् आशीर्वाद दिया,—हसे,—वृद्धाको कहा,—भाई ! तुमने इस कन्याको पौत्री रूपमें पाया है, तुम प्रन्य हो । यह कन्या तो राजलक्ष्मी है ।” लक्ष्मी,—यह निश्चय करके आई थी, कि चलकर दादीको खूब पीटूंगी, पर सन्यासियोंको देखकर भूल गई और दादीका दाहिना हाथ पकड़ कर सन्यासियोंकी देखती खड़ी रह गई ।

गोब्यालिन अबतक दूध नहीं दे गई, यह सुनकर वृद्धा मन्न छो गई । उसे शोच हुआ,—“क्या पैसा, नहीं मिला इसीसे गोब्यालिनने दूध बन्द कर दिया ? दूधकी पोथी लक्ष्मी बिगा दूध कैसे बचेगी ? अच्छा, यह बात अभी जाने दो,—यह जो अनिधि विमुख होते हैं, इसका क्या किया जाय ?”

दादीने फिर लक्ष्मीसे पूछा,—“सचमुच ही गोब्यालिन दूध नहीं दे गई ।”

लक्ष्मी । तो क्या मैं भूठ कहती हूँ ? दूधने घासों में बहूके पास कितना रोती रही, तौ भी बहूने दूध न दिया । अच्छा मा ! तू मेरे पेटपर हाथ रख कर देख —सुभो कितनी भूख लगी है ।

सचमुच ही लक्ष्मीने वृद्धाका हाथ लेकर अपने पेटपर रखा । बहू ख गया । धार ख उबडवा आई । उसने

कर कुछ सोचती सोचती धीरे धीरे मंदर फाटककी ओर जा रही है। वहाँ पहुँच कर फाटक खुला पाया। मां ही मन कहा,—“रघुदयाल बाहर जाता है, पर फाटक बन्द करके नहीं जाता, किसके मनमें क्या है, सो कैसे कहूँ ? इस लिये फाटक बन्द कर रखना ही उचित है।”

वृद्धा फाटकके पास पहुँची थी, कि उधरसे तीनों सन्यासी फाटक अतिक्रम करने भीतर चले आये। उनके शिरमें जटा, हाथमें कमण्डल, पीठपर बघकाला और कमरमें कोपीन थी। उन लोगोंने वृद्धाने समीप आकर कातर कण्ठसे कहा,—माई ! बड़े भूखे हैं। आज दो दिनों कुछ खाया पिया नहीं है।”

सन्यासीकी देखकर वृद्धाने साष्टाङ्ग प्रणाम किया। फिर कहा,—“महाराज। आप लोग तालाबपर इन्हीं पेड़के तले बैठकर त्रियाम कीजिये।”

पहला सन्यासी। माई। आज तीन दिन हुए देवताकी सेवा नहीं हुई। दूध और केला यदि घरमें हो, तो ले आ। देवताकी सेवा हो।

इतना कहकर प्रथम सन्यासीने एक शिवमूर्ति सामने रख दी।

वृद्धाने एकवार पीछे फिरकर देखा,—अपनी प्रकाण्ड अट्टालिकाकी ओर ताका, सोचा,—“क्या दूध होगा ? क्या घरमें केले मिलेंगे ? गोबालिन जो दूध सपेरे दे गई होगी उसे लक्ष्मी खा गई होगी।”

यह सोचते सोचते दूर हीसे देखा, कि लक्ष्मी मेरी ही ओर दौड़ी चली आती है,। दूर हीसे यह कहने लगी,—

“मा ! तू रुका जाती है, बोल ? अभी तक दूध नहीं आया—
क्या खाऊँ ? बड़ी भूख लगी है ।”

दादीने समीप आकर लक्ष्मीने देखा,—तीरा मन्थामी बैठे है ।
वृद्धाके इशारा करनेपर लक्ष्मीने पारापारी सबको प्रणाम किया ।
सुन्दरी—सुलभगमम्पन्न बानिका देखकर मन्थानियोंने लक्ष्मीके
धिरपर हाथ रखा—गायद आशीर्वाद दिया,—हसे,—वृद्धाको
कहा,—माई ! तुमने इस कन्याको पौत्री रूपमें पाया है, तुम
धन्य हो । यह कन्या तो राजलक्ष्मी है ।” लक्ष्मी,—यह निश्चय
करके आई थी, कि चलकर दादीको खूष पीटूंगी, पर मन्था-
नियोंको देखकर भूल गई और दादीका दाहिना हाथ पकड़
कर मन्थानियोंको देखती खड़ी रह गई ।

गोब्यालिन अबतक दूध नहीं दे गई, यह सुनकर वृद्धा मग्न
हो गई । उसे शोक हुआ,—“क्या पैसा, नहीं मिला, इसीसे
गोब्यालिनने दूध बन्द कर दिया ? दूधकी पोपी लक्ष्मी किंग
दूध कैसे बचेगी ? अच्छा, यह बात अभी जाने दो,—यह जो
अनिधि विसुख होते हैं, इसका क्या क्रिया जाय ?”

दादीने फिर लक्ष्मीसे पूछा,—“सचमुच ही गोब्यालिन दूध
नहीं दे गई ।”

लक्ष्मी । तो क्या मैं झूठ कहती हूँ ? वृषके वास्ते मैं
बच्चेके पास कितना रोती रही, तौ भी बहूने दूध न दिया ।
अच्छा मा ! तू मेरे पेटपर हाथ रख कर देख —सुम्ने कितनी
भूख लगी है ।

सचमुच ही लक्ष्मीने वृद्धाका हाथ लेकर अपने पेटपर रखा ।

वृद्धाका मुँह खुल गया । आखें डबडबा आई । उसने

हाथ जोड़कर सन्ध्यामियोंसे कहा,—“महाराज । शायद दूध घरमें नही है । रुष्ट न हनियेगा । मैं जाकर देखती हूँ, यदि घरमें दूध होगा, तो पहले देवसेवाके निमित्त आपके पास भेज दूंगी ।”

प्रथम सन्धासीने उत्तर दिया,—“माई । दूधके लिये, चिन्ता मत करना । यदि दूध न हो, तो एक मूठी अरवा चावल ही थथेष्ट होगा ।”

बुद्धा । महाराज । मेरे घरमें जो कुछ होगा, उसे देवता तथा आप लोगोकी सेवाके लिये अभी लिये आती हूँ ।

छठा परिच्छेद ।

बुद्धा अन्दरकी चली । लक्ष्मी उसके बायें हाथकी ही अङ्गुली पकड़कर साथ चली । लक्ष्मीने कहा,—“मा । अगर तू घर जाकर मुझे खानेकी न देगी, तो खूब पीटूंगी ।”

बुद्धा । बेटो । तेरे चाचा कहा है ?

पाठकीको याद होगी, कि बुद्धाके छोटे लडकेका नाम रमा प्रमाद है । उमर सोलह वर्ष है । बुद्धाके बड़े लडके भवानीप्रमादकी कन्याका नाम लक्ष्मी है, सो रमाप्रमाद हुए लक्ष्मीके चाचा ।

लक्ष्मी । चाचाको सबेरेसे नही देखा ।

बुद्धा । बेटो । तेरे मरदार—चाचा कहाँ हैं ?

रघुदयालकी लक्ष्मी सरदार—चाचा कहती थी ।

लक्ष्मी । सरदार—चाचा न जाने कहा भाग गये, मा ।—
बड़ने अभी उन्हें खोजा था,— सुभे भी खोजी कहा था,—
बहुत दूजनेपर भी ऽ मिले ।

इस तरह बातचीत करते करते बड़ा लक्ष्मीने साध भीतर
घुमी । अन्दर जाकर देखा, कि पतोह बैठी रो रही है ।
उमीने पूछा,—“बहू । रोती क्यों हो ? बहूकी आर्योंसे
और भी आसू चलने लगे । बड़ाने पूछा,—“तो क्या दूध
नहीं आया ? अबतक लक्ष्मीने कुछ खाया नहीं है ?”

यशोदाके मुँहसे बोली न निकली। सिर्फ शिर हिलाकर
जता दिया, कि अवनत लक्ष्मीने कुछ भी नहीं खाया ।

बड़ा । तो रोती क्यों हो—उर किन बातका है ?—
तुम्हारे यहाँ अन्नपूर्णा शुभचण्डी बैठी हुई हैं,—उनके रहते
हम लोगोंको चिन्ता किस बातकी है ?

यशोदा आख पोछने लगी । बड़ा कहने लगी,—“आज
तीन मन्वासित्रीने अपने पदरजसे हमारे घरको पवित्र किया
है । आज तीसरा दिन है कि उन लोगोंने कुछ भोजन
नहीं किया । उनके इष्ट देवता उपनाम किये हैं । यदि
कुछ चावन हो, तो दो । मैं उन्हें दे आऊ । और लक्ष्मीकी
बात्ते भटपट बात बना दो। जलही चूल्हा जलाओ । पान
जैसी व्यवस्था होती है, उमी भान्ति चलना भी पड़ता है ।
मा शुभचण्डीकी जैसी इच्छा होगी, वैसा ही होगा ।
इसके लिये दुस्र कैसा ? बहू । तुम रोओ मत । यह
लक्ष्मी एक दिन शानरावेश्वरी होगी । लक्ष्मीकी गोदमें
श लो,—”

यशोदाने लक्ष्मीको गोदमें ले लिया, सुख धूमा,—धीरे धीरे, उमके कागमें कहा,—लक्ष्मी । आज एकवार तू मेरा दूध पियेगी ? बहुत दूध भरा है ।”

लक्ष्मीने चौथा वर्ष समाप्त कर पाचवेंमें पाव धरा है । आज घाट महीनेसे स्नानपात्र करना छोड दिया है, सुतरा स्नानपात्रका नाम सुनकर वह बडी विगल हुई—कहा, न ! न ! अब मैं तेरा दूध नहीं पीती । जा—जा तेरी गोदमें न बैठूंगी,—”

इतना कहकर लक्ष्मी माताकी गोदसे उतर पडी ।

बहाने यशोदासे कहा,—“ बहू । घरमें जो कुछ चावल ही, दो—दरवाले भूखे अतिथि बैठे हैं । बहू । बोलती क्यों नहीं । यशोदाके सुँहसे और थोली न निकल सकी । मानो उसका कण्ठ रुह हो गया । कलेजा धडकने लगा । वह थर थर कापने लगी । शिर घूम उठा । आखोंके मामने अंधि याली छा गई । सुप्राथथाप्रपीडिता लक्ष्मीकी माता—अचेत हो कर सासके चरणोंपर गिर पडी ।

अतिथिसेवाके लिये घरमें एक मट्टी भी चावल नहीं है, यह बात यशोदा माससे एकदम कह नहीं सकती, पर प्रश्नका उत्तर अवश्य ही दे गा होगा,—इन दोनोंके विषम आघातसे जर्जरित होकर चीखा देगा यशोदा घूमकर जमीनपर गिर पडी और अचेत हो गई ।

सातवा परिच्छेद ।



पुत्रवृक्षे मूर्च्छित होनेसे कात्यायनी और भी घबराई। भीत और चकित होकर कुछ देरतक वह किकर्षव्य विम्वृण्वत् खड़ी रही, फिर दौड़कर जल लाने गई।

हा लक्ष्मीकी जननी। हा यशोदा देवी। कुछ देरतक मूर्च्छित अवस्थाहीमें पड़ी रहो। इसीमें शान्ति है। तुम्हारे पतिका पता गन्ही,—है, कि एकदम है ही नहीं,—इस्की मीमामा कौन कर देगा? तुम व्याशापर हिम्मत बाधे बैठो हो—जितने दिन बीतते हैं उतनी ही तुम्हारी देह गली जाती है। मधेरे चिडिया बोलती है,—तुम शिर उठाकर ऊपर नाकतो हो—चिडिया श्रायद तुम्हारे पतिका सन्देशा लाकर तुम्हें पुकार रही है। आकाशमें राकाशशि उदय होता है,—भावविडम्बा पागली यशोदा मोचती है,—मालूम होता है, हमारे स्वामी दुग्से भाक कर देख रहे हैं।

चिन्ता, अज्ञाचार तथा अनाहारसे यशोदाकी देह बिलज्वल सूख गई थी। आजका आघात और सद्दा गही गया,—इसासे यशोदाको छठातु मूर्च्छा आ गई।

उधर कात्यायनी जल लाने गई और इधर उमसा छोटा लडका रमाप्रसाद आ पहुँचा। उमके छाथमें मट्टीका एक छोटा बसन है। उसमें क्या है, भी गही मालूम।

रमाप्रसाद धीरेसे पुकार कर कह रहा है,—“मा।

मा ! क्या हुआ ? यह क्या हुआ ?—बहु इस तरह क्यों पड़ी है ?

कात्यायनी जल लेकर आई और बोली,—“बहुना मूर्च्छा आ गई है । छटातु गिरकर अचेत हो गई है ।”

रमाप्रसाद मातासे जल लेकर यशोदाके मुख और आखपर छिडकाने लगा, पर मूर्च्छा न टूटी ।

और कुछ देरतक मूर्च्छा बनी रही,—बभ्रूकी मूर्च्छित अवस्था ही अच्छी है । इस मूर्च्छा—इस सुखनिद्राको कोई तोड़ो मत ।

यशोदा—धीमा, दीना, मखिना, है—पाठकसे साहम करने नहीं कह सकते,—आज तीन दिनसे यशोदाने एक तरह झुन्न भी नहीं खाया है । चावल ज्यों ज्यों घटने लगा, चावल खरीदीका पैसा ज्यों ज्यों कम होने लगा, त्यो ही त्यो बभ्रू यशोदा अपना आहार घटाने लगी । “दो मट्टी चावल रहनेसे फल हमारी लड़की खायगी, सो हम दो मट्टी कम ही क्यों न खाय ?”—इसी तरह पहले द्वादश मट्टी, दूसरे दिन सोल मट्टी और तीसरे दिन चार मट्टी चावल यशोदा घटाने लगी,—क्याके जिये आधापेट खाकर यशोदा दिन काटने लगी,—उमकी देख दुःखी होने लगी ।

दुबली देखने आज भारी घोट पार्गी । यशोदाको मूर्च्छा आ गई । कमचोरीके कारण ही मूर्च्छा भङ्ग होनेमें इतनी देर लगी ।

कात्यायनीकी चेशमें यशोदाको धीरे धीरे जोश पर उमकी देख बहुत निर्मम और नाहो ध्यावन्त शोभीमें किना रुठ होता है । सुपसु

कात्यायनीने रमाप्रसादसे कहा,—“बेटा । क्या घोडामा भी दूध न मिलेगा ? इस समय यदि घोडा गर्मे दूध बहूको दिया जाय, तो देखमें कुछ ताकत आवे ।”—

रमाप्रसाद । मा । दूध कहासे आवे ? आज सुाह छम लक्ष्मीते दूधके लिये बाहर निकते । कारण, घोडी देर होने हीसे लक्ष्मी चुासे कातर हो उठेगी—और दूध दूध हजा मचावेगी । कई घर घूमनेके बाद अत्तमे एक ग्वालेके यहाँ इनना दूध मिला है । पावभरसे ज्यादा न होगा ।

रमाप्रसादने दूधका बत्तन माताको दे दिया । उन्होंने बडी सापधानीसे उस बत्तनकी पकडा,—क्योंकि उसका दाम इस समय लाख रुपया है ।

बधू यशोदाने धीरे धीरे कहा,—“सुभे दूध ७ पाछिये,— मैं अच्छे छ,—बल भी आया है,—याधि दूधसे अतिथि सेवा करी और आमा लक्ष्मीको दो,—”

कात्यायनी । बह । घोडामा दूध तुम भी पी लो,—बह । तुम बचोगी कैसे ? यदि देखमें बल ७ होगा तो बोल कैसे मझोगी ?—कैसे उठने बैठने पाओगी ?

कात्यायनीने पागणकी ओर देखनी हुई यशोदाते हाथ जोडकर कहा,—“मा । हमीको चपा दगा,—मेरी पागण्यारो लक्ष्मीके दूध पाने हीसे मेरे भगारके बल आवगा । मेरे मामन लक्ष्मीको दूध पिनाओ,—मैं नमी उठ बठता ह ।”

कात्यायनी । बह । तुम कमजोर पड गई हो ।

मा । बबू हुआ ? यह क्या हुआ ?—बहू इस तरह क्यों पड़ी है ?

कात्यायणी जल लेकर आई और बोली,— बहूको मूच्छा आ गई है । घटातु गिरकर अचेत हो गई है ।

रमाप्रसाद मातासे जल लेकर यशोदाने सुख और आखपर छिड़कने लगा, पर मूच्छा न टूटी ।

और कुछ देरतक मूच्छा बनी रहती,—बहूकी मूर्च्छित अवस्था ही अच्छी है । इस मूच्छा—इस सुसनिद्राको कोई तोड़ा मत ।

यशोदा—छीणा, दौना, मजिना, है—पाटकसे साहस करने नहीं कह सकते,—ग्राज तीन दिसे यशोदाने एक तरह कुछ भी नहीं खाया है । चावल ज्यों ज्यों घटने लगा, चावल खरीदनेका पैसा ज्यों ज्यों कम होने लगा, त्यों ही त्यों बहू यशोदा अपना आहार घटाने लगी । दो मूठी चावल रहनेसे कल हमारी लडकी खायगी, सो हम दो मूठी कम ही क्यों न खाय ?—इसी तरह पहले दिन दो मूठी, दूसरे दिन तीन मूठी और तीसरे दिन चार मूठो चावल यशोदा घटाने लगी,—कन्याके लिये आधापेट खाकर यशोदा दिन काटने लगी,—उसकी देह दुबली होने लगी ।

दुबली देहमें ग्राज भारी चोट लगी । यशोदाको मूच्छा आ गई । कमजोरीके कारण ही मूच्छा भङ्ग होनेमें इतनी देर हुई ।

कात्यायणीकी चेष्टासे यशोदाको धीरे धीरे होश होने लगा, पर उमरौ देह बहुत निर्बल और नाडी अत्यन्त क्षीण है,—दो जन्मे कितना कष्ट होता है । सुपथ्यकी आवश्यकता है ।

कात्यायनीने रमाप्रसादसे कहा,—“बेटा । क्या थोडासा भी दूध न मिलेगा ? इस समय यदि थोडा गर्म दूध बहूको दिया जाय, तो देहमे कुछ ताकत आवे । —

रमाप्रसाद । मा ! दूध कहांसे आवे ? आज सुनह इस लक्ष्मीके दूधके लिये बाहर निकले । कारण, थोडी टेर होने हीसे लक्ष्मी चुपसे कातर हो उठेगी—और दूध दूध हला मचावेगी । कइ घर घूमनेके बाद अन्तमें एक खालेके यहाँ इतना दूध मिला है । पावभरसे ज्यादा न होगा ।

रमाप्रसादने दृष्टक बचन माताको दे दिया । उन्होंने बडी सावधानीसे उस बच्चाको पकडा,—स्वीकृति उसका दाम इस समय लाख रुपया है ।

बंधू यशोदाने धीरे धीरे कहा,—“सभके दूध न चाहिये,— मैं अच्छे ह,—बल भी आया है,—आधे दूधसे अतिथि सेवा करो और आधा लक्ष्मीको दो,—”

कात्यायनी । बहू । थोडासा दूध तुम भी पी लो,—बहू । तुम नचोगी कैसे ? यदि देहमें बल न हीगा तो बोल कैसे मजोगी ?—कैसे उठने बैठने पाओगी ?

कात्यायनीके अग्र्यांको आंग देवनी हुई यशोदाने हाथ जोडकर कहा,—“मा ! दामीको चषा करना,—मेरी प्राणधारी लक्ष्मीके दूध पीन हीसे मेरे शरीरमें बल आयागा । मेरे सामने लक्ष्मीको दूध मिला रो—मैं अभी उठ बैठती ह ।”

कात्यायनी । बहू । तुम बहुत कामजोर पड गई हो । मुहसे बोली नहीं निकलनी ।

यशोदा । (आवाज भारी करके) देखो मा । मैं तो अच्छी

तरह बोल सकती हूँ,—यह देखो मा ! मैं अभी उठ बैठती हूँ ।

इतना कहकर व्योह्री यशोदा जल्दीसे उठने लगी, कि शिरमें चक्कर आ गया और धडामसे फिर गिर पड़ी और मूर्च्छित हो गई । फिर कुछ देरके लिये उसने सुख-शान्ति लाभ की ।

इसी समय अन्दरमहलके दरवाजेपर आकर अतिथियोंने जोरसे कहा,—“माई ! यदि भिक्षा देनेमें कुण्ठित होओ, तो हम लोग दूसरा द्वार देखें । बहुत देर हुई जाती है । यदि दूध न हो, तो एक मट्टी चावलसे भी देवसेवा हो सकती है, हम लोग अधिक मामग्री नहीं चाहते । थोड़ी ही वस्तुसे अतिथि सेवा करो । अतिथिको विमुख मत फेरो । माई ! अगर हम लोग लौट जायगे, तो तुम्हें पाप होगा । पीछे तुम्हें पाप होगा, इससे हम लौट भी नहीं जा सकते । माई ! यदि एक मट्टी चावल देनेमें कुण्ठित हो, तो आधी मट्टी ही दो—इतने हीसे परितुष्ट होकर हम लोग चले जायगे ।

कात्यायनीके कानमें यह आवाज पड़ी । उसने रमा प्रसादसे पूछा,—“घरमें चावल नहीं है क्या ?”

रमाप्रसाद । एक दाना देखनेकी भी नहीं है ।

कात्यायनी । क्या यह मन अथवा आत्मा दूध देनेसे न होगी ?

रमाप्रसाद । मेरी बुद्धि कुछ काम नहीं करती । तुम्हीं विचारकर बताओ, कि यह दूध किसे दिया जाय । यह देखो, मारे भूखके लाल्छो मरने चाहती है, उसका कबेजा धडक रुदा है । इधर कमजोरीसे वह मूर्च्छित हो गई है और

दूध लिये रमाप्रसाद किकर्तव्यविमूढ ही रक्षा था और कात्यायनी शूङ्गरीजीके ध्यानमें मग्न थी,—उसी समय वही प्रधान नायक ही दीर्घाकार पठान दरवाजोको लिये फिर व्यापहुँचे । उन्होंने चिल्लाकर कहा,—“ अब विलम्ब नहीं है । सात दिन रह गये हैं,—” सिर्फ सात दिन—आजसे सातवें दिन खूब तडके ही तुम लोगोंको उठ जाना होगा । छठे दिन रातमें मोटगी गठरी बाधकर तय्यार रहना । सातवें दिन चार दख समय बीतनेपर हमारे मालिकने पठा लोग व्याकर मजानको दखल कर लेंगे और अपना डेरा डाल देंगे । * सावधान । — सुन लिया तो ? सुनो चाहे नहीं,— सात दिनमें उठना ही पड़ेगा । धर्मगद्दाके लिये फिर पुकारकर कह देते हैं,—अब देर नहीं है,—“ देर नहीं है—”

प्रधान नायक इतना कहकर चले गये । दोनो पठान दरवाजोने बागके बेलटखकी तोड़ डाला, तुलसीको उगार डाला और तागवने धुक दिया । अन्तमें बाहरवाजे मजानने पास मानजा हाड फेककर चले गये ।

तीनो अतिथियोने सारी कार्रगाइ देखी,—पर कुछ कहा नहीं ।

प्रजा नायककी आवाज भीतर पहुँचते ही रमाप्रसादने भीत चकित होकर धीरे धीरे कहा,—“ मा ! यह फिर व्याया । हम लोगोंको अभी उठ जानिको कह रहा है ।”

कात्यायनीने कहा,—“ जेटा । चुप रहो—बोली मत,—”

“कहता हूँ ।”

“मैं चले जानेपर कात्यायनीन रमाप्रसाद”

तरह न जान पडा । अन्तमें उमी कधा,—ठीक ही हुआ है ।

जिन्होंने मकान नीलाम लिया है, वह शायद बड़े दयालु हैं । इसीसे उन्होंने अपनी प्रधा नायबदे जरिये कात्यायनीसे कहला भेजा है,—° आजसे तीग महीनेतक तुम लोगोको मकानमें रहने दूंगा । इन तीग महीनेके अन्तर तुम लोग अन्यत धनी जाओ—दृमग मकान किरायेपर ले लो । अगर तीन महीनेके बाद भी इसी मकानमें रहोगी, तो अदालतसे चप, रासी ला तथा वेदञ्चत करके जबरदस्ती इस मकानसे निकाल दूंगा । और एक बात है,— इन तीग महीनोंमें मकानका कोई अंश न तो नष्ट करने और न तोड़ फोड़ कर बेचने ही पाओगी । अगर ऐसा करोगी, तो उमी दिन निकाल दी जाओगी और घोरीके इलाजाममें फौजदारी सपुर्द कर दूंगा । और एक बात सुनो,— मकानको गन्दा न करने पाओगी । अगर मकान और बाग दोनो साफ सुधरा न रहें, तो समय कुसमय विचार न कर जिस दिा इच्छा होगी उमी दिा मकानसे बाहर कर दगा और हरजानेके तौरपर लोटा थाली सब रखवा लूंगा ।°

कात्यायनीने उत्तर दिया,—° मा भगवती जो करोगी वही होगा । वही हमारी सब कुछ है । चिन्ता करके क्या करना है ।°

तीन महीना बीतनेमें आज केवल सात दिन और बाकी है ।

जिस समय यशोदा अचेत पड़ी थी,— जल्दी भूखसे विकल थी, भूखे अतिधिगण द्वारपर खड़े थे, जिस समय पावभर

दृष्टं लिखे रमाप्रसाद किकपणविम्वृष्ट हो रहा था अर
 कात्यायनी झड़ुरीजीके ध्यामें मय थी,—उसी समय वही प्रधान
 नायव दो दीर्घाकार पठान दरवानोको लिखे फिर व्या पडुंसे ।
 उन्होने चिह्नाकर कहा,—“ अब विलम्ब नहीं है । सात दिन
 रह गये हैं,—” सिर्फ सात दिन—आजसे सातवें दिन खूब
 तडके ही तुम लोगोको उठ जाना होगा । छठे दिन गतनें
 मोटरी गठरी बाधकर तय्यार रहना । सातवें दिन चार दण्ड समय
 बीतनेपर हमारे मालिकके पठान लोग आकर मकानकी द
 खल कर लगे और अपना डेरा डाल देंगे । सावधान !— सुन
 लिया तो ? सुनो चाहे नहीं,— सात दिनमे उठना ही पडेगा ।
 धर्मरचाके लिये फिर पुकारकर कह देते हैं,—अब ढेर
 नहीं है,—“ ढेर नहीं है—”

प्रधान नायव इतना कहकर चले गये । दोनो पठान दरवा
 नोंने बागके बेलटखको तोड टाला, तुलसीको उखाड डाला
 और तालाबमे धूक दिया । अन्तमें बाहरवाले मकानके पास
 गात्रका छाड फेककर चले गये ।

तीनो अतिथियोने सारी कार्रवाई देखी,—पर कुछ कहा
 नहीं ।

प्रधान नायवकी आवाज भीतर पडुं चत ही रमाप्रसादने
 भीत चकित होकर धीरे धीरे कहा,—“ मा । यह फिर आया ।
 हम लोगोको अभी उठ जानेको कह रहा है ।”

कात्यायनीने कहा,—“ बेटा । चुप रहो— बोली मत,—
 सुनो बह यथा कहता है ।

प्रधान नायवके चले जानेपर कात्यायनीने रमाप्रसादने

तरह न जान पडा । अन्तमे उसने कहा,—टोक ही हुआ है ।

जिन्होंने मकान नीलाम लिया है, वह शायद उड़े दयालु है । इसीसे उन्होंने अपने प्रधान नायबके जरिये कात्यायनीसे कहला भेजा है,—“आजसे तीन महीनेतक तुम लोगोंको मकानमें रहने दूंगा । इन तीनों महीनोंके अन्दर तुम लोग अन्धत चली जाओ—दूसरा मकान किरायेपर ले लो । अगर तीन महीनेके बाद भी इसी मकानमें रहोगी, तो अदालतसे चप रानी ला तथा बेइच्छत करके जबरदस्ती इस मकानसे निकाल दूंगा । और एक बात है,—इन तीन महीनोंमें मकानका कोई अश्रु न तो नष्ट करने और न तोड़ फोड़ कर बेचने ही पाओगी । अगर ऐसा करोगी, तो उसी दिन निकाल ही जाओगी और घोरीके इलजाममें फौजदारी सपुर्द कर दूंगा । और एक बात सुनो,—मकानको गन्दा न करने पाओगी । अगर मकान और बाग दोनों साफ सुथरा न रहे, तो समय कुसमय विचार न कर जिस दिन इच्छा होगी उसी दिन मकानसे बाहर कर दगा और हरजानेके तौरपर लोटा थाली सब रखवा लूंगा ।”

कात्यायनीने उत्तर दिया,—“मा भगवती जो करेगी वही होगा । वही हमारी सब कुछ है । चिन्ता करके क्या करना है ।”

तीन महीना बीतनेमें आज केवल सात दिन और बाकी है ।

जिन समय यशोदा अचेत पड़ी थी,—लक्ष्मी भूखसे विकल थी, भूखे व्यतिथिगण द्वारपर खड़े थे, जिन समय पावभंग

काव्यायीने सक्षीपमे कदण खरसे सब बातें कह सुनाइ ।

अतिथि । माई । कुछ चिन्ता नहीं । एक काम करो । पघलीमे सेर भर गङ्गाजल ले आओ । उसमे इस पावभर दूधको डाल दो , फिर उसे मेरे नामने रस दो ।

आदेशानुमार सब काम हो गया । प्रधान अतिथिने और दोनो अतिथियोंको बुला लिया । वह लोग पाम आ पहुचे । प्रधान अतिथिने एक प्रकारका मूल निकाला । देखनेसे मालूम होता था, कि उसमे रस नहीं है , मानो भूँजनेके लिये किमीने उसे सुखा डाला है । गङ्गाजलमे उसे धोकर प्रधान अतिथि अगूठे और तर्जनीमे उसे दवाने लगे । अब उससे रसकी धारा बहने लगी । विराम नहीं,—पघलीमें, उस एक सेर जल मिश्रित पावभर दूधपर उस रसकी धारा गिरने लगी । गवार लोग शायद विश्वास न करें । उससे एक पावसे भी अधिक रस निकला । अन्तमें मन्दासी ज्ञान्त हो उठे,—सुखा मूल इता रस देनेपर भी क्याका त्या ही रहा । मानों अज्ञान रसका भरगा हो ।

मन्दासीने कहा,—“माई । और एक सेर गङ्गाजल ले आओ ।”

काव्यायीने । वावा ! पघलीतो और नहीं है । महीके बदनमें से क्याऊ ?

मन्दासी । अच्छा, ले आओ ।

जल आया । उमी दूध मिश्र जलमें मन्दासीने और एक सेर जल छोड़ दिया । अब उन्होंने धमका करण,—“माई । अब यह दूध नहीं , अगूठा हो गया है । कानिकागरा अगूठन

कहा,—“ चिन्ता क्या है, बेटा । अभी मात दिा समय है । कहीं हम लोग मकान छोड़ देनेका दिा भूल जाय इसी लिये बह पहरे छीसे बना देनेको आया है । अच्छा ही किया है । किसी बातको चिन्ता नहीं । घरमे मा चखी बिगन रही है,—डर किम बातका है ।”

रमाप्रमाद । मा । बह शाब्द बचेगी नहीं,—मुहने अन्दर बल नहीं जाता, बाहर ही गिर पडता है ।

कात्यायनी । विपदभङ्गनी दयामयी माका स्मरण करो—मा मा—रमाप्रमादसे और १ रहा गया । बह आँसुनाद कर उठा । लक्ष्मी भी रोने लगी ।

कात्यायनी कहने लगी,—“ है, जगज्जननि ! है मा भगवति । चम्यकी छायासे मनको श्रोतल करो ।”

तोनी अतिथियोमे जो प्रज्ञा एव वयोव्येष्ठ थे, बह गर्भीर मर्ममेदी खुलाइ सुनकर भीतर घुम गये । कात्यायनी उन्हें देखते ही सम्ममसे उठ खड़ी हुई और नधुर वाक्यमे कहा,—‘आओ जावा । मेरे ऊपर बडा भारी दु ख पडा है । वात्रा । सेवामें त्रुटि हुई है । क्षमा कीनियेगा । मेरे कुद भी नहीं है—यही इतना वृध है, यह आपही को प्राण है, आप ही इसे लें ।’

अतिथि । माई । मानरा क्या है ? बह मूर्च्छिता या मृत प्राय क्या है ? यह बालिका क्यों रो रही है ? और यह आदमी कौन है, जो अभी दरवाजेपर खडा होकर कह गया, कि मात दिामें तुम लोगोंको मकानसे उठ जाना होगा ? हमने कुछ समझा है, पर तुम स्वय बतायो, कि बात क्या है ?

कात्यायनीने सक्षैपमे करण स्वरसे भव वार्ते कह सुनाइ ।

व्यतिथि । माइ ! कुछ चिन्ता नही । एक काम करो । पथलीमें सेर भर गङ्गाजल ले आओ । उममें इस पावभर दूधको डाल दो , फिर उसे मेरे सामने रख दो ।

आदेशानुसार भव काम हो गया । प्रधा व्यतिथिने और दोनो व्यतिथियोंको बुला लिया । वह लोग पाम या पहुँचे । प्रधा व्यतिथिने एक प्रकारका मूल निकाला । देखनेसे मालूम होता था, कि उसमें रम नहीं है , मानो भूँजनेके लिये किसीने उसे सुखा डाला है । गङ्गाजलमें उसे धोकर प्रधान व्यतिथि अगूठे और तर्जनीसे उसे दवाने लगे । अब उससे रमकी धारा बहने लगी । विराम नही,—पथलीमें, उम एक सेर जल मिश्रित पावभर दूधपर उम रमकी धारा गिरने लगी । गवार लोग शायद विश्वास न करे । उमसे एक पावस भी अधिक रम निकला । अन्तमें सन्यासी क्लान्त हो उठे,—सुखा मूल इतना रम देनेपर भी व्योका त्या ही रहा । मानों अनन्त रमका भरा हो ।

सन्यासीने कहा,—“माइ ! और एक सेर गङ्गाजल ले आओ ।”

कात्यायनी । जाना । पथलीतो और नहीं है । मट्टीके बर्ताने ले आऊ ?

सन्यासी । अच्छा, ले आओ ।

जल आया । उमी दूध मिले जलमें नयार्माने और एक सेर जल छोड़ दिया । अब उन्होंने हसकर कहा,—“माइ ! अब यह दूध नहीं , अमृत हो गया है । बालिकालका अमृत

यही है। अब इस अम्बुकी अग्रिकाशिशो आप है। देव और अतिथिसेवाके लिये कुछ अम्बुत हमलोगोको दीजिये।

आदेशानुसार कात्यायनी संन्यासीके काष्ठपात्रमे अम्बुत डालने लगी। प्राय पावभर होते ही संन्यासीने कहा,—“ वम अब रहने दो, इतना ही हम लोगोके लिये बहुत है।

इसके बाद संन्यासी यशोदाको चिकित्साके लिये अग्रसर हुए। सुख देखा, नाडी देखी, फिर हम करके कहा,—‘भाई। डर किस बातका है?’ संन्यासीने एक चम्मच रस अपने हाथसे यशोदाको पिलाया। फिर एक चम्मच और दिया। यशोदाने आखे खोल दीं।

संन्यासीने कात्यायनीसे कहा,—“ भाई। अब तुम यशोदाको रस पिलाओ। चार चम्मच रस पीते ही वह उठ बैठेगी। छः चम्मच पीते ही उठ खड़ी होगी। सात चम्मचसे अधिक अम्बुत पीने मत देना।

इतना कहकर संन्यासी बालिका लक्ष्मीको अम्बुत पिलाने गये। वह धूलमे लोट रही थी। चुथासे आकुल पड़ी थी। ज्ञानग्रन्थ न थी, पर ठीक ज्ञान भी न था। ससार कैना भान भान् शब्द कर रहा है। लक्ष्मीके लिये ममार सादा नही है। स्वयंकी ज्योति भी सफेद नहीं है, नभी पीतवर्ण हो गया है।

संन्यासीने बालिकाको गोदमें उठा लिया। हाथसे गिरनी धूल झाड़ दी। आशीर्वाद दिया आर गड्ढु गड्ढु हसे। लक्ष्मीने सुखके ममीप अपा सुख ले गये, मागे लक्ष्मीका चन्द्रसुख चूमोके लिये वृद्ध संन्यासीको लालमा उत्पन्न हुई ही, किन्तु नहीं सुहतो चूमा नहीं। संन्यासीने एक चम्मच अम्बुत लेकर

वास्तिकाके मुखसे डाल दिया । एक चम्मच अमृत पान करते ही लक्ष्मीका परिम्बान, परिशुष्क मुखकमल मानो खिल उठा । हमरा चम्मच पीते ही लक्ष्मीके न्यग्रप्रान्तमें हसीकौसुदी दीख पड़ी । तीसरा चम्मच पीते ही लक्ष्मीने सन्यामीकी गोदसे उतरकर माने पास जाग वाहा , चौथा चम्मच पीते ही सन्यामीकी गोदसे उतर पड़ी और दौड़कर माने गलेमें जा लिपटी । उस समय माताका मुख अन्याके मुखसे मिल गया । दोनोंके नेत्र भी परस्पर मिले—और माताके नेत्रके जलने काथके मुखकमलको भिगा दिया ।

सन्यामीने रमाप्रसादसे कहा,— जो, अब तुम अमृत पान करोगे । भ्रूख प्यास दूर होगी, शरीरमें बल आवेगा, अब सन्नता जाती रहेगी और मन प्रसन्न होगा । धीरे धीरे थोडा थोडा करके प्राय छेठ छटाक अमृत पान करो ।”

रमाप्रसादने वैसा ही किया । पीनेपर कहा,—रेना सुमिष्ठ, सुस्वादु, सङ्ग समय शरवततो हमने तभी पिया ही नहीं । क्या यह स्वर्गीय मुद्रा है ?”

यह सुनकर सन्यामी उठाकर दम पडे , फिर काव्यायनीसे कहा,—माइ ! अब तुम्हारी पारी है । तुम भी अमृत पान करते लग्न होथो ।”

काव्यायनी । आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, किन्तु हमारी छत्रि यग इम जिदगीमें होगी ? विधाताकी विधिमें बाधा देना क्या उचित है ?

सन्यामीने हँसते हुए कहा,—माइ ! देखने हैं, स्वधर्म रक्षाने तुम्हारा आन्तरिक यत्न है , सुतरा देहकी रक्षा करना

सबसे पहले और सब तरह उचित है। अत्यन्त दग्ध देखें भी इस अमृत पान, इस महाप्रसाद सेवनसे अगत्कालने लिये शीतल हो जाती है।”

कात्यायनीने भी प्राय, डेढ़ छटाक अमृत पान किया।

सुधा पान करनेपर कुछ देरके लिये सभी मागे सुखमागरमें निमग्न हो गये। दुःखके अन्धकारमे सुखकी ज्योति मानो फिर हस उठी। प्रायाणमें मानो पद्मपुष्प खिल उठा।

श्रीवा परिच्छेद ।

धर्मोदा लक्ष्मीको गोदमें लेकर कोठरीमे चलो गई।

मन्यामीने कात्यायनीसे कहा,— इस पथलीमे जो अमृत बच रहा है, उसे अच्छी तरह यत्नसे रखना। एक वर्षमें भी व्ययिक द्वातक बह खराब होनेका नहीं। मेरी एक बात शुरुवातकी भाँति पालन करना। इस अमृतको जन तत्र मत खाता और जिमो जिमीको देना भी मत। नितान्त कुममय न आ पडनेपर कभी व्यवहार भी न करना। जब ऐसे सङ्कटमें पडो, कि प्राणरक्षाका और कोई उपाय न रहे तब इसे पानकर दम होना।”

कात्यायनीमे हाथ जोड़कर कहा,—“तथ स्तु। आदेश शिरोधार्य है।”

मन्यामी। अच्छा, तो हम लोग चले।

कात्यायनी । बाबा ! यह तो १ होगा । मैं दुखिनी हूँ । आप लोगोंकी कुछ सेवा न कर सकी । चाहे जिस तरह हो आज मैं अतिथिसेवा सम्पन्न करूँगी । अगर आप लोग बिना सेवा ही चले जायेंगे, तो यह दुःख जिन्दगी भर रहेगा । बाबा ! मैं तो अगन्त दुःखमें पड़ी हूँ, यदि आप बिना सेवा इसी तरह चले जायेंगे तो मेरा एक दुःख और बढ़ जायगा ।

मन्यामी । सेवा तो हो गई । आपका दिया हुआ अमृत देवताको भोग लगा दिया है ।

कात्यायनी । ठीक है, पर मेरा मन तो नहीं जाता । आप लोगोंको आटा, घी, दूध देकर परितुष्ट करूँगी, वही मालसा है ।

मन्यामी । माइ ! तुम्हारा मा अच्छा है । अतिथिको इतना निन्द करके रखना न चाहिये । हम लोग कामचर हैं,— हम लोगोंकी इच्छान्ती गति रोकना अच्छा नहीं ।

कात्यायनीने हाथ लीडकर डबडबाएँ हुई आंखोंसे कक्षा,—
“यदि आप लोग सेवा ग्रहण न करेंगे, तो मनमें बहुत चोट लगती ।”

मन्यामी । सेवा ग्रहण करेंगे, पर यक्षा और न टहरेंगे । इस पापस्थानमें सजीव वृक्ष जल जाता है, हम लोग किस तरह टहरेंगे ? विशेष आज दो सुमलमानोंन आकर तालाबमें थक दिया है,—तुलसी और बेणजे पेड़को उखाड़ और तोड़ डाला है । हम लोग सेवा ग्रहण करेंगे नहीं, पर गङ्गातट जाकर । आज संध्यापर्यन्त गङ्गागर्भमें तुम्हारी सेवानी अपेक्षा करते रहेंगे ।

सन्ध्यासीमण्ड विदा हुए । कात्यायनी और रमाप्रसादने प्रणाम किया । कोठरीके अन्दरसे यशोदाने स्वयं प्रणाम किया और लक्ष्मीको प्रणाम करनेके लिये कहा । रमाप्रसादने प्रणामका अनुकरण किया ।

दृशवा परिच्छेद ।

रमाप्रसाद । मा । तुमने क्या किया ? सर्वनाशका रङ्ग देस पडता है ।

कात्यायनी । क्यों बेटा । क्या हुआ ?

रमाप्रसाद । घरमे एक पैसा भी नहीं,—और न कहीं एक पैसा मिलनेकी आशा ही है, फिर व्याटा, घी और दूधसे अतिथिसेवा कैसे होगी ?

कात्यायनी । बेटा । कुछ डर नहीं । इतने दिनोंतक तुम लोगोंसे नहीं कहा था,—मेरे पास लक्ष्मीपूजाका एक मोहर है । बहुत छिपाकर रखा है । वह लक्ष्मीपूजाकी हांडीमें है । शकुं खांते समझा होगा, कि लक्ष्मीपूजाकी हांडीमे सामान्य धानके सिवा और क्या है । इसीमे बच मोहर बच गई है । बेटा । तुम्हें तो घाट है, जिस दिन डकैती हुई उम निनसे सीनेके लिये बिड़ोला भी नहीं रहा । पहानेके लिये एक कपडा भी नहीं गधा । जल लानेके लिये पीतलका एक घडा भी न था,—दपना पैसा तो दूरतो बात है ।

रमाप्रसाद । मा । जब मोहर है तब अतिथिसेवाके लिये चिन्ता क्या है ? इतने दिनोंतक मोहरकी बात क्यों न कही ? कात्यायनी । तन्त्रीपूजाकी मोहर क्या तोड़ाई जाती है ? किमी दिा तीसरे पहरतक चावल १ चुट सका,—तौभी मोहर रको तोड़ाया नहीं । आज एक महीनेसे बहूकी लज्जानिवारणके लिये बस्त्रका व्यभाव रहनेपर भी मोहरको नहीं तोड़ाया । गोआलिन आज सात दिनसे रोज कह जातो है, कि पिना रुपया पाये अन्न और दूध न दूंगा, तौभी मैंने मोहरको नहीं छुआ । किन्तु बेटा । आज अतिथि विसुख होते है, इसीसे मोहर तोड़ानेके लिये बाधा हुई है । समारमें अतिथिसेवा जेमा धर्म और नहीं है । इस अतिथिसेवाके अतिरिक्त और किमी तरह मोहर न तोडा मरती ।

रमाप्रसाद । मा । अच्छा हुआ । मोहर तोड़ानेसे कितने रुपये मिलगे, मा ?

कात्यायनी । बीस बाइस रुपये मिल सकने हैं ।

इसबाग रमाप्रसादके सुहर हमी देख पड़ी । रमाप्रसादने कहा,—“मा । बहुत अच्छा हुआ । तीन अतिथियोंकी सेवामें क्या तीरा रुपयेमें अग्रिक लगेगा ?”

कात्यायनी । इतना कैसे लगेगा ? साधु लोग अधिक मनेवाले नहीं हैं । थोड़े हीमें वे लोग परितुष्ट हो जायंगे । हमारी समझमें एक ही रुपयेमें ही जायगा ।

रमाप्रसाद । तब अतिथिसेवामें जो खर्च पडेगा, उसके बाद प्राय बीस रुपये बच जायंगे । अच्छा हुआ, मा । मैं कहता हूँ, बीस रुपयेका चावल खरीदकर रख दिया जाय ।

नहीं, नहीं,—बीस रुपयेका चावल खरीदनेका काम नहीं। सोलह रुपयेका चावल खरीद लिया जाय और चार रुपये लक्ष्मीके दूधने लिये रखा जाय,—मैं दो पैसे लेकर रोव जाऊंगा,—और जैसे बनेगा वैसे दो पैसेका संभर दूध लक्ष्मीके लिये ले आया करूंगा। मैं ब्राह्मण हूँ, इसलिए उम मरही-वाले गोआले सुभ्रपर बड़ी दया रखते हैं, मा! कोई कोई दान बिना पैसा ही दूध मिल जाया करेगा, मा। मोछर गोपने एक दिन सुभ्रे आसन देकर बैठाया और एक संभर गुड देना चाहा था। ऐसा दान लेना सुभ्रने मना कर दिया है, इसीसे मैंने लिया नहीं।

माता झुंझ न कहकर हमने लगी। रमाप्रसाद फिर कहने लगा,—“चार रुपयेके दूधसे लक्ष्मीके पांच महीने कट जायेंगे। और बाकी सोलह रुपयेका चावल खरीदकर रख दिया जाय। पौषमासमें अच्छा नया चावल हुआ है। कल मन्नेरे मैंने चावलका भाव पूछा था,—मोटा चावल सोलह रुपयेमें अठारह मन मिलेगा। तब एक बात है, बिना अरवा चावलने तो बनेगा नहीं,—इसलिये झुंझ कम ही मिलेगा। सोलह रुपयेमें अन्ततः सोलह मन अरवा चावल मिल सकता है। तरकारी या दाल न भी होगी, तो झुंझ परवाह नहीं। नया चावल,—तमकके साथ भाड भात बड़ा मोटा लगेगा। चाहे जहासे हो, नमक हम रोव ले आया करेंगे।”

न मालूम क्यों, जननी कात्यायनीके नेत्रसे एक बूद आंसू टपक पडा। रमाप्रसाद उसे नहीं देख सका। वह इस समय सोलह रुपयेका सोलह मन चावल खरीदने और नमक डाल

फेर माड भात खानेके आनन्दमें है । माताके एक बूट व्याखकी कैसे देख सकता है ?

साथ ही साथ कात्यायनीने मनको दृष्ट किया । उमने सुखपर मधुर हसी दिखाकर रमाप्रसादसे कहा,— पागत कहींका । तेरे घर कहा है ? पाच महीनेके लिये चावल खरीद कर रखेगा कहा ? सात दिनके भीतर ही इस घरको छोड कर अन्यत्र जाना पड़ेगा, क्या तुमने सुना नहीं है ?— शायद मोहरके आनन्दमें तुम अपनी अवस्था भूल गये हो ।”

रमाप्रसादका मुह खल गया । वह मागो चौक पडा । कहा,—“ओह ! तव हम लोग कहा जायगे, मा ?”

कात्यायनी । डर क्या है बेटा । मा भगवत(जहाँ ले जायगी वहीं जाा होगा ।

रमाप्रसाद । मा । दो सुनलमान आकर जलमें थुक धर्यो गये ? तुम्हारे खेलके पेडको क्यों तोड डाला ? तुलसीको क्यों उखाड दिया ?—

कात्यायनी । मेरे लाल । क्या तुम समझते नहीं,—वे लोग यह जना गये,—“यदि मात दिनके अन्दर तुम मकान खाली न कर दोगे, तो तुम लोगोपर घोर अत्याचार होगा । आज मामान्य अत्याचार करके हम लोग चले जाते हैं । मात दिाक वाद आकर यदि तुम्हें इसी मकानमें पायगे तो तुम्हारी दबोको मूर्खिको उठाकर जलमें फेंक दे गे,—मव बुद्ध तोट फोड डालेग,—अधिक क्या यदि तुम लोगोपर कायिक अपमाा कगा पड़ेगा, तो वह भी करेगे ।”—

रमाप्रसाद । यह क्या कहती हो, मा । क्या मात दिनके

बाद व्याकर ये लोग हम लोगोंको मारेंगे ? मा शङ्करीकी मूर्तिको तोउ डालेंगे ?

बालक रमाप्रसाद रोने लगा । कात्यायनीने उसे छाटम देकर कहा,—“डर किम बातका है, बेटा ? मा भगवती हम लोगोंकी रक्षा करे गा ।”

ग्यारहवा परिच्छेद ।

धीरा, स्थिरा, निश्चलनया कात्यायनी कुछ देरतक चुपचाप रहीं । फिर लडकेके सुहृकी ओर देखा । देखकर कुछ सुमकराते हुए कहा,—“बेटा रामा ! डर क्या है ? मेरे रहते तुम्हें किम बातका डर है ?”

इसके बाद कात्यायनीने बधू यशोदाको बुलाया,—“बहू ! इधर आओ ।” यशोदा लक्ष्मीको गोद लिये हुए समीप आइ । लक्ष्मी माकी गोदसे उतरकर दादीकी गोदमे जा बैठी ।

कात्यायनीने कहा,—“विपदमे बबरागा अच्छा नहीं । मा भगवतीका नाम । स्मरण कर धैर्य धरो । रोओ मत । रोती क्या हैं ही ? हम लोगोंकी कौन गिनती है ?—राना युधिष्ठिर बन गये थे,—राना नल भी बन बन घूमे थे । अधिक क्या, वैकुण्ठ पति श्रीरामचन्द्रजीने भी बनवास किया था । सात दिाके अन्दर इस घरको खाली कर देनेकी बात है, लेकिन मेरी इच्छा कल सवेरे ही इस घरको छोड़कर चली जानेकी है ।”

रमाप्रसाद । कहा जाना होगा, मा ?

कात्यायनी । विधाताके इस उद्दत्त राज्यमें क्या छन लोगोंको जगह न मिलेगी ? अवश्य ही छम लोगोंके लिये कोई स्थान निर्दिष्ट है । मा भगवती जहा ले जायगी वही जाऊंगी ।

रमाप्रसाद । मा । मामाके यहा ही क्यों न चले ?

कात्यायनी । (दोर्घस्वाम लेकर) नहीं बेटा । उस राहमें कष्टक है । लेकिन मा भगवतीने मेरे कपालमे वही जाना लिख दिया है, तो वही जाऊगा । अच्छा, रघुदयाल अन्तक आया क्यों नहीं ? एक पहर समय बीत गया, तीभी अबतक वहा नहीं आया ? किसी विपदमें तो नहीं पस गया ? इस समय पग पगपर मेरे ऊपर विपद है ।

रमाप्रसाद । सरदार दादाको खोज लाऊं, मा ! इनमें तो मालूम होता है, कि कहीं काम पा गये हैं, वही कर रहे हैं । और कुछ देरमें आवेंगे ही ।

कात्यायनी । मोहर भुगनेकी इस वक्त जरूरत है । अतिथिसेवामें देर हो रही है,— कौन मोहर तोड़ा लावेगा ? इसीलिये रघुदयालकी राह तार रही है ।

रमाप्रसाद । मा ! तुम मुझे मोहर दो न । — मैं भुना लाऊ ।

कात्यायनी । मोदीकी दूकानमें तो मोहर भुनेगी नहीं,— हो तो किनी रईमने यहा अचवा किनी बनिया महाजनकी दूकानमें मोहर भुनेगी । तुम लड़ने हो, कहीं कोई तुम्हें ठग न ले, इसीलिये रघुदयालकी माय कर देना चाहती है ।

रमाप्रसाद । मा ! मैं भुनें मोहर तोड़ा लाऊगा,— तुम्हें बहुत आदमी जाते हैं,—

कात्यायनी । अच्छा, थोड़ा और ठहरो । जब रघुदयाल-
न आवेगा तब अकेले ही जाकर मोहर तोड़ा खाना । देख
रामा । इस मोहरके अठारह रुपये तो जरूर ही मिलेंगे ।
२०।२१ रुपये मिल जाय, तो और भी अच्छा है । अगर
अठारह रुपयेसे कोई कम दे, तो मोहर मत भुगाना ।
दूसरी जगह कोशिश करना । मान लो, कि मोहर तोड़ने
पर १५ रुपये मिले । इन अठारह रूपयोंमेंसे पहले
अतिथिसेवाके लिये डेढ़ सेर आटा, डेढ़ पाव घी, डेढ़ सेर दूध
और आध पाव नमक खरीद लेना । इसमें अन्दाज एक
रुपया खर्च पड़ेगा । बाकी सत्तरह रूपयोंके कहीं चावल
न खरीद लेना ।

रमाप्रमाद । नहीं मा नहीं,—ऐसा क्यों करूंगा ? तुम
जो कहोगी, वही करूंगा ।

कात्यायनी । बाकी सत्तरह रूपयोंमें ॥५॥ गोव्यालिनको
देना होगा । १॥५॥ मोदीका बाकी है । यद्यपि वह तकादा
नहीं करता, पर उसका रुपया देकर जाना होगा । नाइन तीन
महीनेसे कमाने नहीं आई । उसे १५ आना महीनेके हिमा-
वसे छ' महीनेके ॥६॥ देना होगा । मक्लीवालीको सात
पैसे देना है । घोबिनने छ' महीनेसे कपडा धोना छोड़
दिया है । १५ उसे भी देना होगा । चमारिनके छ' पैसे
बाकी है । पतिहारिनको मरे आन चार महीना हो गये ।
वह रोज दो घड़ा गङ्गाजल हमे ला देती थी । ॥७॥ महीना
करार था । उसे तीन महीनेकी तलब नहीं मिली । उसके
एक भतीजा है । उसे १॥ देना होगा ।

रमाप्रसाद । तब तो देखता हूँ, कि कर्ज चुकाने हीमें सब रुपये खर्च हो जायगे ।

कात्यायनी । तो इनके लिये मैं क्या करूँ । हिमाव घोड़कर देखो तो, सब कितना हुआ ?

कात्यायनी फिर बोलने लगी,—पुत्र रमाप्रसाद हिमाव घोड़ने लगा । अन्तमें कहा,—“मा । ४॥१॥ हुआ । अभी कइ रुपये बचते हैं । मैंने समझ लिया था, कि कर्ज चुकाने हीमें सब रुपये चुक जायगे ।”

कात्यायनी । बेटा । रुपया तो बहुत ज्यादा नहीं है । अब भी खर्च कराना बाकी है । सुनो,—रसिकदास बैरागी नित्य सबेरे नामकीर्तन करता है । यद्यपि उसने मेरे दरवाजे नाम गाना छोड़ दिया है, किन्तु श्रेय रात्रिमें जब मैं छतपर जाती हूँ, तब मैं उनके मुखसे हरिनामध्वनि सुनती हूँ । सो रसिकदास रोज मुझे हरिनाम सुना जाता है । उसे ब्याठ ब्याठ देना होगा ।

रमाप्रसाद । मा । इस तरह दान करनेसे तो एक पैसा भी न बचेगा ।

कात्यायनी । (हसकर) बेटा । नाराज होते हो,—बच्छा, अब खर्चको बात न कहूँगी । एक बात कहे देती हूँ,—मोहर मुनाकर सब रुपये ही या दश दश रुपयेके नोट मत लेना । कुछ अठनी, चउनी, दुअनी और पैसा लेते आना । और घर आनेके समय अपने खास खर्चके लिये एक रुपयेका अरवा चावल और सेर भर दूध खरीद लेना । अगर कोई सस्ती तर-

फारी मिले, तो खे लेगा। एक सेग, मेधा निमक और पाव भर तेल भी खेत आता।

रमाप्रसाद। मा। दाल ७ लाखंगा। उरदकी दाल लक्ष्मी नहीं खाती। मूगकी दाल खे खांछंगा ?

कात्यायनी। पाव भर खे रीना। उसको पोटलीमें बांधकर भातमें छोड दूगी। पकजानेपर जलमें डाल गर्म करने लक्ष्मी को दूगी। षष्ठ आनन्दसे खायगी। इस तरह पाव भर दालमें आठ दिन कष्ट जायगे।

लक्ष्मी। (दादीकी चिउंठी काट कर) न मा। वैसा दाल में न खांछंगी। जिस तरह बहू दाल पकाती है, उमर तरह पकाना पडेंगी।

कात्यायनी। अच्छा, वैसा ही पका दी जायगी। टिप रामा। एक चीज कहनेको भूल ही गई थी। लक्ष्मीके लिये आध सेर गुड खरीद लेना।

लक्ष्मी। मा। नू बड़ी खरान हो गई है। छि। गुड धवा खाया जाता है। उस दिन हमे गुड खाते देखकर लोगोंने कितनी निन्दा की थी। नीच जाति कहकर गाली दी थी। मा। तेरे पाव पडती हू,—भैरव हलवाईकी दूकानसे हमारे लिये जलेबी मगा दे। मा। कल कहा जानेको कहती है ! हमे साथ खे जाना छोगा। हमारे लिये अच्छा अच्छा कपडा लानेको कह दे न मा। फटा कपडा पहनाकर कहीं जाने लायक भी नहीं है। मा। तनिक देख तो, कितना फटा है। मा ? बाबा कर आयेगे ?—बाबाके आने हीसे अच्छा कपडा मिलेगा। क्यों मा ?

यशोदा अबतक शिर भुकाये सब बाते सुन रही थी । अब उससे १ रक्षा गया । वह रो उठी । धीरे नहीं,—बहुत जोरसे रोने लगी । कण्ठका द्वार खुल गया है,—खिहमय हिमगिरिकी भेटकर शोकगङ्गा अश्रुरूपमें भीमवेगसे बह चली है,—और क्या उपाय है ? इस भयङ्कर गतिकी रोकनेकी शक्ति किसे है ?

काव्यायनीने कहा,—“बहू ! यह क्या करती हो ? लडकी मामने है, तुम क्या कर रही हो ? लक्ष्मी रोते रोते ब्याकुल हो जायगी । बहू ! चुप हो जाओ ।”

अब चुप हो जाओ ! चुप होनेकी शक्ति यशोदामें और नहीं है । वह बाताहत कदलीकी नाई गिर पड़ी और लोट गई ।

काव्यायनी । छिडो मत, बहूको कुछ देरतक रोने दो । जमीनमें लोटकर कुछ देरतक रो लेने दो ? न रो लेनेसे उसका कपेना फट जायगा ।

रोओ, यशोदा ! रोओ ! मासकी आजासे क्या तुम रोने न पाओगी ? रोओ यशोदा ! निटर छोकर रोओ । रोओ यशोदा ! रोओ । जबतक दृष्टि न हो तबतक रोओ ।

दारहवां परिच्छेद ।



दयावती कात्यायनीने यशोदाको रोने दिया । लक्ष्मी दादीकी गोदसे माताकी गोदमें जानेके लिये ब्यस्त हुई । यह देख दादीने कहा,—“बच्चा मत जाना । तेरी माको विच्छेने काट खाया है । इसीसे बच्चा रो रही है । तू जायगी, तो तुम्हें भी काट खाधगा ।” दादीने इस तरह डराकर लक्ष्मीको रोक रखा । लक्ष्मीका सुंह सुख गया । धीरे धीरे रोनी सूरत हुई । अन्तमें लक्ष्मी भी रोने लगी ।

पांच मिनट बीत गये । लक्ष्मीका रोना नितान्त तेज पडने लगा यशोदाका उतना ही व्याप ही व्याप थमने लगा । बधूका रोना कम पडते देग्वकर कात्यायनीने कहा,—“बहू ! लक्ष्मीको गोद ले लो । बेफायदा क्यों रो रही हो ?”

यशोदा अब उठ खडी हुई । आख पोछर लक्ष्मीको गोद लिया । कन्याके सु हने पाम अपना सु ह ले जाकर यशोदाने कहा,—“बेटी ! रोती क्यों हो ? चुप होवो ।”

गेती ही रोती कन्याने जवाब दिया,—“तू क्यों रोती थी ? बहू ! जिगा हमसे कहे तू क्यों रो रही थी ?

यशोदा । बेटी । तुम्हें भूख लगी है क्या ? दूध पियेगी ?

कन्या । नहीं, दूध नहीं पिऊंगी, भात खानेका समय हुआ,—भात कहा है ? आज अबतक रमोइ क्यों नहीं बनी ?

कात्यायनीने यशोदाको इशारेसे कहा,—“इस समय लक्ष्मीको चेकर अन्धन चली, जावो । इशारा समझकर यशोदा लक्ष्मीको

भुलानेके लिये छतपर ले गई और वहाँ दोनो मिलकर खेलने लगी। यशोदा कभी घोड़ा बनती, लक्ष्मी घोड़ेपर चढ़कर हट हट, टिक टिक करके उसे चलाती। यशोदा कभी शिव बनती,—लक्ष्मी शिवपर चढ़कर जीभ निकालती और काली होकर खड़ी होती। यशोदा कभी असुर होती,—लक्ष्मी सिद्ध बाकर माताके बाहुमूलमें काट खाती।

बहुत छोटी उमरमें लक्ष्मीके गलेमें एक पार फोड़ा निकला था। डाक्टरने उसमें नशुतर दिया था। लक्ष्मीको वह आज भी याद है। माने कहा,—“लक्ष्मी! मेरी गर्दनमें फोड़ा हुआ है।” यह सुनते ही लक्ष्मी डाक्टर बनी, एक लकड़ी उठा लाई और बोली—“आस मूद लो,—कोई डर नहीं है,—बोलो मत,—आज नशुतर नहीं दिया जायगा,—किमी बातका डर नहीं है,—देखें, देखेंतो कैसा जखम है! अच्छा जखम है।—यह यह खचाक—”

लक्ष्मीने इस तरह नशुतर दिया। किन्तु यशोदा रोना भूल गई थी। यह देख लक्ष्मीने कहा,—“धरौ बहू!—नशुतर दिया गया, पर न तो तू रोई और न छटपटानी ही।” माता अब जखम चीरे जानेकी पीडासे जिस तरह लक्ष्मी रोई थी उसी तरह रोने और छटपटाने लगी। यशोदाके चुप होनेपर लक्ष्मीने कहा,—“अभी नहीं हुआ, अभी और घोड़ा रोना पड़ेगा। यह सुनकर मा भी हसने लगी और लक्ष्मी भी हसने लगी। मारे हसीके वह स्यान भर गया। अन्तमें हान्यमयी माताने हास्यमयी कन्याकी गोदमें लेकर अपने हसते हुए मुँहको कन्याके हँसते हुए मुखपर स्थापन कर रखा।

तेरहवा परिच्छेद ।



विपद् आनेपर जली मछली भी पागौमें भाग जाती है, वयों ।
उधर यशोदा लक्ष्मीके साथ खिलमें लगी थी, इधर कात्यायनी मट्टीकी छाडीसे मोहर निकालनेके लिये उठी । वह धीरे धीरे दो एक पग आगे बढ़ती—फिर लौटकर पीछे देखती,—
और थोडा थोडा हसती । यह देख रमाप्रसादने पूछा,—“मा !
हसती क्यों हो ?”

कात्यायनी । बेटा । हंसी आप ही आप आती है ।
इतनी आशा करने,—इतनी व्यवस्था, इतना बन्दोबस्त करके
मोहर लाने जाती हूँ, पर यदि छाडीके भीतर घामें मोहर
न मिले,—तो क्या होगा ? जिस दिन घरमें डाका पडा था,
उसके दूसरे दिन मोहरको खोजकर देखा था, उसके बाद फिर
नहीं देखा,—यदि चूहे उसे अपने बिलमें उठा ले गये हों या
और किसी तरह वह खो गई हो, तो क्या होगा ?—इतने
डुःख, इतनी आशाकी मोहर यदि न मिले,—इसीसे हसी
आती है ।

रमाप्रसाद । यह क्या कहती हो, मा ।—मोहर क्या
छाडीमें नहीं है ? तुम्हारी बात सुनकर मेरा तो कठेका घड़कने
लगा । तुम्हें हसी क्यों आती है ?

कात्यायनी । बेटा । हसी क्यों आती है, मो नहीं जानती,
पर हनी आती है सही । शायद डुःखनी श्रेय सीमाके बाद
हसीका राज्य उपस्थित होता है ।

रमाप्रसाद । मा ! क्या मोहर लाने में भी तुम्हारे साथ लक्ष्मीपूजाकी कोठरीमें चलूं ?

कात्यायनी । नहीं, तुम यही रहो । मैं अभी मोहर खिचे आती हूँ । चिन्ता किम बातकी ? देवीका नाम स्मरण करो । सर्वमङ्गला हम लोगोंका मङ्गल करेंगी ।

पुत्रकी ओर और न देखकर कात्यायनी झपट कर चली । देवीस्थानमें पहुँचकर शङ्करीके चरणोंमें साष्टाङ्ग दण्डवत किया । यह देवी लक्ष्मीको बारबार प्रणाम करके कहे,—"मा ! आज तुम्हारी मोहर लूंगी । दासीका अपराध क्षमा करना, मा !—बड़ी विपदमें पड़ी हूँ, अब चलता नहीं,—दिा और नहीं कटते, मा ।"

कात्यायनी हाडीसे धान निकालने लगी । प्रायः सात आठ सेर धान था । धान जितना निकालती उतना ही कांपती थी । हांडीका धान ज्यों ज्यों कम होता जाता था त्यों हीं त्यों उसका मुँह सूखता जाता था । अब हाडीमें प्रायः आध सेर धान रह गया है, तौभी मोहर हाथ न आइ । इतनेमें धबराकर कात्यायनी हांडीको हिलाने लगी, पर मोहरकी आवाज कुछ भी न मालूम हुई । अब कात्यायनीने हीश टिकाने लगे,—मानो अब बह नहीं है । किन्तु बह सभली । मोचा, हमने मूठी मूठी धान हांडीसे निकाला है,—यदि मूठीमें मोहर चली गई हो,—तो मोहर हाडीमें तो हीगी नहीं,—नीचे धानने माघ व्यवश्य हीं हीगी । यह विचारकर कात्यायनीने हांडीका सब धान नमी । पर उभल दिया और प्रसारकर देखने लगी । मन ही मन यो कहती जाती थी,—"हे मोहर ! और हमे मत ठगो । ब्राह्म-

यकी कन्या बड़ी विपदमें है,—दया करो,—देख पडो । और सहा नहीं जाता । देह कैसी तो हुई जाती है ।”

भगवती शङ्करोकी दयासे मोहर इसबार देख पडा । कात्यायनीने उसे उठाकर शिरपर चढाया और कहा,—“मा लक्ष्मी । तुम बहुत दिनतक हमारे यहाँ रही । आज दूसरेके घर चली । हम दीगा,—निरुद्धा,—वस्त्रछौना है,—मा । तुम हमारे यहाँ क्यों रहोगी ?”

कात्यायनी मोहर लेकर पुत्रके समीप आई और बोली,—“बेटा । यह मोहर लो । पर देखना सिवाय हिन्दूके और किसी जातिके हाथ इसे मत बेचा ।”

रमाप्रसादने दाहिना हाथ बढाकर खुशीसे मोहरको लिया । इधर माताकी आँखोंसे भरभर आसू टपकते देखकर रमाप्रसादने पूछा,—“मा । रोती क्यों हो ? जब मोहर मिल गइ तब फिर क्यों रोती हो ? आज तो आनन्दका दिन है ।”

कात्यायनीने आसू पोंछकर कहा,—“बेटा । मा लक्ष्मीको क्या जन्मभरके लिये बिदा कर दिया ?”

रमाप्रसाद । मोहर न पानेकी बात सोचकर तो तुम हनती रहो,—अब मोहर पाकर खूब रो लिया । मा । तुम्हारी यह कैसी बात है ।

माताने इसबार हस दिया ।

चौदहवा परिच्छेद



। मोहर छाथमें आनेसे कितनीका मन गर्म हो जाता है । शायद रमाप्रसादका मा भी कुछ गर्म हुआ । मो उसे अच्छे कपड़े लत्तेका शौक पैदा हुआ । वह मोहर तोडाने चायगा, इमलिये जरा ठाट्ठाटसे नाता या उचित नहीं है ?

रमाप्रसाद मनघन करने लगा । किन्तु पहले ही एक अडचल आ पडी,—जूता तो है ही नहीं । इधर उधर खोज छूटकर उसने एक जोडा चपौगा जूता निकाला, पर वह टूटा फटा बेकाम देख पडा । पहनकर देखा, तो पाचों अंगुलियां बाहर निकल पडीं । रिग्राह होकर उसने उसे छोड़ दिया और दूसरा जूता खोजने लगा ।

भवानीप्रसाद उसने बडे भाइ थे,—आनन्दल उनका पता नहीं है,—वह बडे मशहूर शिकारी थे । पिताके सामने छाथी या घोडेपर सवार हो आनेका सङ्घर तथा विविध अस्त्र शस्त्र लेकर साहसी और बलिष्ठ भवानीप्रसाद शिकार खेलने निकलते थे । भवानीप्रसादका एक जूता विलायती हथिङ्ग बूट था । वह चुटनेतक आता था । रामप्रसादने उसे झाड मोह कर बडी खुशीसे पहना । वह महामहिमान्वित मञ्जु जूता रमाप्रसादकी छाधतक जा पहुँचा । अलङ्कारके भारसे झुक जानेपर भी सुन्दरी प्रसन्न रहती है । जूतेसे प्रपीडित होनेपर भी रम प्रसाद आज परम पुलकित है ।

कपडा एक ही था। रमाप्रसाद यह अच्छी तरह जानता था, सो उसे भाडकर उसने पहना। काष्ठाको लांग बनाया और लांगको काष्ठा। इतना करनेपर भी फटे हुए भागको रमाप्रसाद अच्छी तरह छिपा न सका। वह एकबार जूतेकी ओर देखता था और फिर फटे कपडेकी ओर नजर फेरता था। फटे कपडेको जिता देखता था उतना ही उगका मन विडल होता था। लाचार धोतीको खोलकर फिरसे पहनने लगा, किन्तु वह फटा हुआ हिस्सा किसी तरह भांगता न था,—सो वह सजीव होकर रमाप्रसादका उपहास करने लगा,—रमा प्रसादकी आंखोंके सामने नाचने लगा। रमाप्रसादको सन्देह हुआ, कि फटा हुआ अश्रु बरसता जाता है। धीरे धीरे उस फटे हुए अश्रुने रमाप्रसादकी आंखोंके सामने विशाट व्याकार धारण किया। अब रमाप्रसाद जिधर देखता है उधर ही उसे फटा कपडा देख पडता है। पृथ्वी, व्याकाश, घर सब जगह रमाप्रसादको फटा कपडा ही देखने लगा।

रमाप्रसाद कांपने लगा—उमका शिर घूम उठा। लाचार बैठ गया। करकमलमें मोहर रहनेपर भी बालक रमाप्रसाद बडे, सुशुक्लमें पडा। जिसे दूमरा कपडातक नहीं है, वह चिन्ता करके ही क्या करेगा ?

काल पाकर पुत्रशोक भी दूर हो जाता है,—गभीर मसुद्र भी टापू बन जाता है,—कुछ देरके बाद रमाप्रसादका हृदय भी स्थिर हुआ। रमाप्रसादने एक युक्ति निकाली,—पिताके समयकी बिछानेकी बडी चादर है। इसीको इन छद्मसे ओढकर चले गे, कि फटा हुआ अश्रु किसी तरह देख न पडेगा। मैली

चादरको उमलकर वह जोड़ने लगा। धोती तो एक जगह फटी थी, चादर तीन जगह फटी थी। लक्ष्मीने खेलने मिस उगली डालकर छेदोंको और बजा दिया था। दुर्भाग्यवश वही तीनों छेद रमाप्रसादकी पीठपर जा पड़े। चादरने धोतीके फटे हुए अंशको तो छिपा दिया, पर पीठपर तीन नये छेद निकल पड़े। रमाप्रसादकी गोरी पीठ मागे छेदोंसे झाकने लगी। रमाप्रसादने दाहिने हाथसे टटोल टटोलकर तीनों छेदोंको देखा, फिर मन ही मा कहा,—“अरे! यह क्या? एक टाक नेमे तीन निकल आये। कुरता नहीं है क्या? शायद न होगा। उस दिन मागे हमारे लिये बहुत खोजा छूँछा था, पर मिला एक भी न था। गच्छा, हम एकबार क्यों न खोज देखे?”

रमाप्रसादने साग घर रत्ती रत्ती खोज डाला, पर कहीं भी अङ्गरमा, कुरता या कोट न पाया। रज कौनेमें एक रुमाल पडा मिला। अब रमाप्रसाद यह सोचने लगा, कि जहा चादर फटी है वहा पीठपर हम रुमालको क्यों न धर ले? रुमान पीठपर रखकर ऊपरसे चादर जोड़ लेगे फिर पीठ कीइ न देख सकेगा। लेकिन रुमालको रखेगे कैसे? यह तो खनकर गिर पड़ेगा। अच्छा, लेइ लगाकर इसे पीठमें साट क्यों न ले?

रमाप्रसाद। इसबार तुमने दुनियाकी हसा दिया। लडका मनकी बुद्धि अनुसार तुम मा ही मा जो कल्पना कर रहे हो, उगे अगर तुम प्रजास्यरूपसे उचारण करते, तो लोग तुम्हें पागल कहते। अतएव अब चुप रहो, और मत बोलो। मनही मन जो कुछ कहा, वही यथेष्ट हुवा है। अब आत्म

धमन करो । स्थिर होओ । लज्जा किम बातकी ? नव बैसेी
व्यवस्था होनी है, तत्र तैमा ही चलना पडता है । यदि सचमुच
ही रूमालमें फटा हुआ अंश सहन ही क्षिप भी जाता, तौभी
तुम्हारा अधिक आदर न होता । उधर देखो, तुम्हारी माता
पली आती है, जल्दी चादरको ओढ़ लो, फटे हुए अंशकी
बात और मत सोचो ।

जननी कात्यायनीने समीप आकर पुत्रसे कहा,—“धैटा । तुम
व्यवतक मोहर सुनाने नहीं गये ? नहीं गये, सो अच्छा ही
किया । मोहरमें मिन्दूर लगा है । घरमें इमली नहीं है ।
तालावने किनारे तिपतिया शाक है । चाओ, थोडीसी पत्ती
ले तो आओ ।”

पुत्र पत्ती ले आया । माता उसके रसमें मोहरको घसने
लगी । अमली सोनेकी असली मोहर, उसका असली रङ्ग
निकल आया । धूपमें मोहर चमकने लगी । माताने धोतीने
कोनेमें मोहरको पाध दिया । कोनेकी रमाप्रसादने आगे
धोतीमें खोम लिगा । ऊपरसे कसकर कमर बाण ली ।

रमाप्रसादा छटिङ्ग बूट और मैली धोती पहनकर ऊपरसे
बिछौनेकी मैली चादर ओढ़ ली । इस तरह चार छिन्न
अंशसे सज्जित होकर रमाप्रसाद मोहर सुनाने निकला ।

पन्द्रहवा परिच्छेद ।



बालक अचक मीहर तोडानेके आनन्दमें था। कहीं, किमके यहा और क्या कहकर मोहरको सुनाऊ,—व्यव उसे यह चिन्ता हुई। विशेष, उसका जश और जांघतक छिछिड़ नूट देखकर लोग उसे टकटकी बांधकर निहारने लगे। किसीने कहा,—“यह तो नूता नहीं नूतेका दादा है। कोई बोल उठा,—हरिदने पैरमें इतना बेशकीमती नूता क्यों ? इस नूतेके रामसे पहचानेके लिये एक कपडा खरीद लेता, तो अच्छा होता। धोती घटने ही तक है,—देहमें कपड़ा नहीं,—व्यथा। नूतेकी बहारभी देखिये। लक्ष्मीके विसुख होनेपर शायद ऐसा ही होता है ? अभी नूता बेच डाले।—बेचकर एक कपडा खरीदे।”

रमाप्रसाद राह राह चला जाता है और लोगोंकी ऐसी मंथुर बोली सुन रहा है। वह कभी कभी पीछे लौटकर देखता है, कि लोग मेरे पीछे पीछे तो नहीं आते। जिन दूकानमें वह बैठने जाता है, उस दूकानको लोग घेरकर खड़े हो जाते हैं। यह देखकर रमाप्रसाद वहां नहीं बैठता,—तुरत ही उठकर दूसरी जगह चला जाता है।

गाँवके एक किनारे किसी मोटीकी बड़ी भारी दूकान थी। लोग पीछा करना छोड़ दे, इस खालसे वह दूकानकी घोर दौड़ चला। छिछिड़ नूतेकी बेचव आवाज होने लगी। कुछ

इमा करो । स्थिर होओ । लज्जा किम यातकी ? जब ऐसी अवस्था होती है, तब तैमा ही चलना पड़ता है । यदि मचसुप ही रुमात्मने पटा हुआ अश्रु मच्छण ही क्षिप भी जाता, तौभी तुम्हारा अधिक आदर न होता । उधर देखो, तुम्हारे भाला चली आती है, बन्दी चादरको थोड़ा ली, फटे हुए अंशको वात और मत सोचो ।

बनगी कात्यायनीने समीप व्याकर प्रत्यसे कथा,—“बेटा । तुम अवतरु मोहर भुनाने नहीं गये ? नहीं गये; मो ब्रह्मा ही किया । मोहरने मिन्दुर लगा है । घरने इमली नहीं है । तासाजके किाने तिपनिया शाक है । जाओ, घोड़ीमी पत्ती ले ती व्याओ ।”

पुत्र पत्ती ले व्याया । माता उसके रसने मोहरको घसने लगी । असली मोनेकी असली मोहर, उसका असली रङ्ग निकल आया । धूपने मोहर चमकने लगी । माताने धोतीने कोनेमें मोहरको बांध दिया । कोनेको रमाप्रसादने आगे धोतीमें खोंस लिपा । ऊपरसे कमकर कमर बांध ली ।

रमाप्रसादा छडिङ्ग बूट और मैली धोती पहनकर ऊपरसे बिछौनेकी मैली चादर थोड़ा ली । इस तरह चार दिन्न अश्रुसे सज्जित होकर रमाप्रसाद मोहर भुनाने निकला ।

पन्द्रहवा परिच्छेद ।



बालक अथवा मोहर तोड़नेके आनन्दमें था। कहीं, किमने यहाँ और क्या कहकर मोहरको भुनाऊ,—अब उसे वह चिन्ता हुई। विशेष, उसका वंश और जाघतक छिड़क बूट देखकर लोग उसे टकटकी बांधकर गिछारने लगे। किमने कहा,—“यह तो जूता नहीं जूतेका दादा है। कोई बोल उठा,—दरिद्रके पैरमें इतना वेशकीमती जूता क्यों ? इस जूतेके शमने पहानेके लिये एक कपडा खरीद लेता, तो अच्छा होता। धोती घटने ही तक है,—टेहने कपडा नहीं,—अच्छा। जूतेकी पहारनो देखिये। लच्छीके विसुख होनेपर शायद ऐसा ही होता है ? अभी जूता पेच डाले।—बेचकर एक कपडा खरीदे।”

रमाप्रसाद राह राह घूमा जाता है और लोगोंकी ऐसी मन्त्र बोलती सुन रहा है। वह कभी कभी पीछे लौटकर देखता है, कि लोग मेरे पीछे पीछे तो नहीं आते। जिस दूकानमें वह बैठने जाता है, उस दूकानकी लोग घेरकर खड़े हो जाते हैं। यह देखकर रमाप्रसाद वहाँ नहीं बैठता,—तुरन्त ही उठकर दूसरी जगह चला जाता है।

गाँवके एक किनारे किमी मोदीकी बड़ी भारी दूकान थी। लोग पीछा करगा छोड़ दे, इस खालमें वह दूकानकी घोर दौड़ बना। छिटक जूतेकी बेचव व्यापार होने लगी। कुछ

लडके रमाप्रसादको दौडते देखकर आनन्दसे उसने पीछे पीछे दौडने लगे। रमाप्रसादने देखा, कि यह तो और भी बुराई हुई।—दौडनेसे भी छुटकारा नहीं है,—यह समतो पीछा किये ही चले आते हैं। यह देखकर वह फिर धीरे धीरे चलने लगा। उसे धीरे धीरे चलते देखाकर लडके भी धीरे धीरे चलने लगे।

रमाप्रसादने सोचा था दूकाण बड़ी है। मोदी वह और धनी है। सुतरां वह मोहर लेकर रुपये देगा। यही सोच कर वह दूकानमें गया। बूटे मोदीने अपनी स्वाभाविक कर्कश स्वरसे रमाप्रसादसे पूछा,—“क्या है ? तुमने शीघ्र ही गङ्गास्नान करने जाना है—नहो, क्या चाहते हो ?”

बालक रमाप्रसादने कहा,—“मैं चाहता कुछ भी नहीं,—लेकिन—”रमाप्रसादको और कुछ कहना नहीं पडा।

मोदी रुखाईके साथ बोल उठा—“अगर कुछ नहीं चाहिये तो का यह तमाशा देखने आये हो ?”

रमाप्रसाद। आपसे कुछ काम है।

मोदी। हमसे तुम्हारा क्या काम है ? चावल लो, दाल लो, नी लो,—जैसा निजालो, अभी देते हैं। काम वास यहाँ कुछ न होगा।

इसके बाद जब बूटे मोदीकी तरफ रमाप्रसादने जूतीकी ओर पड़ी, तब उमने डरकर कहा,—“अरे। यह क्या है। तुम अभी हमारी दूकानसे चले जाओ। ऐसा घोडसुहां कैलेंके पेड जैसा लम्बा जूता पहनकर आये। अभी हमारी दूकानसे भाग जाओ। जाओ, जाओ, भाग जाओ। चाहे तुम जो हो,

हमारी दूकानसे अभी चले जाव्यो । तुम्हें देखकर हमारा कलैना कांप रहा है । जो लडका ऐसा जूता पहन सकता है, वह सब कुछ कर सकता है ।

रमाप्रसाद । महाशय । गाराज क्यों होते हो ? हम खुप चाप आपके कानमें एक बात कहना चाहते हैं ।

मोदी । अरे बापरे बाप ।—यहतो होिका नहीं । तुम हमारा कान काटकर हमें कनकडा बना दोगे । तुम यहांसे जलद चले जाव्यो,—हम अभी दूकान बन्दकर देंगे ।

देखते देखते उा पीछे दौडनेवाले लडकोंकी भीड दूकानमें लग गई । "ताहि मधुसूदा" कहते हुए वह बूढा दूकानदार बोल उठा,—"इमने माय साथ अज ये सब कौन आवे ?"

बात बिगडती देखकर रमाप्रसाद वहांसे चल खडा हुआ । मोचा,—क्यों ऐसा होता है ? बग करे ? सब कोई छसी दिलागी करते हैं, कोड क्रोध भी करता और कोई कोई घरसे भी निकाल देता है । किसीसे मोचरकी बाततक नहीं कहने पाते,—यह होता है क्या ? अन्तमें उसने स्थिर किया,—"सब आफतकी जड यही जूते हैं । अब इन्हें नहीं पहनेगे । उमार डालेंगे । नङ्गे पैर ही जायगे ।"

दूकासे बाहर निकलकर एक पेडके नीचे बैठकर रमा प्रसाद जूता उतारने लगा, पर वह विलायती भीषण जूता क्या मज्ज ही उतरता है ? पहननेके वक्त बड़ी खुशी, बड़े ब्यानन्दसे पहना था,—अब निराश होकर शुब्ध मनमें जूना उतार रहा है । बताने चागे और बटा लगे हैं, यकलम लगा है, पीता पाश बधा है—हठातु खोल डालनेका माहम किसे है ।—

फिर उसे अभ्यास न था। इधर जूता खोलते देखकर चारों ओर दर्शक इकट्ठे हो गये। दर्शक व्यगणित चार अभिनेता एक ही हैं। किसी रुढ़ आदमीने कहा,—“बेटा। तुमने रोमा जूता क्यों पहन लिया था? पैरसे खून चलने लगा। दूरी हो, तो जूतेको काटकर पैर निकाल लो। किसीने कहा,—“यह छोकड़ा पागल है,—अगर पागल न होता, तो जूता क्यों खोलता? क्या कोई भला आदमी जूता उतारकर ढंगे पाव राह चलता है?” एक आदमीने इस बातका अनुमोदन करके कहा,—“आपका कहना बहुत दुरुस्त है।—ग्यारह बजनेका वक्त भी है, धूप तेज पड रही है,—सो इस पागलका शिर गर्म हो उठा है,—एक घड़ा जल इसके शिरपर ढाल देना क्या अच्छा नहीं है?”

परोपकार व्रतमे,—मनुष्य अथ समय चाहे जितना व्यर्थ व्रतों क्यों न हो,—किन्तु इस समयकी दर्शकमण्डलीने उसे पूर्णमात्रासे पालन किया। एक घड़ा जलका नाम लेते ही जाने किसने आकर रमाप्रसादके शिरपर घड़ा भर शीतल जल उभाल ही तो दिया। रमाप्रसाद भीत, चकित, कम्पित और विभीषिका ग्रस्त होकर एकदम चिह्ला उठा। लोगोंने समझा, पागल अब उत्कट पागल हो गया। दर्शकगण काटे जानेके भयसे इधर उधर भाग खडे हुए। रमाप्रसाद लोगोंसे फुरसत पाकर एक गृहस्थके घरमे घुसा।

सो बहवा परिच्छेद ।



रमाप्रसाद प्राण वचानेके लिये जिस गृहस्थके घरमें घुसा, वह एक भला आदमी था। ब्राह्मणने लडकेको विपन्न देखकर उसने लडकेको भीड़ छटा दी। जिगमे कोड़ दिक न करे, हमजिये उसने किवाड बन्द कर लिये। उसे जब यह मालम हुआ, कि बालक शङ्करप्रसादका लडका है, तो उसने लडकेकी खूप खातिर को।

उम भये आदमीने रमाप्रसादका कपडा सुरा दिया और कुछ जलपान करनेको कहा। रमाप्रसादने कहा,—“जबतक हम माताकी आज्ञा पाला करके घर न जायगे, तबतक कुछ भी न खांयगे।”

भला आदमी। क्या आज्ञा है,—हमसे कहनेमें कोड़ छानि है ?

“छानि कुछ भी नहीं है,—यह कह कर रमाप्रसादने मोहर भुनाने और अपनी जाखनाकी बात आदिसे अन्ततक उसे कह सुनाई।

आदमी। यह गांव बड़ा है,—जधम मचाने और सुक हम लडनेमें इस गांवके अनेक आदमी जबरदस्त हैं सही,—पर रुपया किसीके पास नहीं है। विशेष, मोहर लेकर रुपया कोई भी न देगा।

रमाप्रसाद । तब उपाय क्या है ? बिना मोहर साये और रुपया लिये घर लौट जानेसे तो कोई काम ही न चलेगा ।

आदमी । उपाय एक है । आप एक काम कीजिये । इस गांवसे प्रायः पौन नीलकी दूरीपर गङ्गाजीके किनारे एक नीलकोठी है । इस समय वहाँ बहुत रुपया मौजूद रहनेकी बात हमने सुनी है । नीलकोठीके हीवान दयाल बाबू आपके पिताको अच्छी तरह जानते हैं । दोनों आदमियोसे खूब मेल था । गोमास्ता गोपाल बाबू भी आपके पिताके अनेक प्रकारसे अच्छी है । इसलिये हमे विश्वास है, कि वहाँ जानेसे मोहर तुरन्त सा जायगी ।

रमाप्रसाद यह बात सुनकर प्रसन्न हुआ । धूँतेको वहीं रख कर कोठीकी ओर चला । वह भला आदमी रमाप्रसादको मैदानतक पहुँचा आया ।

नीलकोठीका काम इस समय खूब धूमधामसे चल रहा है । सालमें प्राय दो सौ मन नील पैदा होती है । जिस साल ईश्वरकी कृपासे फसल अच्छी होती है, उस साल अठ्ठाई सौ मन नील भी हो जाती है । कोठीकी अष्टाखिका इस समय पार कीससे देख पडती है ।

समय दोपहरका है । रमाप्रसाद बड़ी धाशा लगाये कोठीका शिखर देखते झपटा चला जाता है । वह मन ही मन अनेक तर्क वितर्क करने लगा,—“इसबार जरूर ही मोहरके रुपये मिल जायगे ।” “मिल जायगे”,—यह ख्याल होते ही उसका चेहरा खिल जाता है । “अगर न मिले”,—यह बात जब मनमें आती है, तब उसका मुँह खूब खिंच जाता है और

चेहरोंपर उदासी छा जाती है। कभी व्याज्जाद और कभी विषाद,—कभी व्येतस्ना और कभी काले मेघ,—इस तरहका उलट पलट रमाप्रसादके मामें होने लगा।

कोठोके दरवाजे दरवाा बैठा है। एक कङ्गाल लड़केको अन्दर जानेके लिये तय्यार देखकर उसने कहा,—“भीतर जानेका अभी हुकूम नहीं है बाहर ही खड़े रहो।”

रमाप्रसादने कहा,—“दयाल बाबू हमे अच्छी तरह जानते हैं,—उनसे सुनाकात करा है।”

दरवाा। वही बाबू यहाँ नहीं है,—आज सात दिन हुए वह बीमार होकर घर चले गये हैं। नायबदीवानजी यहाँ हैं।

रमाप्रसाद। दयाल बाबू नहीं हैं, तो कुछ चिन्ता नहीं,—गोपाल बाबूसे भेट होनेसे ही काम निकल जायगा। तुम अन्दर जाने दो,—तुम्हारे ऊपर किसी तरहकी आपत्त न आवेगी।

दरवानने देखा, कि यह दरिद्र लडका वही बाबू और गुमास्तानीका गाम ले रहा है। अवश्य ही इनसे लडकेका घना सम्बन्ध होगा। और कुछ न कहकर उसने राह छोड दी।

नायबदीवान जातिके सत्रिय हैं। बण लण्ण और दोनो आखि गोले हैं। शरीरमें विनचय सामर्थ्य है। प्रजा शासन करनेमें अद्वितीय पुरुष्य हैं। गाम बीरभद्र सिंह हैं।

बीरभद्र निर्दंड निरुप और कर्तव्यपरायणके नामसे देशमें प्रसिद्ध हैं। उनके क्रोधसे दिशा काप्रती हैं। उनकी लठ्ठ बाजीके डरसे अङ्गरेज कोठीवाल भी घबराया करते हैं।

दो एक दिविनयो डकैत हाथमें न रहनेसे किनी किनी

है, उसकी आंखोंसे आस भी बहता है। बालक रमाप्रसादें प्रकाशित "मा" नाम उच्चारण न कर सका—पर मन ही मन मा, मा कहकर पुकारने लगा और जलपूर्ण नयनोंको इस तरह कहने लगा,—“हे नया ! क्षमा करो। हे अशु । दीन बालकपर दया करो। एकबार शांत होओ। विगलित होकर हमारे गालोंको तर मत करो। मेरी आंखोंमें आस देखकर अभी मुझे चौर कहकर पकड़ ले गे।” किन्तु निरुग नेत्रोंने उस कातर वचनपर कुछ भी ध्यान दिया,—दुर्घ्य अशु ने उस कसखं बातको ग्राह्य नहीं किया,—दोगे आंखोंसे आस ही झंड़ी लग गई ।

बालक रमाप्रसादने मोखा, कि इसबारतो मृत्यु निश्चय आइ। मरनेके पहिले आदमी बचनेकी चेष्टा करता है। उसने एकबार ऊपरकी ओर ताककर, आखमें कुछ पद जानेका बहाना करता हुआ आंखोंको पोंछ डाला ।

रमाप्रसादका हृदय अनेक प्रकारके भावोंके तरङ्गसे पूरा हुआ। वह मनहीमन कहने लगा—“मा ! तुमने ! मुझे मोहर भुनाने क्यों भिना था ? मैंतो अब मरा, मा ! क्या उपाय होगा, मा ।

“मा ! तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं है। मेरा भाग्य ही मन्द है—इससे रोना ही रहो है। तुमने तो मुझे अकेले जानेके लिये मना किया था। तुम तो रघुन्यालकी साथकर देनेकी कहती थी। मैंने उस समय तुम्हारी बात सुनी नहीं। माकी बात न सुननेका फल साथ ही भोगना पडा ।

और हे रघुन्याल ! तुम्हीं उस वक्त कहा क्षिप रहे ?

क्योंसे ग्यागह देखतक तुम देख नहीं पड़े,—इम्का कारण
 क्या है ? तुम जानते हो कि घरमें घाबल नहीं है, लज्जाके लिये
 दृष्ट नहीं है,—यह जानकर भी तुम निश्चिन्त भावने दूसरी जगह
 कैसे बैठ रहे ? हम लोगोका कष्ट देखकर अतने शायद तुम
 भी भाग खटे हुए ? किं । रघुदत्तल क्या यही तुम्हारा काम
 है ? रघुदत्तल ! मा तुम्हें बड़ा घेटा कहती थीं । हम लोग
 तुम्हें दादा कहते थे । मरदाद दादा । तुम्हारा छोटा भाई
 रमाप्रसाद घोर विपदमें पड़ा है, क्या तुम आकर बचाओगे
 नहीं ?

बालक रमाप्रसादकी व्यथ अपने बड़े भाई भवानीप्रसादकी
 पार आई । बालक भागो भावसागरमें निमग्न हुआ । मन ही
 मा कहा,—“बड़े भय्या ! और क्या आपसे भेंट न होगी ?
 छोटे भाइकी चाहे दिखाई मत दो, पर मातो तुम्हारे लिये
 एकात्मने चुपचाप रो रोकर अन्धी ही घली भय्या । तुम्हारी
 बात कहते ही मा सुभे टाटम देकर कहती है,—“चिन्ता क्या
 है ?—तुम्हारे बड़े भय्या आयेंगे,—पर इसके बाद ही मासे
 नेत्रोंमें आस्र देख पड़ते हैं । बड़े भय्या ! मा इस तरह व्यथ
 कितने दिनोंतक रोवेंगी ? मेरे मजानपर न रहने हीसे मा रोने
 लगती है ।

भय्या ! माकी खलाइसे चाहे आपका हृदय कातर
 न होता हो, पर भाभीजीकी दशा तो अखिसे देखो नहीं
 जाती । उका यह गौरवर्ण, सोने जैसो उज्ज्वल कान्ति,—
 भय्या ! कष्टनेसे क्या निन्वास कीजियेगा, एकदम बारी पड़
 गई है । अब उन्के वेश नव उलधर जैसे नहीं रहे । उन्नेने

कैचीसे सब काट डाला है। उन्हीं बालोंका शिर-बंधना बनाकर बेच लेती है,—जो प्रेमा मिलता है उससे लक्ष्मीके वास्ते दूध लिया जाता है। कभी कभी उसीसे लक्ष्मीके लिये जलेबी खरीदी जाती है। बडे भय्या। भाभीजी इस समय दो चार मूत्री अन्नसे अधिक नहीं खाती,—कहती हैं, इतने हीने पेट भर गया। भय्या। उाका सुह सुख गया है। देह सुख गइ है। पहले जैसा शरीर था, अब उसकी चौथाइ भी न रही। उनकी आखोंसे आसू टपकते हैं, कि खून गिरता है, सो ममभन नहीं सकते। भय्या। उनके सिवाय एक वस्त्रकी और दूसरा कपडा नहीं है, वह भी कई जगह फटा है। भय्या। उनके फुक् भी नहीं है,—केवल मांगका सिन्दूर अब भी दप् दप् चमक रहा है। भय्या। चाहे भुभसे रुत मिलिये, पर एकबार उन्हें दर्शन दे जाइये। मैं तो मरनेको बैठा हूँ—यदि इस समय एकबार भाभीजीको आप दर्शन दें, तो मैं आनन्दसे प्राणत्याग करूंगा।

“भाभीजीको दर्शन देनेकी आवश्यकता नहीं है,—एकबार लक्ष्मीको दिग्वाइं हीजिये,—एकबार उसे गोद लीजिये। निम लक्ष्मीके व्यांग ओट हो जानेसे आपको चारो ओर अन्यकार देख पडता था,—बिस लक्ष्मीके माथ बैठकर दिना भोजा किये आपका पेट न भरता था,—निम लक्ष्मीको दस्त भूषण,—हद्या धिक रूपयेके हीरे मोतीसे अलङ्कृतकर भी आपको छत्रि न होनी थी,—भय्या। आज वही लक्ष्मी दूधके लिये तरबती है,—एक अच्छे कपड़ेके लिये गीती है। रुहलकी किमी छत्रकीको अच्छा कपडा पहने देरकर लक्ष्मी घर हींभी आती

है और माका गला पकडकर कहती है,—‘मा ! बाबा कब आवेंगे ।—बाबाके आनेपर हमे अच्छा कपडा मिलेगा,—क्यों मा ? भय्या ! अपनी प्यारी लक्ष्मीको एकबार देख जाइये,—उसे गोद लेकर एक अच्छा बख्त दे जाइये,—लक्ष्मी उसे पहनकर बाहर निकले । इसके बाद यदि आपकी इच्छा हो, तो चले जाइयेगा । भय्या ! लक्ष्मी अब कुछ बड़ी हुई है । आप उसे साठे तीन वर्षकी छोड गये थे,—अब लक्ष्मी प्रायः पांच वर्षकी हुई है,—आगेवाले दोनो दात गिर पडे थे, अब फिर निकले आते हैं । भय्या ! लक्ष्मी जब अपने छोटे छोटे दातोंसे आपको काटती थी, तो आप उसे बहुत प्यार करते थे । भय्या ! अब लक्ष्मीके कई दांत निकल आये हैं । आप शीघ्र ही एक बार जाइये । लक्ष्मीके केश पीठपर लटकते हुए और भी नीचे चले जाते हैं,—आप आकर एकबार देख जाइये । लक्ष्मी भिखारियोंसे सुनकर गाती है,—

‘दौगन्धु दूसरो कध पावों । को तुम बिन परपीर धाइ है
कैहि दौगता सुनावों ॥’

भय्या ! आप आकर लक्ष्मीके मधुर कण्ठका गाना सुन जाइये । भय्या ! अगर देर कीजियेगा, तो फिर लक्ष्मीको ऐसी न देख पाइयेगा । जल्दी जाइये, भय्या !”

उस वक्त रमाप्रसादके मनमें इस भावकी अनेक बातें गाना रूपसे उदित होने लगीं । गुरुके पहले मनुष्यके मनमें अनेक बार पूर्वसृति जाग उठती है । रमाप्रसाद फिर सोचने लगा,—‘क्यों ऐसा होता है ? क्यों हम लोगोंको इतना कष्ट हो रहा है ? बाबाके इतना धन होह जानेपर भी हम लोग क्यों

पथके मिखारी हो गये ? माता दिगंरात शङ्करीको पुकारा करती है—व्या शङ्करीको दया न आई ?

“हे मा शङ्करी ! हे विपदभङ्गिनी ! क्या मेरे उद्धारका कोई उपाय नहीं है ? मैं व्याज ही मर जाऊँ तौभी कुछ दुःख नहीं है,—किन्तु लक्ष्मीको भोगन न मिलेगा।—बिना इस मोहरके मुने लक्ष्मी दृष्ट न पावेगी,—अन्न न पावेगी,—लक्ष्मी मर जायगी। और उपर अतिथिगण गङ्गागर्भमे वास कर रहे हैं। बिना इस मोहरके मुने उनकी सेवा किन तरह होगी। उनकी सेवा न होनेसे मा उपवास करेगी। माने उपवास करनेपर भाभीजी भी नहीं खायगी। मा शङ्करी ! सच सच कह दो, तब क्या व्याज मैं सबश निधन होऊँगा ?

“आइये भय्या ! आइये—व्याज हम लोगोंका मवंश निधन देख जाइये। भय्या ! एकबार आप शिकार खेलने गये थे और एक हाथीका बच्चा पकड लाये थे। उसपर लक्ष्मीको चढ़ा कर कहा था,—हमारी लक्ष्मी जगहानी है। वही जगहानी रूपिणी स्वयं लक्ष्मी व्याज अन्न बिना मर रही है—भय्या ! आप एकबार आकर देख जाइये।

“भय्या ! मन ही मन आपको इतना पुकारा, पर तौ भी आप न आये ? भय्या ! आपको वह प्रीति कहा गई ? भय्या ! हम लोगोंके किस अपराधके कारण आप नहीं आते ? कोई कसूर तो किया नहीं।

“भय्या ! तब क्या आप इस समारमें नहीं है ? कहा गये, भय्या ! क्या सचसुच ही आप परलोकमे हैं ? अब क्या आपको इस समारमें न देखा सकूँगा ?”

भाइ भवातीप्रसाद इतनी देर बुलाये जानेपर भी न आये,—
पालक रमाप्रसादकी रक्षा उन्होंने न की ।

उनीसवा परिच्छेद ।

सोचते सोचते रम प्रसादको ज्ञान हुआ । मैं क्यों मरूँ ?
मैं सच बात ही क्या न कहूँ ? मैं एक रईसका लडका हूँ,—
क्या गायबदीवान मेरी बातका विश्वास नहीं करेंगे ? इस जगह
सच बात कहकर एकजोर प्राणरक्षाकी चेष्टा करना उचित है ।
मैं हाथ जोड़कर कहूँगा,—“मेरे पिताका नाम शङ्करीप्रसाद
है । बहुत दिन हुए मेरे बड़े भाई कहते चले गये हैं । उनका
फूट पता नहीं मिलता । माताके पान कुछ भी नहीं है,—
छमलीगोंको खानेके लिये कुछ भी नहीं है । माके पान
लक्ष्मीपूजाकी एक मोहर थी । उसीको माने सुभे चम ख
रीदने और अतिथिसेवाके लिये सुगानेकी दिया है । उसीको
मैंने धोतीके एक कोनेमें बांधकर आगे खोंस लिया है । मैंने
आपकी मोहर नहीं चुराई । मा शङ्करीजी कसम खाता हूँ,
मैंने मोहर नहीं चुराई । यह देखिये,—यह वही मोहर है ।

इतना कहकर क्या मोहरको खोलकर दिखानेसे काम नहीं
चलेगा ? मेरी बातका विश्वास गायबदीवान करेंगे तो ? यदि
विश्वास न करें, तो क्या होगा ? मारपीट तथा बन्धन आदि
सब सद्गता पड़ेगा ।

“तब क्या सच नहीं कहूँगा ? नज़्जाम्भोरी लेनेके वक्त तो
मोहर जबर ही निकल आयेगी । फिर मारपीट और बन्धन

रमाप्रसादका मुँह सूख गया, देह कापी लगी, कुछ पसीना भी निकला, तब उनका सन्देह और भी डढ़ हो गया। रमाप्रसादका भावान्तर देखकर नायबदीवानने स्थिर किया, कि निश्चय ही यही लडका चोर है।

जिस समय रमाप्रसाद धोतीका कोना निकालनेके लिये बैठा कर रहा था, उस समय वह भागो ब्राह्मणशास्त्र था,—मूर्च्छित होकर जमीनपर गिरनेके सब लक्षण भागो उसमें वर्तमान थे। वह इस समय पागल सड़भ है,—पहले कह नाये हैं, रमाप्रसाद सोच रहा है, इस जगह कोई नहीं है,—न आत्मी है और न कोई जीव ही है। रमाप्रसादने इसी अज्ञान अवस्थामें धोतीके कोनेको बाहर निकाला,—उसमें कोई गोल चीज बधी हुई है,—नायबदीवानने इसका उसे दिख चुकसे देखा। अब वह निमेषभ्रूय लोचनसे रमाप्रसादकी कार्रवाई देखने लगे।

रमाप्रसादने अज्ञान अवस्था हीमें गाठ खोलकर मोहरको निकाला। उस समय नायबदीवानकी ही नहीं बरस और भी कई आदमियोंकी नजर मोहरपर पड़ी। ज्यों ही मोहर बाहर निकाली गई त्यों ही नायबदीवान माघकी भाति गर्जकर रमाप्रसादकी ओर लपके। सब आदमियोंने देखा, कि रमाप्रसादके हाथमें मोहर है। "चोर पकड़ा गया," "चोर पकड़ा गया,"—इस हल्लेसे सारा मकान गूब उठा।

चाहे नायबदीवान बाघकी नाई गर्ज ओर चाहे लोग चोर, चोरका हल्ला ही मचवें,—पर रमाप्रसाद अपनी जान अपने काममें लगा है। अभी नायबदीवान पिकट नहीं

आये थे,—पर रमाप्रसादने पूर्वसङ्कल्पके अनुसार मोहरको हाथमें लेकर नायबदीवानके जूतेकी ओर लुटका दिया । रमाप्रसादकी इस कार्रवाईकी सब आदमियोंने अच्छी तरह देखा । फिर हल्ला हुआ,—“चोर, चोर, चोर ।”

मोहरको लुटकाकर रमाप्रसाद बैठ न सका । वह खेठ गया ।

रमाप्रसाद भ्रमिँकृत हो गया ।

रमाप्रसादने कुछ वाच्यशाश्रुत्य होकर मोहरको निकाला था,—यह कोई न जा सकता,—एव रमाप्रसादने वाच्यशाश्रुत्य होकर नायबदीवानके जूतेके घान, मोहरको लुटका दिया था,—यह भी कोई समझ न सका । रमाप्रसाद नमीनपर खेठकर एकदम चेतनाविहीन हो गया,—यह भी कोई जा न सका । लोगोंने केशव समझा,—रमाप्रसाद चोर है । चोरीका माल धोतीके कोठेमें बाधकर छिपा रखा था । अभी खानसामाकी गद्दाभीरी ली जा रही है—यह देख रमाप्रसाद मोहर निकालकर नायबदीवानके जूतेके नीचे उसे रखने की चेष्टा कर रहा था । अतएव रमाप्रसाद—चोर,—यज्ञा योग्य है ।

अतएव रमाप्रसादको मागे पीटो, धरो पकड़ो,—यह वचन सुन खोलकर और किसीको न कहना पड़ी । नायबदीवानने अपने जूतेके नीचेसे मोहरको उठा लिया और साथ ही अपने डछतू घुणको हाथमें लिया ।

अब उस भ्रमिँकृत ब्राह्मण वाजककी पीठपर चतुर्भुजशोद्धव नायबदीवान श्रेयुक्त गौरभद्रनिष्ठ महाशय पटापट जूता लगाने

लगे । बालककी कोमल पीठ फट गई, खूनकी धारा बह निकली । पार्यद्वर्ग नायवदीवानको उत्साह देने लगे,—“अभी नहीं हुआ,—गौर लगे,—चोरको अभी पूरी सजा नहीं मिली । हा,—लगे,—गूता लगे,—धूमा लगे,—लाठी लगे ।”

यह क्या ? लड़कातो बोलता भी नहीं । चोटकी पीड़ासे आं ऊँ भी नहीं करता । ऐसी भारी मार पडनेपर भी “मरा,” “गया” कुछ भी नहीं बोलता ।

नायवदीवानने कहा,—“यह लड़का बड़ा बदमाश है । मूर्च्छा या नृत्यका बहाना करता है । उसने यह विचार लिया है, कि सुरदेकी तरह पड़े रहनेसे कोई उसे ज्यादा नहीं पीटेगा, पर मैं वीरभद्रसिंह हूँ,—सुभे कोई धोखा नहीं दे सकता,—”

इतना कहकर वीरभद्रने बड़े जोरसे कहा,—“अरे ! कोई है ? जल्दी हमारा नुकीला भाला खे आ ।—हम इस बदमाश होकड़ेकी जाव हेंदकर उसमे नमक भरे गे ।—देखें, बोलता है, कि नहीं ।”

गोपाल बाबूने वीरभद्रसे कहा,—“मेरा मन कैसा कैमातो करता है । यह लड़का चाहे मर गया हो, चाहे मूर्च्छामें पड़ा हो । देखें, नाकसे मांस निकलती है, कि नहीं ?

वीरभद्र । (खसाइसे) आप क्या पागल हो गये है ? दुष्ट लड़का बहाना कर रहा है । इस तरहका मरना हमने बहुत देखा है । जाँघमें भाला घुसेडकर नमक भर देनेसे मरा आदमी अभी जी उठेगा । हम किसीकी बात सुनना नहीं चाहते, हमे कोई कुछ न कहे,—हम इस बदमाश लड़केकी

जांघमें भाला घुसेडेंगे,—गमक भरेगे,—और लोहेकी चिलम गर्म करने इसका चूतड दाग देंगे। कोइ है रे। लोहेकी चिलम खून लाल करने जल्द ले आ।

देखते देखते एक बडा भारी बुकीला भाला ध्या पहुँचा। वीरभद्रनी उसे अपने हाथमें लिया। उस समय वह कालान्तक प्रम जैसे दीखते थे।

गोपाल बायूने हाथ छोडकर फिर कहा,—“महाशय ! आप मालिक हैं। क्रोध मत कीजिये,—मेरा अपराध चमा फीजिये।—यह देखिये,—सचमुच ही यह लडका बेहोश है। मर गया है, कि नहीं,—ठीक ठीक नहीं कह सकता। लेकिन यह देखिये, इसके पलक नहीं गिगते,—नेत्र स्थिर हैं। जीभ और दात भी कुछ बाहर निकल आये हैं।”

वीरभद्र। तुम अभी निरे लडके हो। संभाग्का हाल अभी अच्छी तरह नहीं जानते हो। माजूम होता है, इस चोर लडकेसे तुम भी मिले हो। नहीं, तो इसका पच लेकर तुम इतनी बातें क्यों कहते ?

गोपाल। आप चाहे सुभे जितनी कडी बात कहें,—किन्तु मेरी निश्चय धारणा यही है,—यातो यह लडका मर गया है या मौत निकट ही है। आप एकवार लडकेको उठाकर बैठा देखिये तो,—

वीरभद्र रमाप्रसादकी उठाकर बैठाने गये। जबतक वीरभद्र हाथको इशारा दिये रहे तबतकतो रमाप्रसाद कुछ बैठा रहा,—पर शिर लटक गया। क्यों ही वीरभद्रने हाथ बलग कर लिया त्यों ही रमाप्रसाद घडामसे जमीनपर गिर पडा।

बीरभद्र ह ह ह-ह करके हंस पडे । उस विकट हँसीने भयानक भावसे स्थान भर गया ।

श्रीतकालमें सहसा ऐसी दारुण गर्भों क्यों मालूम होते हैं ?—कहीं उल्कापात हो रहा है क्या ? कहीं दावागल तो कहीं जल रचा ? प्राण व्याकुल क्यों हो रहे हैं ? इतनी उल्टापल्ट ही क्यों लग रही है ? नरकके काबे काबे कीडे क्यों याद आते हैं ? हृदयमें भयानक भावके साथ वीभत्सरसकी मिलावट क्यों होती है ? यही यही विषैली उन्माज अंधरी तरङ्ग !—शायद डूबे !—गये ॥

बीरभद्र फिर ही ही ही ही हंस उठे । सब आदमी चुप हैं—मानो निर्जीव चित्र हैं ।

इसी बीचमें एक नौकरने लोहेकी चिलमको आगमें लाल करके लौहेकी पालीमें लाकर बीरभद्रके सामने रख दिया । पहिलेतो बीरभद्रने उसे खूब उलटी पलटी सुनाई, फिर साधे भाषामें उसे "साला" कहकर गाली दी और गालमें एक धप्पल लगाकर कहा,—"साला ! इस लाल चिलमको हम पकड़ेंगे कैसे ? एक चिमटा लाते न बना ? हा, जल्दी चिमटा ले आ यदि देरी हुई, तो इसी चिलमसे तेरी पीठ दाग दे गे । साला उसे यद्दा ला और दौड जा !"

चिलम गूँधकर नौकर दौड़ा और चिमटा लेकर लौट आया । बीरभद्रने चिमटा उठा लिया । चिमटेको भूथकी पीठपर बडे जोरसे मारकर कहा,—"साला ! पहिले ही इतने क्यों न ले आया था ?"

इक्कीसवा परिच्छेद ।

अब वीरभद्रने बाँये हाथमें भाला और दाहिने हाथमें चिमटा ले लिया। उस भीषण मूर्त्तिको देखकर कितनोंके तो प्राण उड़ गये। वीरभद्रने भैरवरूपमें कहा,—मेरी आंखोंमें धूल डाल दे, ऐसा लडकातो हम इस देशमें नहीं देखते। इस झोकड़ने हमें ठगनेकी बात विचार ली थी, पर हमें ठगनेकी ताकत किसे है ? यह लौंछा अभी जीता है,—नकल किये पडा है। ही ही ही।—यह देखो, इस लडकेने सामनेके दांत निकाल रखे हैं,—यह सब वहाना है। ही ही-ही ! मजा देखो। मजा देखो।—देखते नहीं, यह धीरे धीरे सांस फेक रहा है। इसबार पकडा गया। हमने पकड लिया—पकड लिया। ही ही ही।—अभी भी कहते हैं,—उठ—उठ—उठने बैठ।—अबों—अभीतक नहीं उठा, अभीतक दांत निकाबे ही है ! अभी तुरत दांतको छिपा ले।—अभीतक छिपाया नहीं।—अच्छा, अभी इन दांतोंमें एक घूसा लगाते हैं।—इस दांतोंको तोड़कर अभी सूनाखुनी किये देते हैं। ही ही ही ही ॥”

इतना कहकर वीरभद्र भाला और चिमटा फेककर बैठ गये और घूसा उठाया। इस वज्रसुष्टिका आकार प्रकार और तेज देखकर ऐसा मालूम होने लगा, कि इस लडकेकी कोमल हस्तपंक्ति क्या चीज है, इससे तो लोहिका सुहर भी चूरचूर हो सकता है। आज किसे ऐसी महाशक्ति है, जो इस घूसकी गति रोक सके ?

उस जगहके और मन आदमी चुप थे । सुध । किसीका भी नहीं खुला,—पर मन ही मन सब कोईं छाया, छाया करते लगे । शायद भीतरका हा हा ख भी बीरभद्रके काममें पड़ जाय, इसलिये सबोंने आखें मूंद ली ।

एक अस्त्री वर्षका बूढ़ा, प्रलितकेश, गलितदन्त, लोल चर्म,—तुरत उठा और जल्दीसे दौड़ जाकर बीरभद्रको दोगे हाथोंसे बेचनकर घूसके सामने अपनी छाती करके कड़ा,— "सिंहजी । ब्रह्महत्या मत कीजिये । यह ब्राह्मणका लडका यद्यपि जीता है,—पर आपके एक घूससे उसके प्राण निकल जायगे । और यदि मर गया है, तो मरेको मारनेसे क्या लाभ,—इस नीलकोठीमें ब्रह्महत्या मत कीजिये ।"

ब्रह्महत्याकी बात काम कर गई । बीरभद्रने मूठी खोल डाली और हाथको हटा लिया । वह बड़ मनुष्य भी उनके पास बैठ गया । बीरभद्रने कहा,—"कामके वक्त हम ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं समझते । हम मालिकका नमक खाते हैं,—सोलह आना मालिकका खार्च बनाये रखेंगे । काम काजमें हम मालिकके लिये प्राणतक दे सकते हैं । ब्राह्मण हमारे शिरपर रहें, पर चोरको हम अवश्य दण्ड देंगे । चोर,—ब्राह्मण ही चाहे देवता;—वह कभी दयाका पात्र नहीं है ।"

बुढ़ा । चोरपर दया करनेकी बात हम नहीं कहते,—चोर ब्राह्मण बालकको भी पीटनेसे नहीं रोकते । हमे यही डर लगता है, कि कहीं नीलकोठीमें ब्रह्महत्या न हो जाय । और देखिये, यदि मचमुच ही यह ब्राह्मण बालक मूर्च्छित या मृत हो गया है, तो इसे पीटनेसे ज्यादा लाभ है । आपका उद्देश्य

गर्भ दूध उसके कण्ठसे उतरेगा, कि नहीं देखिये,—गर्भ देखिये।”

आज्ञा पाकर वह जल ले आये। जल मुखमें डाला ही बाहर गिर पड़ा। उन्होंने नाडी देखी। वह अति क्षीण मालूम हुई। अभी मरा नहीं है। वहने बालकके आंख और सुंहमें जल दिया। गोपाल बाबूसे पद्मा लाकर डोलानेको कहा। गोपाल बाबू पद्मा ले आये और लडकों सिरहाने बैठकर डोलाने लगे, तौ भी उसकी सूच्छा न टूटी।

वहने धीरे गंभीर स्वरमें वीरभद्रसे कहा,—“बालक सूच्छा ही है सही, पर मृत्युके लक्षण भी देख पड़ते हैं। मालूम होता है, बनेगा नहीं। क्या किसी चिकित्सकको बुलाना अच्छा नहीं है ?”

वीरभद्र। चिकित्सक बुलाकर गोलमाल करना अच्छा नहीं। पुलिसको यह बात नहीं बताइ जायगी। यह न काम चुपचाप करना होगा। पुलिसको खबर दैते ही वह नकद पांच सौ रुपया मागेगी। दो मोमे कामने वह राज्य गंभीरगी। पेफायदा भालिकका इतना माल क्यों बरपाद करेगा हमारी यह राय है, कि जागाननी होनेके पहले ही लाश गङ्गाकी गर्भमें गड दी जाय।

इसी वक्त एक नौकर गर्भ दूध ले आया।

वीरभद्रने कहा—“गर्भ दूधकी व्यय बन्दरत ही क्या है दूधको फेंक दो। नोकरकोठीके आठ बेयरोंको बुलाओ। छोटे पालकी खानेको कहो। साश्रुको अभी उठाकर ले जाओ। पालकीपर आँदर डालकर लाओ। पालकीके साथ १२ रि-

और यहूगा डोम,—दो विश्वासी दरवान जाय । यदि कोइ पूछे,—पालकी किमकी है ? तो कह देना,—सिद्धजीके घरकी औरते जाती हैं । अभी लाशको उठाओ ।”

दृढ़ । (हाथ जोड़कर) महाराज्य । आप क्या कहते हैं ? राहजा अभी जीता है । जीता लडका कैसे गाडा जायगा ?

वीरभद्र । (रखाइके साथ) उममें हज्र ही क्या है ? फिर वह बहुत देरतकनो जियेगा नहीं । जाते जाते राह हीमें मर जाय, तो ताण्डुव नहीं । हमतो ब्रह्महत्या नहीं करते,—वह लडका आप ही आप मर जायगा । लाशको यहाँ रखकर क्या हम अपने स्वामीकी हानि करावेगे । अच्छी बुद्धि है तुम्हारी । हम बेफायदेका बखेडा पसन्द नहीं करते । लाशको चुपचाप गाड और निश्चिन्त होकर नीलको दादो बाटना आरम्भ करे—जिमसे माजिककी दो पैसा मिले, उमकी पैया करे । तुम बूढ़े हुए, बाल पक गये, पर बुद्धि न हुई ।—

दृढ़की आंखोंसे आसूकी धारा वह निकली । वाय्यगजट स्वरसे दृढ़ने कहा,—“आपकी बातके ऊपर बात कहनेकी शक्ति मुझे नहीं है । आप राजा हैं,—पर मेरे प्राण कैसे विकल हो रहे हैं । मुझे आधे देखके लिये यह भिचा हीनिये,— मैं खद दवा करके एकवार उसे बचानेकी कोशिश करू । देखिये, गाड़ी अभीतक चलती है । बालककी अवस्था देख कर मेरा कजेशा फटा जाता है । प्राण कैसा कैसा तो करने लगते हैं ।

इसका वीरभद्र ही ही ही—हा हा हा परले हम उठे हमें हंस करे,—प्राण था है ? फिर प्राणका कैसा कैसा कराना था ? ही ही ही । नया नया नया की सुविधा देखकर चलना होगा । यह लड़का चाहे मरे चाहे लिये हमे क्या ? इसे जीता ही गाउ देनेमें हमारी छानि क्या है ? शेष ही क्या है ? यह तो अभी मरेगा । हम इसे मारती नहीं डालते । बालक लिये जैसे यहा मरना जैसे ही मरने जाकर मरना, वानो बराबर है । जब दोनों बराबर हैं, तो फिर नील-नीलोंमें इसे रखकर भ्रष्ट बचानेसे क्या फायदा अच्छा घराऊ तौरपर हम एक बात पूछते हैं,—इस लड़केको क्या रखनेमें क्या फायदा है ? क्या इसमें हमारा कोई लाभ है ? ही ही ही । आप अभीतक लड़के ही बने हैं ।

वृद्ध । (उपचारसे) देखिये, सिद्धी । यह देखिये लड़के की होंट हिल रहे हैं ।

वृद्धने बालकके सुधमें जल देकर फिर कहा,—“यह देखिये, अपने जल पेटमें गया है,—बाहर नहीं गिरा ।”

वीरभद्र । हमें मालूम होता है, लड़केको भूल लगा है अतएव अभी उसका शिर फाड़ डालना उचित है । कौन है ? जलद सुना लें आते । हम तो ब्रह्महत्या नहीं करते ! मरे हुए आदमाका शिर फाड़ते हैं ।

इसी वक्त यमदूतकी भाति आठ बैयरा और एक पालकी आ पहुँची । पालकीपर परदा पड़ा था । बैयरे लड़धारी आँखें खोल तथा नीलकोठीके पाँवें छुए थे । वे लोग बीच बीचमें पालकी लेते थे,—निफ प्रसिन्नी आखमें धूल भोकीके लिये ।

वीरभद्र ने नौकरसे कहा,—“अरे ! एक मोटा ये ब्रा ।”

नायब मोटे पर बैठ गये । वीरभद्रने कहा,—आपके मालिकने खाँगात भेजी है, हम भी उसे कबूल करीपर राखी है, किन्तु बात यह है, कि एक सौ बीघे विवादी जमीनमें हमीनाल बीना धारम्म किया है, इससे हम किसी तरह बाज नहीं आ सकते, आपने मालिक चाहे नरुद पाच सौ रुपये दे चाहे पाच हजार दे, नील वोगा किसी तरह बन्द नहीं होगा ।

नायब । यह क्या, महाशय ! यह जमीन बहुत दिनोंसे हमारे मालिकके दखलमें चली आती है, पकी दस्तावेज वगैरह भी हैं, आपसे झगडा करनेकी इच्छा उनको नहीं है, इसीलिये उन्होंने आज हमे भेजा है । इन जमीनमें नील वोगा अब बन्द कीजिये ।

वीरभद्र । अगर हम आपने आपके बेटे न होंगे, तो नील वोगा बन्द होगा ।

नायब । महाशय ! आप क्रोध क्यों करते हैं ? मन लगाकर सन्तवार सुनिये ।

वीरभद्र । हमारे मन टग फूट नहीं है । हम मालिकको हानि कभी नहीं कर सकते । यदि हमारे पुरखे गार्में लोट आवे और इन बारेमें मुझसे अनुरोध करें, तो भी हम गीण वोगा रोक नहीं सकते । आपकी इच्छा थी, तो आप पिठाद और खमी रीत जाइये ।

नायब । महाशय ! पिठाद और खमी रीत व जानेकी बात हमारे मालिककी नहीं है ।

कहो न। जय बच गया है, तो फिर उठकर बैठनेमें क्यों विलम्ब कर रहा है ?”

इतना कहकर वीरभद्र आगममें दूर एक चौकीपर बैठे, अन्तक दरवाजेका फाटक बन्द था,—बैठते ही उन्होंने फाटक खोलनेकी आज्ञा दी। उसी फाटकमें कुछ किसान आगममें आये। वे लीम गलेमें कपडा डालकर वीरभद्रके सामने कनार बाधकर खड़े हुए। वीरभद्र एक एक आदमीको बुलते है,—कुछ कहते सुनते नहीं,—सिर्फ दो तीर चूते समते—और किसीसे कहते है,—“तुम्हें दो रुपया चुर्माणा हुआ।” किसीसे कहते है,—“तुम्हें तीन रुपया चुर्माणा हुआ।” इस तरह वह दल बिदा हुआ।

दूसरा दल था पड़ु था। अन्तके बहार कुछ थोड़ा है। एक आदमी, नागौडा जना और बगियाइन पहने एव कमरमें द्रपट्टा लपेटे आगे आगे चला आता है। उसके पीछे राम बरा दरवाजा,—लाल पगडो बांधे और बन्धीपर साठी रखे—आ रहा है। उसके बाद एक पड़गीवाना दो टोकरी गिटार्ई लिये हिलता डोलता आ रहा है। इसके पीछे एक आदमी एक खमी लिये चला आता है।

इस दलके आते ही वीरभद्रने बगियाइनवाले आदमीसे कहा,—“गायब साहब! खार जया है ? इतनी गिटार्ई क्यों ? खमा ही क्यों लाये हो।”

गायबने कुछ शनकर कहा,—“माफिकुने आपके वारुते, मैं जान भेजी है। आप इसे लपू कर लेगे, तो उछ बहुत पड़ेगी।”

हमें भार डालेंगे,—जाते जी हम कभी जमीन छोड़नेवाले नहीं ।

नायब क्लिकतन्त्रविम्वट होकर कुछ देरतक चुप रहे, अन्तमें वीरभद्रसे कक्षा,—“सिंहजी ! तो हम जाते हैं । एक बात कहते हैं, अन्ततः तीनों दिनांक जमीनमें छल चलाए वन्द रखिये । यही हमारा श्रेय अनुरोध है ।

वीरभद्र । अथभर भी वन्द नहीं कर सकते ।

नायब साहब विफलमनोरथ होकर उदाम उठ खड़े हुए । वीरभद्रने उन्हें प्रणाम किया और उनके साथ आये हुए प्रत्येक आदमीको एक एक रुपया बखशीश देनेकी कक्षा । शायद नायब साहब यह सोचते मोचते चले,—“हमने कितने ही झूर, रज, कर्कश, हठी, बदमाश, चूर्त देखे हैं, पर ऐसा जमी नहीं देखा ।”

नायबने बांख घोट हो जागेपर वीरभद्र फिर तन्धाकू पीने लगे । इधर नायक रमाप्रसाद धीरे धीरे सुम्न व्याप्त मजल होने लगा । वह उसे धाँसी तरह छोड़ हुआ, तब उमने कक्षा,—“मैं कक्षा हूँ ? माने जो सोचर सुभे सुनानेके लिये ही था, वह भी गट हो गई । मैं इस वक्त गिरफ्तार या कहीं हूँ ?” उन अज्ञो वयजे उड़ने कक्षा,—“अधिक मन पोली । हम जो कुछ पूछने हैं, उनका जवाब धीरे धीरे कथेपनें दो ।”

नायक । अच्छा, पूछिये ।

वज । तुम्हें भाख लगी है ? सारकी इच्छा होती है ?

नायक । हाँ, दिग्भर झर साया गरी है, बड़ी भा

वीरभद्र । तब रहने हीजिये । कौन है रे । निठार
आदर ले जा ।

एक नौकरने नायब साहबको हुका दिया । वीरभद्रके
लिये एक बड़ा भारी भटक आया । दोनों झूठ दैरतन तन्नाज़
पोते रहे । वीरभद्रको झूठ ठगणा पढते देखकर गायबने फिर
कहा,—महाशय ! एक काम क्यों नहीं करते ? क्या पश्चा-
यतमे इस भागडेको हँ देना जस्ता नहीं है ? आपने पाम,
जो दस्तावेज बगैरह है, उन्हें निकालिये, हम भी अपने
मालिकके दस्तावेज बगैरह से आवे । फिर पश्चायतके विचा-
रसे जिलकी जमीन छोड़ी, उसे मिल जायगी । भागडे, कपडा-
टकी जखरत ही क्या है ?

वीरभद्र । हम भी तो यही कहते हैं, कि भागडेकी
क्या आवश्यकता है ? जब हमने उस जमीनकी ले लिया है,
तो फिर उसे किसी तरह छोडे गे नहीं, यह आप आशी
तरह जानते हैं । सुतरां भागडे करनेमें कौई फायदा नहीं
है । निगाहमें और क्या है,—खून, जखम और रक्तपात ।

गायब । तब आप जमीन छोडनेपर किसी तरह राजी
नहीं हैं ?

वीरभद्र । नहीं ।

गायब । राजी होते, तो बहुत ही अच्छा होता ।

वीरभद्र । जो नौकर मालिकका हुकमान करता है, उसको
भलाई किसी तरह नहीं होती । यदि इस जमीनने वारमें
लखाई होगी, तो हम सब साठी उठायेंगे और अकेले पचास
आदमीको मार गिरायेंगे । अगर आप जबरदस्त होंगे, तो

इसका परिणाम चिन्ता है। एक राय ही घाट बचका
 आधान धारम्भ करनेमें आदमी कबतक स्थिर रह सकता है ?
 जो ही, बालक इस समय दूध, भात आदि खाकर मज्जीब हो
 उठा है, देखमें ताकत भी आई है। आकाश फाट पडनेके
 पहले ही मनुष्योंको डर लगता है,—फाट पडनेपर फिर क्या।
 मार खाने या कलङ्कित होनेके पहले ही जो कुछ डर है,—
 मार खा लेने और कलङ्क पैस जानेपर फिर डर कैसा ? घोरी
 का कलङ्क लगनेके पहले रमाप्रसादका जयोजा फटोका उपक्रम
 कर रहा था। रमाप्रसादको घोरीका कलङ्क लगा, नजरबन्द
 रहना पडा,—रमाप्रसादको यह दारण यतथा सचसुच ही
 बहुत काम पड गइ। इस समय रमाप्रसाद मानो आदमी
 है। पहले बल छाटा, मनका कष्ट कम पडा,—फिर रमा-
 प्रसादको देखमें फुकी क्यों ? आयेगी ?

रमाप्रसादको बलवा देखकर वीरभद्रने आनन्दकी सीमा
 न रही। बलिहा देनेके पहले बकरेको चूल्हपुल देखकर,
 धीके आदमी प्रसन्न होते हैं। रमाप्रसाद अन्तक मैला
 कपडा पहने था। वीरभद्रको यह अच्छा न लगा। अपने
 ब्रह्म और शालसे रमाप्रसादको मूर्धित किया। एक कुर्सीपर
 आसन बिठाकर रमाप्रसादको बैठाया। यह मन काम करते
 करते मन्वा हो गई।

रात ही जागेपर वीरभद्र एक दूसरी कोठरीमें एकान्तमें
 जाकर बैठे और खत लिखने लगे। इधर, वध, दह, खीचने
 लगे,—बालकको बचानेका क्या उपाय है ? दुधपीत बच्चोंने
 शिवा समझे बूके भूलसे घोरी कर डाली है,—घोरीका देख भी

लगी है, पर लक्ष्मीतो चमी भूखी है, मैं किस तरह खाऊंगा। अभीतक अनिधिसेवा नहीं हुई, मैं कैसे खाऊंगा।

बालककी ऐसी बातें सुनकर एहने सोचा,—शायद इस लड़केका गिर खराब हो गया है, इसीसे घनाप घनाप बक रहा है। बिना इन बातोंका उत्तर दिये ही एहने कहा,—“जो हो, जब तुम्हें भूख लगी है, तो कुछ खाना उचित है। तुम सुच्छिंत हो गये थे, इससे कमजोर भी पड गये हो। अनिधिसेवा हो चाहे न हो, जान बधानेके लिये तुम कुछ खा सकते हो।”

अब वीरभद्रके पास खबर गई, कि बालक कुछ खाना चाहता है। दिनभर उसके पेटमें अन्न नहीं पडा, कुछ अन्न पडनेसे उसे ताकत होगी। यह सुनकर वीरभद्रने खुशीसे कहा,—“बहुत अच्छी बात है। किसी तरह उसे कुछ खिलवाव्यो, जिसमें वह उठे बैठे, खडा हो और चले फिरे। फिर दारोगाको बुलाकर उसके हाथमें हथकड़ी दिलाकर गिरफ्तार करा देंगे। चोरको दण्ड न देनेसे पाप होता है।”

चोरको सजीव और बलशाली करनेके लिये नाना उपाय उद्घासित होने लगे। वीरभद्रका हृदय उत्फुल्ल हो उठा।

तेईसेवा परिच्छेद ।

बालक रमाप्रसाद अनेक कारणोंसे सुच्छिंत हुआ था। दिनभर कुछ खाया नहीं,—शरीर सन्न सन्न करता था। उसपर शारीरिक चिन्ता, और ऊपरसे चोरोंका कलह। अतमें

आशाकी बात भी उदय हुई।—“अच्छा, सोचो तो सही, ऐसा क्यों हुआ ? वीरभद्रने बालकपर इतनी डाँप क्यों की है ? जो वीरभद्र बालककी मूर्च्छितावस्थाने थोड़ा गर्म दूध नहीं देना चाहता था, उमी वीरभद्रने बहुत छोड़ बालकके भोजाने लिये क्यों प्रवृत्त किया ? भोजाने बाद देखते वन चानेपर जब लडका उठ खड़ा हुआ, कुछ इतर उतर घूमा भी, तब वह देखकर वीरभद्र इतना प्रसन्न क्यों हुआ ? प्रसन्न होकर वीरभद्रने अपने गौकरसे कहा,—“हमारा कपड़ा साकर उसे पहना दे । छाडा देखकर कहा,— शाल भी ला दे ।” यह सबतो दयाने काम है या और कुछ ? छाडेसे लडका कष्ट पावेगा, यही अनुभव करते तो उनी शाल लानेका हुक्म दिया था । यदि बालकके कष्टसे वीरभद्रको कष्ट न होता तो वह शाल लानेकी आज्ञा क्यों देता ? कुछ दया अभाव्य हो हुई होगी, इनमें मन्देह नहीं । केवल दया ही क्यों—मालूम होता है, कुछ प्रेम भी उदय हुआ है । नहीं तो शालकी जाह्नव कम्बल देनेकी अनुमति भी तो दे सकती था ,

“कित्त दया और प्रेम कैसे हुआ ? चोरपर दया करना या उसे प्यार करनानो बोगमनकी जन्मपत्नीमें लिखा नहीं है । मालूम होता है, बालकको निर्दयतासे माथ पीटने हीसे वह लज्जित हुआ है । शायद उनने यह भी सोचा हो, कि प्रहार ही मू हाका कारण था । शायद उनने खाल किया हो, कि धर्मजाती उपयुक्त दण्ड मिल चुका,—अब उसे खिन्ना पितापर छोड़ दे । बालककी कैसी सुदशा है,—आकर्षकविरहित उत्सव्यन नेत्र है,—बालकके हृदयमण्डलपर

प्रायः नीलह आना पा चुका है, पर यदि अब वह दारोगाने सुपुर्द किया जायगा, तो हाजत हीमें मर जायगा,—नीलहू खोचना तो दूरकी बात है। वीरभद्र जैसी प्रकृतिका आदमी है, उससे तो यह विश्वास नहीं-होता, कि वह हमारी बात मानेगा। यदि उसने कडकेको पुलिसके हवाले करनेकी बात ठीक कर ली है, तो मेरी कौन चलावे,—यदि उसके गुरु पुरोहित भी आकर कहेंगे, तो वह कभी सुननेका नहीं।—ऐसे स्थलमें उपाय क्या है? बालकका भाग्य बहुत खोटा देख पडता है। यदि आज दीवानजी होने, तो यह घटना कभी उपस्थित न होती। बालकके भाग्यमें दुःख भोगना वीर पुलिसके पाये पडना लिखा है, इसीसे दीवानजी बीमार होकर घर चले गये हैं। नीलकोठीके भाग्यमें बालकवध लिखा है। इसीसे वीरभद्र आज उसके मालिक है। सब भगवानकी लीला है।

“क्या कोई उपाय नहीं है? हाय। क्या सचमुच ही आज इस नीलकोठीमें नक्षत्रहत्या देखना पडी? किससे कहे—किसके साथ सलाह करे? सलाहक लिये तो आदमी खोजनेपर भी नहीं मिलते। डरके मारे सभी सन्न है। प्रथकी बुद्धि ठिकाने लग गई है। किनीके मुहसे बोलनी नहीं निकलती। कुछ नीलनेपर वीरभद्र आकर कहीं उसे पकडकर यह कहें,—‘मोहर पुरानने तुम भी शामिल हो।’ ताहि मधुसूता। ताहि मधुसूता।—सुचप मा ही मन-मां मत्र कोई यही बात बोल रहे है।”

इस तरह निराशाकी बात सोचते सोचते एकके माने

कारण चलनेकी उननी शक्ति भी न रही। सुतरा दारोगाने आनेमें पहले ही हम कैसे खबर दे सकेंगे ?

“बहुत कुछ सोचनेपर भी कुछ ठीक नहीं हुआ। अच्छा एक काम करा क्या तुम है ? यदि मचसुष ही वीरभद्र दारोगाने बुलानेके लिये चिट्ठी लिख रहे हैं, तो उनसे यह बात कहनेमें हर्ज क्या है ?

“बालक अभीतर अत्यन्त कातर है, बाहर मनल देख पड़नेपर भी भीतर दुर्बल है। ऐसी अवस्थाने यदि दारोगा उसे हथकड़ी पहनाकर आनेमें ले जायगे, तो गह्र हीनें वह मर्च्छित हो जायगा। अतएव आजकी रात दारोगाको बुलानेकी जरूरत नहीं है,—कल मझे दारोगाको बुलाकर इस बधमाश लडकेको गिरफ्तार करा दीजिये। जैसा काम किया है, वैसा ही फल भी भोगे। और यदि यह देखेंगे, कि वीरभद्र व तरुपर दयाशु है, तब तो कुछ बात ही नहीं है।

“वो ही बालकके बचानेकी चेष्टा हम प्रागपणसे करगे। वीरभद्र हमने मोहर घोरका साथी भले ही कहें, पर नव कुछ सहकर हम यातनके बचानेकी चेष्टा करेंगे। यदि हमारे कहनेके सुनायिक वीरभद्र आजकी रात दारोगाके पास खन न लिखे, तो हम चुनचाप रूप धरकर आज ही रातमें अथमे मालिकके पास दौड़कर जायगे और नीलकोठीकी इस भाषण कहातीसे उन्से सुनायेंगे।”

इस तरह मोष विपरकर जिन कोठरीमें बैठे वीरभद्र खन लिख रहे थे, वह उमकी धोर चले।

मानो देवभाव अङ्कित है । ऐसे गौरवर्य बालकको देखकर उस प्यार किये बिना कौन रह सकता है ।

“यदि बालककपर वीरभद्रकी दया और प्रेम उत्पन्न हुआ हो, तो चारो ओर मङ्गल ही है यदि ऐसा न हो, तो उपाय का है ? नीलकोठीमें कानाफुमी सुन पकती है, [कारख खुलकर बोलनेकी शक्ति किमीको नहीं है]—“वीरभद्र दारो गाको बुलानेके लिये चिट्ठी लिख रहे हैं । दारोगाके आते ही चोगको गिरफ्तार करा देंगे, यह ती बड़ी खराब बात है ।

“जो हमारे मासिक है, इस नीलकोठीके एकमात्र अधिकारी है, वह परमहिन्दु एवं दयादाक्षिण्यगुणयुक्त है । अगर किसी तरह इस बातको उनके कानतक पहुँचा सकें, तो बालक छुटकारा पा सकता है । यदि दीवानजीके कानमें भी, इस बातकी भनक पड जाय, तो बालकके बचनेकी विशेष आशा हो सकती है । इन दोनोंने यदि किमीके पास बह सखर पहुँच जाय, तो लडकेको रिहाई मिल सकती है । पर खबर कैसे दे ? और खबर भी पुलिस आनेके पहले ही देना चाहिये । अगर बालक पुलिसके हाथमें पड़ जायगा, तो फिर पुलिस उसे छोटेगी ही । और पुलिस ने हवाले कर दिये जानेपर खबर देनेका फल भी कुछ न होगा । घाना यहासे ही कोस है और उन लोगोंका मगा यहासे कुछ बात कोम है, फिर वीरभद्रके अनेक अनुचर यहा हैं । खत ले जायो,—इतना कहते ही दश आदमी नीरकी तरह धानेकी ओर दौटेंगे, पर हम यहा अर्दके ही हैं । फिर बुढ़ाके

कारण चलनेकी उतती शक्ति भी न रही। सुतरा दारोगाने
आनेसे पहजे हो हम कैसे खबर दे सकेंगे ?

“बहुत कुछ सोचनेपर भी कुछ ठोक नहीं हुआ। अच्छा
एक काम करना क्या बुरा है ? यदि मचमुच हो वीरभद्र
दारोगाको बुलानेके लिये चिट्ठी लिख रहे हैं, तो उनसे यह
बात कहनेमें हर्ज क्या है ?

“वास्तव्य अभीतक अत्यन्त कातर है, बाहर मजल देकर
पहनेपर भी भीतर दुर्बल है। ऐसी अवस्थामें यदि दारोगा
उसे हथकड़ी पहनाकर थानेमें ले जायगे, तो राह हीमें वह
मूर्च्छित हो जायगा। अतएव आजकी रात दारोगाको बुला-
नेकी जरूरत नहीं है,—कल मन्वेरे दारोगाको बुलाकर इस
बदमाश लडकेको गिरफ्तार करा दीजिये। जैसा काम किया
है, वैसा ही फल भी भोगे। और यदि यह देखेंगे, कि वीर-
भद्र व लकूपर दयालु हैं, तब तो कुछ बात ही नहीं है।

“जो हौं, बालकके वचानेकी चेष्टा हम प्रायःप्रथमसे करगे।
वीरभद्र हमे मोहर-चारका साथी भले ही कहें, पर सब कुछ
सहकर हम पालकके वचानेकी चेष्टा करेगे। यदि हमारे
कहनेके सुनाविक वीरभद्र आजकी रात दारोगाके पास खत
न लिखे, तो हम धुपचाप रूप बदलकर आज ही रातमें अ-
पने मालिकके पास दौडकर जायगे और नीलकोठीकी इस
भौषण कछाड़ीको उच्च सुाष गे।”

इस तरह मोक्ष विचारकर गिम कोठरीमें बैठे वीरभद्र खत
लिख रहे थे, वृद्ध उभोकी ओर पल्ले।

चौबीसवां परिच्छेद ।



वृद्धने वहाँ पहुँचकर देखा, कि दरवाजा बन्द है। वृद्धका मन उस समय उत्तेजित था। उन्होंने दरवाजेको ठेलकर झुझ जोरसे कहा,—नायनदीवानगी। एकवार दरवाजा खोलिये। एक जरूरी बात है। उन्होंने भीतरसे जवाब दिया,—“जरा ठहर जाइये। चिट्ठी लिखकर खोलते हैं।”

वृद्ध। जल्द दरवाजा खोलनेकी जरूरत है। बात बहुत ही जरूरी है।

बौरभद्र। इस समय हमें क्या दे दिक् मत कीजिये। आपने साथ बातचीत करने और दरवाजा खोलनेसे मालिककी इजाजत होगी। अतएव आप आधा दण्ड या इससे भी कम देरतक चुपचाप बाहर खड़े रहिये। खत खतम होते ही दरवाजा खोल दोगे।

लाचार वृद्ध चुपचाप बाहर खड़े रहे। चिट्ठी खतम होनेमें आधा दण्ड भी ग लगा। बौरभद्रने दरवाजा खोल दिया। वृद्ध अन्दर जाकर कहने लगे,—“हे धर्मावतार। हे इवामय। क्रोध मत कीजियेगा।”

बौरभद्र। हम क्रोध क्यों करेंगे? भला कहियेतो हम कभी क्रोध करने हैं।

वृद्ध। ना, ना, आप क्रोध क्यों करेंगे? आप उच्चपदन्वय, महासम्मानार्ह व्यक्ति हैं,—आपकी बात हीसे हम लोग

इस जाते हैं,—हम लोगोंको ऐसा मालूम होता है, कि आपने क्रोध किया ”

बीरभद्र । वाह ! वाह ! रहस्य तो खराब नहीं है । इतना कहकर बीरभद्र ही ठी—ही कागजे बिकट हमी हसे, कहा, “कहिये—फिर छोकर कहिये—आपकी जरूरी बात क्या है ? (अरे कौन है रे । दो दरब न अभी आए ।)

उद्ध । उस थोर बालकको ग्राह ही पुलिसके हाथमें डीजियेगा ?

बीरभद्र । हा आज ही—अभी । अभीलिये दरोगा बाबको बुलानेके लिये खत लिखा है ।

उद्ध । कौन मजरे इस चोरको पुलिसके हाथमें देनेसे जोड़े छाति है ?

बीरभद्र । बहुत छाति है ।—घरमें चोरको कैसे रजे ? मानिक सुंगे, तो क्या कहिये ? ओ चोर दिनें मोघर घुरा सकता है, यह रातें को सुखाय नहीं दर सकता ? विशेषेण इस नीलमोठोका रजाका भाग हमारे ऊपर है । यह हमारा अपना घर नहीं है । यदि अपना घर होता, तो आपकी बात मान लेते—यह तो दूसरका घर है । आप हम उम्मी करते घरके रक्षक हैं । जब चोरको पुलिसके हाथों करवा ही होगा, तो फिर दिन और रातके विचारकी बात ध्याव्यकता है ?

उद्ध । ऐकित्वा बात यह है, कि यह बदमाश लडका अभी कमगोर है । आपकी सेवा सुतुग तथा भोग्यसे हथ छोकर यह बजरान हुआ है नहीं, पर अभीतक पहल कमगोर है ।

दागोगाते हाथमें पट्टीके बाद यदि राहमें वह भ्रूक्षित हो जाय और गिर पड़े, तो अनेक विभाट उपस्थित हो सकते हैं।

वीरभद्र। हमारे हाथसे चौरके पुलिसके हाथमें चले जानेपर हम निश्चित हो जायगे। हमारा काम यही काम हो जायगा। हमारे हाथसे पुलिसके हाथमें चले जानेवाला वह भ्रूक्षित हो जाय, गिर पड़े, सुंदरसे खुद उगरे या एकदम मर ही जाय, हमें क्या ?

दुन्दुबे मन ही मन कहता,—“बाप रे बाप ! वीरभद्र का क्या रहता है ?” फिर रत्नकर कहता,—“क्या लड़केको पुलिसके हाथमें दे देने चाहे आपका काम समाप्त हो जायगा ? या आपका तलकाली प्राणरक्षा करना कर्तव्य नहीं है ?”

वीरभद्र। है। पुलिसके हाथमें दे देने ही से काम समाप्त नही होगा। जबतक उपयुक्त प्रमाणकी सहायतासे चौर लड़केको अगस्त छः महीनेके गिये जेलकी हवा न खिलायें, तबतक कर्तव्य कर्मका श्रेय न होगा। चौर ब्राह्मण बालकको प्राणरक्षाकी बात जो आप कहते हैं, उसमें हमारा कर्म-विचार ही क्या है ? जो दुर्बल होगा, वही पछले मरेगा। ब्राह्मणका तबका चौर निकलनेपर दण्ड न पावे अथवा मरे नहीं,—ऐसी बात तो शास्त्रमें कहीं लिखी नहीं है। चोरी करके गिर भोयी भी चोर है और ब्राह्मण भी चोरो करनेपर चोर ही है। अंक, तिलक और पुटिया चोरीका दोष नहीं दूर कर सकते।

दुन्दुबे। रमाप्रसाद ब्राह्मण है, यह बात छोड़ दीजिये।

नहीं। दया किसे कहते हैं ? वृद्ध हम किनी तरह ठीक नहीं कर सकत। मातर्लाजिवे, एका आश्रमो आपकी नाक काटे लिये जाता है, आपने उसे मादर करा,—भित्त। ठहरो, ठहरो,—आगो, बैठो,—एक चिलन तन्माशू पिश्री। अगर बायोगे ही, तो कुछ बलपान कर लो। इतना बहुर व्याप उम नाक काटनेवालेकी पीठपर हाथ फेरने लगे। क्या इनका नाम क्या है ? अथवा इसे प्रागलपा या ग्रहमकपन बहुर है ? अच्छा, यदि आप हमें ठीक समझा नसे, कि चौर लडकेकी रातके वक्त नीलकोठीमें रखेसे कर्नेय कर्मका कोई सुटि न होगी, तो आपकी गत हम उन चौरकी नीलकोठीमें रख सकते हैं।

वृद्ध। (हाथ जोडकर) आप उद्दमदम्य और हमारे मालिक हैं।—हम अति क्षुद्र और आपने अधीनस्थ बर्तनकारी हैं। सुनरा पटाजुवाद करते आपकी समझानेमें हम असमर्थ हैं। दया दासिसवजी बात जाने दीजिये, केवल यदि वृद्धी बात मान ग,—वृद्धता अतुरोध ग्रहण करे ग,—यह संचकर बालकरी नीलकोठीमें रहने हैं—तो और कोई बात हम नहीं कहेंगे।

वीरभद्र। यह कैसी उच्छ्रो बात हुई, हमारे समझमें कुछ भी न आई। आप वृद्ध हैं,—अतएव आपकी बात मानना पड़ेगी,—इसका अर्थ हम समझ नहीं सने। इस गावमें व्यक्तः सौ ठठे होंगे,—हम कोई काम करनेको उद्यत हुए,—उन्हीं समय गावके एक वृद्धने आकर कहा,—हमारी बात माना होगी,—आप इस सङ्घल्पित कामको न करने पाव गे,—इसी

तरह व्यो ही कोइ काम करी लगेगे, कि गांवका कोइ वृद्ध याकर कहेगा,—“आप यह काम नहीं करने पावंगे,” वृद्धको बात माननेमें हमे नाकरी, कपड़ा चोर देश होडकर भागना पडेगा ।

वृद्ध । हम चुप हुए ।—आपकी बातका जवान देनेकी ताकत हमे नहीं है । जो आपका इच्छा हो, कोनिये । चुद्र — पलवानसे मदैय परानित है ।

वीरभद्र । आपकी अन्तवाणी बात ठीक है, किन्तु यहाँ चुद्र पलवानका उदाहरण नहीं लगता । माजिककी भगाइके लिये आपके साथ इस मामाय विषयके बारेमें पागवितष्ठा करने हमने आधा दूक बिताया है । क्या करान युक्ति युक्त एव आप है, इस बारेमें दोनो आदमियोंसे खूब वागयुद्ध हुआ है और इस विषयकी सूक्ष्मभावसे पर्यालोचना भी खून हो चुकी है । अन्तमें आपने हार मानी और कहा, कि हमे उत्तर देनेकी शक्ति नहीं है, सुतरा चुद्र पलवानकी उपमाका सामर्थ्य कहा रहा ?

वृद्ध कुछ धोल नहीं मने,—वीरभद्रके चेहरेकी चोर देख भी नहीं मने । उदाम होकर वीरे धीरे बहसे चले आये ।

हुक्मके मुताबिक दो दरवान हाथ जोडे दरवाजेके पास खडे थे । वीरभद्रने उन लोगोंसे कहा,—“घानेके बान्धो । दामेगाजीको यह खन देना और उहें अपने साथ लेते आना ।

पञ्चीषवा परिच्छेद ।

अभी रातके आठ भी नहीं बजे थे, कि दारोगाजी टावल सहित नीलमोठीमें आ पहुँचे। दारोगाके आते ही उस नीलकोठी-प्रदेशमें मानो महामहापाटकका महामहाभिनय होने लगा। व्यापार शुरुचोत्र या लङ्काकाण्ड है,—यह समझनेकी ताकत किसे है ? शुभमिशुभका अभिनय है, कि दक्ष यज्ञका अथवा मधुकैटभनयका—सो किस तरह कहें ? भक्त्यनो नहीं है। अथवा व्याकाशके टूट पडनेका उपक्रम है ? छवारी ऐरावत तो पागल होकर इपर इधर दौड नहीं रहे ?

क्या हो रहा है, सो हम नहीं जानते। कुछ आदमी डकैतकी तरह चिन्ता रहे हैं। एक ठल कमर कसकर कर्ने पर लाठी धरे दौड रहा है। पाच भात आदमी बात करते करते भागडने लगे है। कोई कूटकर गिर पडता है। कोई बडे चोरसे 'बाप रे बाप !' कहकर व्याकाशको गूज देता है। कोई 'भाई ! जय मा दुर्गे ! कहो,' कहकर कलानाबी कर रहा है। कोई विवाट हमरी हसकर दीवारमें मुजा रगड रहा है। दरपोक लोग माला लेकर इन्धरका नास जप रहे हैं। कौन किम्बकी पकडकर बाप्रे लिये जाता है, मो कुछ ठीक नहीं। कोई किमीकी छातीमें लात मार रहा है। चोट खानर सोइ, जमी पर गिर रहा है। न्यरे ! देख, देख ! कानुआका घर जगमगाता है। बहुतसे आदमी बहा पडु चकर

गौ डाल डालकर व्याग जुम्हा रहे हैं। कुछ आदमी गोआ-
 णोंके छप्परपर चढ़कर छप्पर काट रहे हैं। भोदोकी दूकानमें
 टक्यों मची हैं ? घी, चावल, आटा,—जो जाग पाता है
 नये भाग जाता है। मोमरा चमारके गालमें थप्यड भारदार
 गेड उमका रखी होने लिये जाता है। हलवाईकी बड़ी
 मोहन दौडकर किवाड क्यों लगा लिया ? हो हो हस्ता
 आते हुए पाच सात आदमी हलवाईका दरवाजा क्यों ठोक
 रहे हैं ? गोवर्द्धन मल्लाहका गाल छीनकर उमका दोनो बान
 कडे कौन लिये जाता है ? मन्नू किमान घा बूटकर दिा
 गटता है,—उमकी टेनी उखाडकर एक विकटाकार पुख्य
 से अपने कन्धपर धरे लिये क्यों आता है ? रामलालका
 क बोरा महीन चावल एक आदमी शिरपर उठाये चला
 जाता है। रामलाल रोते रोते उमके पीछे क्यों आ रहा है।
 छोटे छोटे लडके लडकियोंके रो उठनेपर, "बेटा। रोवो मत।
 रोगाजी आते हैं। पकड ले जायगे"—यह कह कह कर
 जाता घनेको क्यों चुपकर रही है ? रोते हुए बच्चेको (स्तापान
 घना कराये) मुलानेका सुविधा सुत्य क्यों हुआ ? क्यों और
 कैसे रोमा हुआ, भी ठीक ठीक कैसे कहें ? तब दारोगाको
 गेलकोटीने आविर्भूत हुए हैं,—आजकी नई घटना यही है।
 और एक गद्द बात यह है, कि इस पूरा महीनेके आखिरेमें देखते
 देखते नभोजगल नवमेघमालामें पूर्य हो गया। घोर लघेरी
 छा गई। हवा जोरम चलने लगी। टिप टिप पाणी बरसने
 लगा।

मारोगा माहव जाते ही बीर द्रष्टे फुल मङ्गल फुडकर

दीले,—“ओ । कैम भरद्वार वात है । आपकी नीलकोठीमें मोहरकी चोरी।—देखता हूँ, यह तो अराजक ही उठा कहते हैं वा ?—मोहरकी चोरी ? सचमुच ही नीलकोठीमें मोहरकी चोरी ? ओ !”

वीरभद्र । सचमुच ही चोरी हुई है । मालिक सुनें, तो क्या कहेंगे, केवल यही विचार रहे हैं । जो स्वप्नमें भी समझ मथा आज वही नीलकोठीमें हुआ ।

दारोगा । यह चोर कहा है ?—कित्त कैसी है ?

वीरभद्र । बगलकी कोठीमें है ।

दारोगा । हाथमें हथकड़ी और पैरमें बड़ी डाली गई है ?

वीरभद्र । नहीं ।

दारोगा । ओहो । सर्वनाश कर डाला । उस चोरको आप अभीतक नहीं पहचान सके हैं । मौका पाते ही दीवार फाड़कर वह निकल जायगा । (जमादारसे) सुनो जमादार ! गावमें जितने चौकोदार और चुहाड है,—वह सब कन्धेपर काठी रखकर आजकी रात इस नीलकोठीको घेर रखे और तुम उनपर गिगाह्वानी रखो ।

जमादार “तथास्तु” कहकर चला गया ।

वीरभद्र । आपने नीलकोठीको घेर रखनेका बन्दोबस्त किया सो अच्छा ही हुआ है । हम भी निश्चिन्त नहीं हैं । चोरको नजरबंद कर रखा है । चार भणगूत ग्यादमियोंको उसकी चौकसौके लिये सफर कर रखा है । वीरभद्रने पञ्जिसे चोर किसी तरह निकल नहीं सकता । आप निश्चिन्त रहिये ।

पश्चिममें ह्ययंका उदय होना सम्भव हो सकता है, पर गोल कोठीसे चौरका भाग जाना किसी तरह सम्भव नहीं हो सकता । चौर हमारी नदोंमें है । किसकी ताका है, कि हमारी इस वषण्टुष्टिकी खोले ?

दारोगाजी हमने लगे । उन्होंने कहा,—“सिद्धजी । आप धन्य है, मैं नहीं जानता था, कि आपने चौरको इस तरह णकठ रखा है । चौर बडे ही धूर्त होते हैं, यहीं समझकर हमने घरको घेर रखनेका बन्दोबस्त किया है, पर आपकी तीक्ष्णबुद्धिसे सामने चौरकी धूर्तता कहां चल सकती है ? बुद्धि, विवेचना, वल एव कौशलमें आपकी बराबरी इस देशमें कौन कर सकता है ?”

दोनो आदमियोंका प्रेम इस तरह गाढतर होने लगा । जब प्रेम गाढतर हो उठा, तब बीरभद्रने दारोगाजीसे कहा,—“जब अनुग्रह करके आम नीतकीठीमें आवें हैं,—रात भी बहुत वा चुकी है,—तब क्या आप सबका यहाँ भोजन करना अच्छा नहीं है ? सब कुछ तय्यार है । एक घण्टेमें रसोइ तय्यार हो जायगी ।”

दारोगा । जब आप कहते हैं, तब कोइ आपसि नहीं, पर सुइइके यहाँ खाना कोइं कोइं मना करते हैं । आप भखे आदमी हैं । आपकी बात टाक देना धर्मविरुद्ध होगा ।

बीरभद्र । सुइइं हम नहीं मने गे, चौर यदि हमी होते, तो भी दोष न था । आज हम निर्द्वं गवाह हैं । विशेष करके मोहरके मालिक हम तो नहीं हैं,—मोहरके मालिक हमारे

स्वामी हैं। सिखाते हैं हम,—गजाहके घर खानेमें कोई शेष है या ?

दारोगा। कुछ भी नहीं। शेष रहना तो दूर रहे बरख खाना ही उचित है। कारण, साचीजे साथ भोजन करते करते अनेक गुण्यतायके भाखूम होनेकी सम्भावना रहती है। एकवार ज्यों, आपने साथ में मौ बार खा सकता हू। आप हूए—इस देशके प्रधान शक्ति। रोज जी खाता हू वह आप हीका तो खाना हू,—यह कहनेमें कोई शेष नहीं है। अच्छा, जाने हीजिये यह बात, सुहृद कौन होता है ?

श्रीरामदास। खजाण्डीसाहब,—जिनके जिम्मे मोहर रहती है।

दारोगा। वह खूब चतुर है तो ? यदि खजाण्डीजी इज हारमें गोलमाल करेगे, तो सब मझी हो जायगा। उन्हें अच्छी तरह सिखा पठा रखा है तो ?

श्रीरामदास। नहीं, पर उन्होंने सारी घटना अपनी आँखों देखी है। और जो कुछ सिखाया होगा, आपकी सलाहसे सिख दंगे।

दारोगा। अच्छा, अच्छा, बहुत अच्छा किया है। मैं सबसे पहले उन्हें सिखा पठाकर तय्यार कर लूंगा। उनके बाद, वह हमारे सामने इजहार दंगे। और और गवाण्डीकी भी सिखाया चाहिये। भोजनके बाद सबको बुलाकर सबको सिखा पठाकर तय्यार कर दूंगा, फिर मारापारी सब इजहार लिख लूंगा। घटना सब होनेपर भी अशासकमें गवाही देना

बड़ा कठिन काम है । भूठी गवाही देना बख्ति सख्त है, किन्तु सधी गवाही देना बहुत कठिन है ।

दारोगाजीके लिये गडगडा व्यापहु था । फुरमीपर बैठे बैठे दारोगाजी तम्बाकू पीने लगे । तम्बाकूके नशेमें कहा, चोरको मैं देखना चाहता हूँ—उसे ले आइये । अच्छा सिद्धनी । चोरको ध्यतक छोटा क्यों रखा है ? काटकर टुकड़े टुकड़े क्यों न कर डाला ? नीलकोठीमें मोहरकी पोरी । किसके दो शिर हैं, निम्ने इस कामके करनेमें साष्टक दिखाया है ?

बीरभद्र । मारपीट ज्यादा नहीं हुई है । पहली ही पीटमें वह मूर्च्छित हो गया था, वृद्धे कष्टसे उसे होशमें लाये हैं, फिर उसे खिलापिठाकर उमकी देहमें बलका सञ्चार किया है ।

दारोगा । मुझे चोरको देखनेकी बड़ी इच्छा है । उसे जकड़ मगाइये ।

बीरभद्रने पहले नीकरको एक फुरमी लानेकी कहा ।

दारोगा । चोरको फुरमी क्यों ? मालूम होता है, यह बहुरूपी है । आप खोर्गोको उसने सुलावेमें डाल रखा है ।

बीरभद्र । वैसा चोर नहीं है, यह चोर लयणीयी है ।

दारोगाजीने हसकर कहा,—यह चोर बहुत माया जागता है ।”

देखते देखते नया कपडा पहने और सफेद शाल छोड़े चोर फुरमीपर ध्या बैठा । दारोगाजी कितना ही पूछते हैं, पर चोर कुछ जवाब नहीं देता । कभी भय दिखाकर, कभी

दुलार करके और कभी काकूति मिनती' वारके दारोगानीने चोरने बोलानेकी चेष्टा कौ, पर दुरत चोरने उत्तर नहीं दिया। सिर्फ चोरको दोनो धांखोंसे आसूकी झडी लग गइं, चन्तने दारोगानीने कइया,—“यह चोर है मही, पर भायावी चोर है। किस बहाने टगने ब्याया है, सो नहीं जानते। ऐसा दुष्णव अभेद्य चोर मैने कभी नहीं देखा।”

वीरभद्र विकटस्वरसे अट्टहास कर उठा दारोगानीका कि रिच भनभन निनाद कर उठा। चौकीदारोंने पीत्कारसे आकाश फट गया। छण्यपक्षकी अ घेरी रात चोर अंघेरी झोगइं। विणकी चमक उठी। गड गड गड गड़ मेघ गर्जन लगे। नाजक रमाप्रसाद कुछ सुन न सका और कुछ देख भी न सका। उसका गला बन्द है, अन्तर नीरव, अघनी नीरव,—उसका यह विश्वससार—यह चतुर्दश सुवन आण नीरवतासे परिपूर्ण है।

छन्वोसवा परिच्छेद ।

रात्रि प्राय एक पहर जा चुकी है। छण्यपक्षकी चतुर्दशी है। आकाशमें मेघ देख पड़ने लगे हैं। बीच बीचमें टप् टप् पानी भी पड़ता है। मेघमहाराजकी गोदमें बैठकर सौदा-मिनी महाराणी कभी कभी कुछ हस देती है।

पृथ्वीके मेघरूपी मोटे काले कपडेके धानसे छिपनेपर भी
गाढा खूब है। पूस महीनेकी कनकनी, घरसे बाहर निकल
की छिम्मत किसे है। जगत वर्षकी भांति ठज हो रहा
है। धान गर्मागर्मे सुनी खिचडी खानेके बाद अश्वनेके
बमय ही विपद है। अश्वनेके डरसे कितने आदमी धान
गायद भोजन ही न करेंगे। धानका मामला ऐसा ही है।

एक पहर रात और भी बीत चली। देहातमें ऐसे जाड़ेमें
कौन जागता है? तकियापर शिर रखे, रजाइसे सह
छिपाये,—और कोई रजाइपर रणाई और कम्बलपर कम्मल
बोढ़े सो रहे है। कविलोग कहते हैं, प्रेमी और प्रेमिका
तथा चोर डकैतके जागनेका यही अच्छा समय है। ऐसे
जाड़ेमें यहलोग जागते हैं, कि नहीं, सो हम नहीं जानते
एव जागनेपर भीरुनकी व्यवसायवृत्ति अच्छी तरह चलती है,
कि नहीं, सो भी नहीं समझ पड़ता। सुनी हुई बात
लिख ही।

देहातोंमें अभी सप्ताटा छाया हुआ है। सियार बोले
थे, कि नहीं, ठीक ठीक कैसे कहें? ऐसा सुना है, कि सियार
बोते हैं कम। इसीलिये मनुष्य तथा अन्याय्य पशुव्योंके सो
जानेपर अर्थात् देहातमें सप्ताटा छा जानेपर, यही चिरप्रथा
ब्रयायी लिखना होगा, कि सियार बोल रहे है। इसी
से और लिखते है, कि सुग्घू बोल रहा है। हवा
चल रही है। हथगव भुक भुककर एक प्रकारका
कर रहे है। भिङ्गी भनकार रही है। पत्तोंपर
पड़नेकी आवाज सुनाई देती है। चौकीदार पिटा ।

पृथ्वीके मेघरूपी मोटे काले कपडेके घासे छिपनेपर भी भाग्य रूप है। पूम महीनेकी कनकनी, घरसे बाहर निकलनेकी हिम्मत किसे है। जगत वर्षकी भांति लज हो रहा है। आज गर्मागर्मा सुनी खिचड़ी खानेके बाद ज चबनेके समय ही विपद है। ज चबनेके घरसे कितने आदमी आज शायद भोजन ही न करेंगे। आजका मामला ऐसा ही है।

एक पहर रात और भी बीत पक्षी। देहातमें ऐसे जाहेंमें कौन जागता है? तकियापर शिर रखे, रजाइंसे मुह छिपाये,—और कोई रजाइंपर रजाइं और कम्बलपर कम्बल ब्योढ़े सो रहे है। कविलोग कहते है, प्रेमी और प्रेमिका तथा धीर उकैतके जागनेका यही अच्छा समय है। ऐसे जाहेंमें यक्षलोग जागते है, कि नहीं, सो हम नहीं जानते एवं जागनेपर भोऽहनकी शकमायदति अच्छी तरह चलती है, कि नहीं, सो भी नहीं समझ पडता। सुनी छुई यात लिख ही।

देहातमें सभी सम्राटा ह्याया हुआ है। सियार बोले थे, कि नहीं, ठोक ठोक कैसे कहें? ऐसा सुना है, कि सियार बोते है कम। इसीलिये मनुष्य तथा अन्यथा पशुव्योके सो जानेपर अर्थात् देहातमें सम्राटा ह्या जानेपर, यही चिरप्रथा उपायी लिखना होगा, कि सियार बोल रहे है। इसी कारण से और लिखते है, कि सुग्घू बोल रहा है। हवा सन् सन् चल रही है। हवागय भुक भुककर एक प्रकारका शब्द कर रहे है। भिङ्गी अनकार रही है। पत्तोंपर पानी पडनेकी आवाज सुनाई देती है। चौकीदार पिछा रहा है।

एक बृद्ध अफीमची तक्रियापर शिरधरे आग सुलगाता और तमाकू भरकर गड गड हुआ पी रहा है। एक बच्चा सोइ हुई माका स्नानपान करनेके लिये रो रहा है। इसके ऊपर बीच बीचमें मेघ गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर झनाटा छाया है। हाथीसे कुचलवानपर भी अरवगीको रुझा होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाघूम महा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीकी चारो ओर शोशणी हो रही है। हप् हप् मशाल जल रही है। प्रायः चौकीदार कमर कसे नीलकोठीको घेरे पड़े हैं। यहाँ भी शान्ति विराण रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकड़ा" यह कहकर चिंताते हैं और बीच बीचमें आपसमें लड भागडकर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराणती है। केवल दारोगाजीके लिये मांस बन रहा है, पूरी वगानेकी तयारी हो रही है। रसोई बानेवाले ब्राह्मणको अतिरिक्त 'गांजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे वह विकट चीत्कार कर उठता है,—"हम कल ही येभी नीकरी छोडकर चले जायेंगे।"

जहा दारोगाजी किरिच लगाये सणधधसे बैठे थे एवं प्रकाण्डकाय ह्य्यावर्ण वीरभद्र दारोगाको दाहिनी ओर चौकीपर काँचे मकरधर उड़के हुए हैं, जहा भी कुछ शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रकी आवाज चार योमत्तक सुन पडती है, पर ध्यान वह धाठ कोमकी रखर खेती है। 'उन हा—हा—हा विकट धमीसे मझाड़ गिरते हैं,

कभी त्रीघाति नवकखरवसे भूकम्प होता है, कभी अखकी
भङ्गार, घाटीके ठक्ठक् शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें डर
पेश करती है। होता है घन, घटना है मन,—पर अक्षणी
गौरव है।

अक्षणीकी गौरवता सर्ववादिसम्मत है, कि गच्छीं, सो नहीं
जानै। किन्तु सत्तरह वर्षका एक मोरा बालक या युवक
निश्चय हो चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है। युवक शुभवस्त्र
धारण किये है। धरौरपर साप अङ्गरखा घौंग उसके ऊपर
शाल है। पैरमें गया जूता है।

यह दुलहा है क्या ? क्या बरातकी सय्यारी हो रही है ?
पुलिस क्या आगिरायाके लिये साथ जायगी ?

बर होनेसे ही चुप रहना पडता है। चोर होनेपरभी
अनेक समय चुप रहना होता है। युवक बर है, कि चोर ?
बढ़ न तो बर है और न चोर ही है,—अथवा युवक चुप है।

चुप हो, पर युवककी धाँसोंसे धाँस क्यों चल रहे है।
धाँस चलें, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर
नहीं देता ? चुप करनेपर रोना और तेज क्यों पड जाता
है ? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या ?

युवकतो हमारा बही रमाप्रसाद नहीं है ? बेहरानो
बैठा हो है, पर ऐसे अच्युते कपडे उसे कहाँ मिले ? आग
कहाँ पाया ? मोहर चोरकी गया गलत देकर किन्तो उसकी
पूजा की ? ऐसी अच्युती झरसी देकर किन्तने उसकी अन्वेषणा
की ? युवक यदि बोलता, तो उसकी अन्वेषण पदचानकर कहते,
कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं !

एक दृष्ट अफ्रीमचो तकिवापर शिरधरे व्याग मुलगाता, और तम्बाकू भरनार गड गड हुंसा पी रछा है। एक बघा सोई हुई माका स्तनपान करनेके लिये रो रहा है। इसके ऊपर बीच बीचमें मेघ गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर रुन्नाटा छाया है। हाथीसं कुचकवानपर भी अचगीको रुन्ना होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाधूम मघा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीकी चारो ओर रोशनी हो रही है। दप् दप् मशाल जल रही है। प्रायः चौ चौकीदार धमर कसे नीलकोठीको घेरे पछे हैं। यहाँ भी शान्ति विराज रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकड़ा" यह कहकर चिन्ताते हैं और बीच बीचमें आपसमें लड भगडकर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराजती है। केवल दारोगाजीके लिये मांस बन रहा है, पूरी दगानेकी तय्यारी हो रही है। रसोइ बानेवाले प्राण्यको अतिरिक्त गांजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे यह विकट चीत्कार कर उठता है,—“हम कल ही ऐसी नीकरी छोडकर पछे जायेंगे।”

जहाँ दारोगाजी किरिच लगाये सन्नधधसे बैठे थे एवं प्रफाउकाय हण्यवर्य वीरभद्र दानेगाको दारिणी और चौकीपर काले मसनदपर उठके छुए हैं, वेशा भी इन्हें शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रको चावाण चार कोमतक भुन पडमी है, पर ध्याण यह ध्याठ कोसकी लवर लेती है। उन हा—हा—हा विकट पक्षीसे पहारु गिरते हैं.

कभी क्रोधाति नवकण्ठरवसे भूकम्प होता है, कभी अथकी भङ्गार, गाठीके ठक्, ठक् शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें छर पेरा करती है। होता है सय, घटना है सब,—पर अन्ना गोरव है।

अन्नाकी गोरवना सर्ववादिसम्मत है, कि नहीं, मो नहीं जानने। किन्तु मत्तरह वर्षका एक गौरा बालक या युवक निश्चय हो चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है। युवक शुभवस्त्र धारण किये है। शरीरपर साफ अङ्गरखा धीर उसके चपर शाल है। पैरमें गया छूता है।

यह दुलहा है क्या ? क्या दरातकी तयारी हो रही है ? युक्ति क्या शान्तिरक्षाके लिये माघ जायगी ?

वर होनेसे ही चुप रहना पडता है। चोर होनेपरभी अनेक समय चुप रहना होता है। युवक वर है, कि चोर ? यह न तो वर है और न चोर ही है,—अथच युवक चुप है।

चुप हो, पर युवककी आंखोंसे आंसू क्यों चल रहे है। आंसू चलें, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर क्यों नहीं देता ? चुप करनेपर रोना और तेज क्यों पड जाता है ? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या ?

युवकको हमारा वही रमाप्रसाद नहीं है ? चेष्टाराले बेया ही है, पर ऐसे अन्के कपडे उसे कहां मिले ? शाल कहां पाया ? मोहर चोरको गया वस्तु देकर किसने उसकी पूजा की ? रेनी चन्ही गारसी देकर किसने उसकी अभ्यर्चना की ? युवक यदि बीजता, तो उसकी अवाज मरचाकर कहने, कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं।

एक वृद्ध बफीमचो तकियापर शिरधरे व्याज मुलगाता और तन्हाकू भरकर गड गड हुका पी रहा है। एक बच्चा सोई हुई माका स्नानपान करनेके लिये रो रहा है। इसके ऊपर बीच बीचमें मेघ गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर सन्नाटा छाया है। हागीसे कुचरावानपर भी अबगीको सजा होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाधूम महा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीकी चारो ओर रोगी हो रही है। दप् दप् मशाल जल रही है। प्रायः चौ चौकीदार कमर कसे नीलकोठीको घेरे पड़े हैं। यहाँ भी शान्ति विराज रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकड़ा" यह कहकर चिंताते हैं और बीच बीचमें व्यापसमें लड भगडकर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराजती है। केवल दारोगाजीके लिये मान वन रहा है, पूरी वगानेकी तय्यारी हो रही है। रसोई बानेवाले ब्राह्मणको अतिरिक्त गांजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे वह विकट चीत्कार कर उठता है,—“हम कल ही ऐसी नौकरी छोडकर चले जायेंगे।”

जहाँ दारोगाजी किरिच खगाये खपखपमे बैठे थे एवं प्रकाशकाय कृष्णवर्ण वीरभद्र दारोगाजी दाहिनी ओर चौकीपर काले मगनदपर लफ्फे हुए हैं, वहाँ भी झूठ शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रको आवाज पार कोसनक सुन पडती है, पर आज वह पाठ कोसकी खबर देती है। उन हा—हा—हा विकट हनीये पहाड गिरती हैं,

कभी क्रोधाति न्यकच्छरवसे भूकम्प होता है, कभी अस्त्रकी भङ्गार, शाठीके ठक्, ठक् शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें छर पेदा करती है। होता है सप, घटना है सब,—पर यही गौरव है।

अमीकी गौरवता सर्ववादिसम्मत है, कि नहीं, सो नहीं जानते। किन्तु अन्तरङ्ग धर्मका एक गोरा बालक या युवक निश्चय हो चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है। युवक शुभवस्त्र धारण किये है। शरीरपर साफ अङ्गरखा और उसके लपर शाल है। पैरमें गया जूता है।

यह दुलहा है क्या ? क्या दरातकी तय्यारी हो रही है ? पुलिस क्या आगिरवानके लिये साथ जायगी ?

बर होनेसे ही चुप रहना पड़ता है। चोर होनेपरभी अनेक समय चुप रहना होता है। युवक बर है, कि चोर ? बर न तो बर है और न चोर ही है,—अथवा युवक चुप है।

चुप हो, पर युवककी आँखोंसे आँसू क्यों चल रहे हैं। आँसू चले, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर नहीं देता ? चुप करनेपर रोना और तेज क्यों पड जाता है ? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या ?

युवकतो हमारा यही रमाप्रसाद नहीं है ? चोहरानो बेघा हो है, पर ऐसे अच्छे कामके उसे कहां मिले ? शाल कहां पाया ? मोहर-चोरकी गया बख्त देकर किमने उसकी पूजा की ? ऐसी अच्छी डुरमी देकर किमने उसकी अभ्यर्चना की ? युवक यदि बोधता, तो उसकी अवाज पद पाठकर काहते, कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं ।

एक वृद्ध अफीमचौ तकियापर शिरधरे घाग सुलगाता और तन्माकू भरकर गड गड हुंका पी रहा है। एक बच्चा सोई हुई माका स्नान करानेके लिये रो रहा है। इसके ऊपर बीच बीचमें भेष गर्जना है। किन्तु पृथ्वीपर रुताटा छाया है। हाथीसे कुचलवानेपर भी अवगीको संज्ञा होती है, कि नहीं इसमें सन्देह है।

पृथ्वीपर शान्ति रहनेपर भी नीलकोठीमें महाधूम मशा समारोह व्यापार उपस्थित है। कोठीकी चारो ओर रोशनी हो रही है। दूप् दूप् मशाल जल रही है। प्राय यौ चौकीदार कमर कसे नीलकोठीको घेरे पड़े हैं। यहां भी शान्ति विराज रही है। चौकीदार केवल "यह आया," "यह गया," "यह पकड़ा" यह कहकर चिन्ताते हैं और बीच बीचमें आपसमें लड भागडकर मारपीट करनेपर उद्यत होते हैं।

नीलकोठीके अन्दर भी शान्ति विराजती है। केवल दारोगाजीके लिये मांस बन रहा है, पूरी यमानेकी तयारी हो रही है। रसोई बगानेबाबे ब्राह्मणको अतिरिक्त गाजा नहीं मिला, इसीसे बीच बीचमें क्रोधसे वह विकट चीत्कार कर उठता है,—“हम कल ही ऐसी तीकरौ छोडकर चले जायेंगे।”

जहां दारोगाजी किरिच लगाये सज्जधसे बैठे थे एवं प्रकाशकाय क्षणवर्ष वीरभद्र दारोगाको दाहिनी ओर चौकीपर कावे मसनदपर उफूके हुए हैं, वहा भी शुद्ध शान्ति विराजती है। लोग जानते हैं, कि वीरभद्रको आवाज चार कोसतक सुा पडती है, पर आण वह पाठ कोसकी खबर लेती है। उस हा—हा—हा विकट हसीसे पहाड गिरते हैं।

कभी प्रीयाति न्यकखरवसे भूकन्म होता है, कभी अखकी भङ्गार, छाठीके ठक्ठक् शब्दसे मिलकर कायरोंके दिलमें छर पेदा करती है। होता है सन, घटना है सब,—पर अर्था गौरव है ।

अर्थाकी गौरवता सर्ववादिसम्मत है, कि नहीं, सो नहीं जानते । किन्तु सत्तरह वर्षका एक गौरा बालक या युवक निष्कय हो चुप है, यह सर्ववादिसम्मत है । युवक शुभवस्त्र धारण किये है । शरीरपर साफ अङ्गरखा धौंग उमके लपर शान है । पैरमें गया जूता है ।

यह दुलहा है क्या ? क्या दरातकी तय्यारी हो रही है ? पुलिस क्या शान्तिरक्षाके लिये साथ जायगी ?

बर होनेसे ही चुप रहना पड़ता है । चोर होनेपरभी अगिक समय चुप रहना होता है । युवक बर है, कि चोर ? वह न तो बर है धौर न चोर ही है,—अथच युवक चुप है ।

चुप हो, पर युवककी आँखोंसे धाँस क्यों चल रहे हैं । धाँस चलें, कोई बात पूछनेपर,—चेष्टा करनेपर भी, युवक उत्तर क्यों नहीं देता ? चुप करनेपर रोना धौर तेज क्यों पड जाता है ? युवक बहुरूपी अथवा मायावी है क्या ?

युवकतो हमारा वही रमाप्रसाद नहीं है ? चेहराले बेधा ही है, पर ऐसे अच्छे कपडे उसे कहाँ मिले ? शाल कर्ता पाया ? मोहर धौरको गया बख्त देकर किसने उसकी पूजा की ? ऐसी अच्छी झुरसी देकर किसने उसकी अभ्यर्थना की ? युवक यदि बोलता, तो उसकी अवाज पदचानकर कहते, कि युवक रमाप्रसाद है, कि नहीं ।

सत्ताईसवा परिच्छेद ।



रात अंधेरी थी। दारोगा माहदका आशर उत्सव बड़े समारोह और प्रसन्नतासे समाप्त हुआ। पूनकी रात प्रायद दीपधर बीत चुकी है। धाल श्रीमती नीलकोठीको निद्रा नहीं है। अलोक पुष्पसे केश बांध, आलोकमालासे बस विभूषित तथा आलोकमेखलासे गितम्ब सुशोभित करके है नीलकोठी सुन्दरी। तुम चाप मधुर व्यधरसे इतना मृदु मृदु क्यों हम रहनी हो ? इतना उज्ज्वलित, इतना उत्तमज्ञ हृदय क्यों ? नभाररूपी रङ्गभूमिमें मानव महानाटकका महाभिनय देखकर क्या तुम्हारा प्रेम इतना बढ़ा है। सुन्दरि ! उत्तम रूपसे देखो और हमो। हाथरसका धन्त है, कि नहीं, इसमें सन्देह है।

खनाथी मामू दारोगाकी पास इजहार देती है,—“घालमें मोहर उम्कलनेपर रमाप्रसाद घालके समीप आ बैठा बैठकर, इधर उधर देखने लगा। मेरे मगमें सन्देह हुआ।

दारोगा। सन्देह क्यों हुआ ?

खनाथी। रमाप्रसादकी चञ्चल पितवन और सुखका भाव देखकर।

दारोगा। सुखका भाव कैसा देखा ?

खनाथी। थोर जेना।

दारोगा। जग्हा, और यवान दर जाइने।

शरोगा । खोतो है ही । हम भी सची यातने विधिप
 षवाती हैं । हम सबको मदैव सच बोलनेका उपदेश दिया
 करते हैं । सत्यधर्मका पालन ही हमारा महान्त है । सच
 बोलनेसे स्वर्ग मिलता है, यह हमारे पितामह मरनेके वक्त कह
 थे थे । आप बेखटके सच बात कह जाइये,—पापी दुराचारी
 गोर,—उससे रिहाई पावे अथवा सजा, आप उनका कुछ
 ब्राह्म न करें । और विचारक यदि विषयव्य-वृद्धि हों, तो
 यह आपहीके बयानपर रमाप्रसादको तुरत ही जेल भेज
 देंगे ।

खजाण्ही । भेजे चाहे न भेजे, मैं सच ही कहूंगा । यदि
 र्मके सूर्य पश्चिममें उदय हों, तौभी मत्पथसे कभी पैर
 हटानेका नहीं । झूठ बोलनेके वक्त मानो कोई मेरा कब्रजा
 पकड़ लेता है, कष्ट बन्द हो जाता है । झूठ न मैं खागता हूँ
 और न बोलता ही हूँ ।

शरोगा । अच्छा, फिर उसके बाद क्या हुआ ? लहकेने
 भी मोहर पुराई ?

खजाण्ही । नहीं, मैं सच ही कहूंगा । लहकेकी दृष्टा
 नगाऊंगा । मैं कह सकता हूँ, कि उनने और पांच
 वह बात सच नहीं है, तब मैं किसी
 से सुके मार डालिये, तौभी मैं

समझमें आया, कि आप

न, कि लहके एक मोहर

दारोगा । यह भय देखकर आपने क्या किया ?

खजाची । झूठ नहीं । पहले पहल यह काण्ड देखकर मेरा कठिना दृष्ट उठा । मैं एक दृष्ट चुप हो रहा ।

दारोगा । यह तो बडे ताब्युबकी घात सुनाता हूँ । आपके तहवीककी मोहर चोरी गई, चोरको मोहर चुराते आपने खुद देखा, मोहरको बांधकर चागे धोतीमें खोंसते भी देखा । आपकी मोहर चोरी गई, फिर आप चुप क्यों रहे ? चोर थोर कहकर छला क्यों ? मथाया ? उसी वक्त मोहरकी छीन क्यों न लिया ? कलेजा दहलने और चुप रहनेके बाद ही यह काम क्यों न किया ?

खजाची । हुनूर । अगर आप सच कहने दें, तो मैं कहूँ । मैं सचके सिवाय झूठ कभी नहीं बोलता । चोरीके बाद मैं चुप हो रहा था, यह सच है । मैंने समझ लिया था, कि थोर तो मेरी सूठीमें है, भागकर जायगा कहाँ ? थमी छला मथायर क्यों गोलमाल करूँ, बरख यह देखूँ, कि थोर और चोरी करता है, कि नहीं ? देखूँ, थोरकी दौड कहाँतक है ? हुजूर । इसीसे मैं चुप हो गया था ।

दारोगा । पर अदाखत इस बातका विश्वास करेगी, कि नहीं, इसने नन्द है ।

खजाची । विश्वास करे चाहे न करे, मैं सचके सिवाय झूठ जानता नहीं । मेरे पुरखे कभी झूठ नहीं बोले । साख रुपया दीपद भी मैं झूठ नहीं बोल सकता । मैं जो घामता था, ठोक ठोक कह दिया है, अदाखत विश्वास दारे चारे न दारे ।

दरोगा । खोती है हो । हम भी सची बातके विधिप पञ्चवातो है । हम सबको सदैव सच बोलनेका उपदेश दिया करते है । सत्यधर्मका पालन ही हमारा मन्त्रावत है । सच बोलनेसे स्वर्ग मिलता है, यह हमारे पितामह मरनेके वकत कह गये थे । आप देखटके सच बात कह जाइये,—पापी दुराचारी चोर,—उससे रिहाइ पावे अथवा सजा, आप उसका कुछ खास न करें । और विचारक यदि विचक्षण बुद्धि हों, तो यह आपहीके वयानपर समाप्रसादको तुरत ही जेल भेज देंगे ।

खजाची । भेजे चाहे न भेजे, मैं सच ही कहूंगा । यदि पूर्वके सूर्य पश्चिममें उदय हों, तौभी मत्पथसे कभी पैर हटानेका नहीं । भूठ बोलनेके वक्त मानो कोई मेरा कब्रिया पकड़ लेता है, कण्ठ बन्द हो जाता है । भूठ न मैं धामता हूँ और न बोलता ही हूँ ।

दरोगा । अच्छा, फिर उसके बाद क्या हुआ ? कब्रकेने और भी मोहर चुराई ?

खजाची । नहीं, मैं सच ही कहूंगा । कब्रकेको दृष्टा कलङ्क न लगाऊंगा । मैं कह सकता हूँ, कि उसने और पांच मोहरें चुराईं है, पर जब वह बात सच नहीं है, तब मैं किसी तरह कहनेका नहीं । चाहे तुम्हे मार डालिये, तौभी मैं कभी वैसी बात न कहूंगा ।

दरोगा । इतनी देरके बाद समझमें आया, कि आप प्रकृत मायु है । फिर क्या हुआ ?

खजाची । जब मैंने यह देखा, कि कब्रका एक मोहर

खेकर और घोरी नहीं करता चुप है, तो मैंने नायबदीवान
जैसे बह दिया,—“इस खड्गों मोहर घुसाइं है ।”

इसपर नायबदीवानजीने रमाप्रसादको मिखाचुछा, डरा
धमकाकर मोहरको निकाल लिया ।

दारोगाजीने अन्तमें पूछा,—मोहर चोरी जानेके वक्त वहाँ
और कौन कौ था ? उस समय वक्त क्या था ? रमाप्रसाद
किस वक्त नीलकोठीमें थाया था ?

खनाचीजीने उमका यथायथ उत्तर दिया । दारोगाने
कहा,—“खनाचीजी । अब आप अपने इजहारके नीचे हस्त
खत कर दें ।”

धार्मिक खनाचीने धार्मिक दारोगाके कहने सुनाविक
धर्मपत्रपर धर्मसाक्षर कर दिया ।

अट्टाईसवा परिच्छेद ।

दारोगाने बीरभद्रसे कहा,—“आप अब्बल गवाह बनिये ।
बीरभद्रने उत्तर दिया,—“नहीं, पहले और और गवाहोंसे गवा
हो दिखालागा । उससे यदि प्रमाणित न हो, तो मालिकको
भखाइंके लिये दम खुद गवाही देंगे ।”

दारोगाने चुपचाप बीरभद्रसे कहा,—“और गवाह सब
खनाचीकी तरह पक़ी तो होंगे ? मैंने चुपचाप जैसी शिष्या
दी है, वैसाही वह लोग कह सकेंगे तो ?”

बीरभद्र । कहना ही सम्भव है ।

इसी समय एक दीर्घाकार ब्राह्मणने खड़े होकर कहा,—
“बापू देनेकी चिन्ता कैसे ? मैंने चोरी करते देखा है और
उसका सब हाल जानता हूँ ।”

उसे धामने पाकर दारोगाने कहा,—“जब तुम चोरीका
सब हाल जानते हो, तब लुब्ध व्यवन गवाह बनना पड़ेगा ।
अच्छ, इजहार हो । बोलो, तुम्हारा नाम क्या है ?”

गवाह । मेरा नाम गोपाल है ।

दारोगा । ठीक कहो,—क्या तुम्हारा नाम खाली गोपाल
है ?

गवाह । खाली गोपाल नहीं, तो क्या डाली गोपाल ?

दारोगा । अच्छी तरह समझकर बोलो । कौन गोपाल,
समझ भूझकर कहो ।

गवाह । इस सीधी बातकी समझ भूझकर क्या कह ?
मैं अयगोपाल नहीं, रामगोपाल नहीं, लण्णगोपाल नहीं, यदु
गोपाल नहीं, शिवगोपाल नहीं,—मैं केवल गोपाल हूँ ।

वीरभद्र । सो हम तुमसे नहीं पूछते,—हमारा पूछना
है, कि तुम गिवागी, दुबे, मित्र, बालपेयी क्या हो, सो खोलकर
साफ साफ कहो ?

गवाह । मैं तिवारी, दुबे वगैरह कुछ भी नहीं हूँ—मैं
गोपाल पाण्डेय हूँ ।

दारोगा । (पुनः वाप वीरभद्रसे) इससे गवाही दिलाना
अच्छा नहीं । दूसरे घादमीको उगाइये ।

इतनी बात सुनकर गोपाल पाण्डेय हाती पुला और ताकर
खड़े हुए औरों हाथ फैलाकर कहा,—“क्या कहा, कि मैं

खेकर और थोड़ी नहीं करता चुप है, तो मैंने नाथयशोवान
जैसे कह दिया,—“इस लड़की मोहर घुड़ाई है।”

इसपर नाथयशोवानजीने रमाप्रसादको मिथानुषा, डरा
धमकाकर मोहरको निकाल लिया।

दारोगाजीने अन्तमें पूछा,—मोहर चोरी जानेके वक्त वशा
और कौन कौन था ? उस समय घकत क्या था ? रमाप्रसाद
किस बला नीलकोठीमें थाया था ?

खनाशीजीने उमका यथायथ उत्तर दिया। दारोगाने
कहा,—“खनाशीजी ! अब आप अपने इजहारके नीचे दस्त
खत कर दें।”

धार्मिक खनाशीने धार्मिक दारोगाके कहने सुनाविक
धर्मपत्रपर धर्मसाक्षर कर दिया।

अट्टाईसवा परिच्छेद ।

दारोगाने वीरभद्रसे कहा,—“आप अन्वेषण गवाह बनिये।
वीरभद्रने उत्तर दिया,—“गहाँ, पहले और और गवाहोंसे गवा
ही दिखाऊंगा। उससे यदि प्रमाणित न हो, तो मालिककी
भलाईके लिये हम खुद गवाही देंगे।”

दारोगाने चुपचाप वीरभद्रसे कहा,—“और गवाह सब
खनाशीकी तरह पकल तो होंगे ? मैंने चुपचाप जैसी शिष्या
ही है, वैसाही यह लोग कह सकेंगे तो ?”

वीरभद्र । कहना ही सम्भव है।

इसी समय एक दीर्घाकार आध्यात्मिके खड़े होकर कहा,—
“बाबू देनेकी चिन्ता कैसे ? मैंने चोरी करते देखा है और
उसका सब हाल जानता हूँ ।

उसे घामने पाकर धारोगाने कहा,—“जब तुम चोरीका
सब हाल जानत हो, तब कुछ व्यवसाय गवाह बनना पड़ेगा ।
व्यथा, इजहार हो । बोलो, तुम्हारा नाम क्या है ?

गवाह । मेरा नाम गोपाल है ।

धारोगा । ठीक कहो,—क्या तुम्हारा नाम खाली गोपाल
है ?

गवाह । खाली गोपाल नहीं, तो क्या डाली गोपाल ?

धारोगा । अच्छी तरह समझकर बोलो । कौन गोपाल,
समझ भूझकर कहो ।

गवाह । इस सीधी बातको समझ भूझकर क्या कहूँ ?
मैं अयगोपाल नहीं, रामगोपाल नहीं, लक्ष्मणगोपाल नहीं, यदु
गोपाल नहीं, शिवगोपाल नहीं,—मैं केवल गोपाल हूँ ।

वीरभद्र । सो हम तुमसे नहीं पूछते,—हमारा पूछना
है, कि तुम तिवारी, दुबे, मित्र, बालपेयी क्या हो, सो खोलकर
बात साफ कहो ?

गवाह । मैं तिवारी, दुबे वगैरह कुछ भी नहीं हूँ—मैं
गोपाल पाण्डेय हूँ ।

धारोगा । (सुप्रताप वीरभद्रसे) इससे गवाही दिलाना
अच्छा नहीं । दूसरे घादमीको बुलाइये ।

इतनी बात सुनकर गोपाल पाण्डेय छाती मुगा धीरे तनकर
खड़े हुए और उदास फैलाकर कहा,—“स्वा कथा, कि मैं

खेहर और चोरी नहीं करता चुप है, तो मैंने नायबदीवान
जैसे कह दिया,—“इस लड़क़ेने मोहर चुराई है ।”

इसपर नायबदीवानजीने रमाप्रसादको मिलाबुठा, डरा
घमकाकर मोहरको निकाल लिया ।

दारोगाजीने अन्तमें पूछा,—मोहर चोरी पानेके बत्त वहाँ
और कौन कौन था ? उस समय बक्त क्या था ? रमाप्रसाद
किस बत्त नीलकोठीमें थाया था ?

खजांचीजीने उसका यथायथ उत्तर दिया । दारोगाने
कहा,—“खजांचीजी । अब आप अपने इजहारके पीचे दख
खत कर दें ।”

धार्मिक खजांचीने धार्मिक दारोगाके कहने सुनाविक
धर्मपत्रपर धर्मसाक्षर कर दिया ।

अट्टाईसवा परिच्छेद ।

दारोगाने वीरभद्रसे कहा,—“आप खन्वख गवाह बनिये ।
वीरभद्रने उत्तर दिया,—“नहीं, पहले और और गवाहोंसे गवा
हो दिखालगा । उससे यदि प्रमाणित न हो, तो मालिककी
भलाईके लिये हम खुद गवाहों देंगे ।”

दारोगाने चुपचाप वीरभद्रसे कहा,—“और गवाह सब
खजांचीकी तरह पक़ी तो होंगे ? मैंने चुपचाप जैसी शिखा
दी है, वैसाही वह लोग कह सकेंगे तो ?”

वीरभद्र । कहना ही सम्भव है ।

दारोगा । तब तुम कौन काम करते हो ?

गवाह । मैं बाबूके पास बैठ करता हूँ । उनसे बातचीत करता हूँ —

दारोगा । बैठे बैठे क्या करते हो ?

गवाह । करूँगा क्या ?

दारोगा । कुछ भी नहीं करते ?

गवाह । हाँ कुछ कुछ तो करता ही हूँ । गौकर बाबूका घामूरी तम्बाकू भरकर ले आया । चिलम लेकर सुकगानेके पहाने खूब पीकर तब चिलमको बाबूके हुक़ेपर रखा देता हूँ । बाबू दोपार बार पीकर छोड दिया । मैं फिर चिलम उतारकर पीने लगा । बाबूके पास यही मेरा काम है । क्या मैं बाबूसे डरता या शर्माता हूँ ?

दारोगा । तुमारे पदका क्या नाम है ?—यहाँ कोई राजाधी, कोई दीवान, कोई नायब खीर कोई ठिगरीजारीके सहरिर है—उसी तरह तुम्हारे पदका भी तो एक व एक नाम व्यवहारी ही होगा ?

गवाह । (छुट्ट हसकर) मेरे पदका नाम है,—बाबूके सुपरियट्ट

रत्ना लहकर गोपाल व्यापरी व्याप - हुत हवे । हसते हसते कहने लगे,—“दारोगाजी व्याप गिरहमें मुझे उखाटना चाहते हैं, सो हो नहीं सकता । देखनेमें मैं सुन व्यक्ति हूँ, लेकिन जब गवाही देने जाता हूँ, तो हाकिमजीग भी डर जाते हैं ।”

बोलते बोलते गोपायके दीनी गवाहें खूब हसी निकलने लगी ।

गवाही नहीं दे सकता ? मुझसे—घब्रहा गवाह और कौन साला है, भला देखे तो । मेरे तीन पुस्तसे यही काम होता थाता है,—और मैं गवाही देने नहीं जानता । उस बार नक्षत्रके मुकद्दमेमें हार्डकोर्टसे फाल साहबने आकर तीन दिवसक विरह की थी, तौभौ मेरा मुह बन्द न हुआ था । अन्तमें फाल साहबने प्रसन्न होकर कहा था,—“सायाश गवाही ।” आप दोनो आदमी कामकागी करके क्या मुसमुस कर रहे हैं ? मैं गवाही नहीं दे सकता ।—यह बात सुननेसे क्रोध होता है,—मेरे नाममें कलङ्क लगता है ।

वीरभद्रने दारोगासे कहा,—“पाखियको गवाही देनेका अभ्यास है । आप उससे मोहरकी चोरीके बारेमें खयाल करके देखिये न,—वह क्या कहता है ।”

दारोगा । तुम कौन काम करते हो ?

गवाह । मैं वादूके यज्ञका सभी काम करता हूँ ।

दारोगा । खयालका जवाब नहीं हुआ ।—तुमपर किध कामका भार सौंपा गया है, बताओ ?

गवाह । सो मैं नहीं जानता । भार बार मैं कुछ जानता नहीं,—जब जो कामाया पडता है, उसे करता हूँ । विना मेरे वादूका कोई काम ही नहीं हो सकता । मैं जो करता हूँ, वही होता है ।

दारोगा । (छद्मि क्रोधसे) घब्रहा, वादूने घोलेकी घाम भी बुझी गज्जे हो ?

गवाह । मैं सायाशका लडका हूँ,—घाम क्यों गज्जेगा ? वह अब काम मेरे गौकरका गौकर करता है ।

दारोगा । तब तुम कौन काम करते हो ?

गवाह । मैं बाबूके पास बैठा करता हूँ । उनसे बातचीत करता हूँ —

दारोगा । बैठे बैठे क्या करते हो ?

गवाह । करूँगा क्या ?

दारोगा । झूठ भी मर्हों करते ?

गवाह । हाँ झूठ झूठ तो करता ही हूँ । नौकर बाबूका चम्बूरी तम्बाडू भरकर ले गया। चिलम लेकर मुलगानेके बंधाने खूब पीकर तब चिलमको बाबूके हुक़ीपर रख देता हूँ । बाबूने दोचार बार पीकर छोड़ दिया । मैं फिर चिलम उतारकर पीने लगा । बाबूके पास यही मेरा काम है । क्या मैं बाबूसे खरता या शर्माता हूँ ?

दारोगा । तुमारे पदका क्या नाम है ?—यहाँ कोई अफ़ाधी, कोई दीवान, कोई नायब और कोई डिगरीजारीके सहारिरे हैं—उसी तरह तुम्हारे पदका भी तो एक न एक नाम बाधत ही होगा ?

गवाह । (झुठ बसकर) मेरे पदका नाम है,—बाबूके सुपरियट्ट

इतना कहकर गोपाल आपही आप बहुत हँसे । हँसते हँसते कहने लगे,—“दारोगाधी आप जिरहमें मुझे उखाड़ना चाहते हैं, जो हो मर्हों सकता । देखनेमें मैं युम व्यक्ति हूँ, लेकिन जब तवाही देने जाता हूँ, तो जाकिमलोग भी खर जाते हैं ।”

बोलते बोलते गोपालके दोनो गालके खूब हँसी निखलने लगी ।

दारोगा । क्या, तुम चोरोंके बारेमें क्या जानते हो ?

गवाह । सब कुछ जानता हूँ ।

दारोगा । सब क्या जानते हो, कही न ?

गवाह । सब जानता हूँ । उसमें क्या कहना होगा ?

आप पूछिये न । बिना पूछे मैं कैसे कुछ कहूँ ?

दारोगा । चोरको तुम पहचानते हो ?

गवाह । क्या चोरके और मेरे मकामकी एकही दीवार है या चोर मेरा साला सम्बन्धी है, जो चोरको मैं पहचान रखूंगा ? चोरही चोरको पहचानता है । क्या मैं चोर हूँ जो चोरको पहचानूंगा ?

पास ही रमाप्रसाद बैठा था। दारोगाने उसकी धीरे-धीरे उंगुली देखाकर पूछा,—यह कौन है ?

गवाह । यह मशुम्य है ।

रमाप्रसादकी स्वरत शकल अच्छी तरह देखकर गवाहने फिर कहा,—“हा, यह मशुम्य ही तो है । इसके दो हाथ, दो पैर, दो नेत्र,—यह सब तो ठीक ठीक ही हैं ।—यह मशुम्य नहीं तो और क्या है ? (हसकर) आप चाहे जितना पूछिये, गिरहमें आप मुझे कभी तोड़ न सकेंगे ।”

दारोगा । यह सब जाने दो,—तुमसे यह पूछते हैं, कि इन्होंने मोहर चुराई है ?

गवाह । मोहर चुराना किसे कहते हैं ? चोरोंके वक्त “चोर, चोर,” कहकर शोर मचाने तो हुआ नहीं, जिससे समझा जाय, कि मोहर चोरी हो रही है । किन्तु इस आदमीने मेरे तथा और और लोगोंके सामने एक मड़ी मोहर उठा

लिया था। आप धर्मावनार टाकिम है,—उठा लेना अगर चोरी है, तो इसने मोहर चुराई है। आप जैसा विचार कीजिये। (हसकर) गिरहमें सुभे नहीं तोड सकते। मैंने लाखो जगह गवाही दी है।

दारोगा। तुम्हारी उमर कितनी है ?

गवाह। मेरे जिवाहकी बातचीत होती है क्या ?

दारोगा। मवालका ठीक ठीक बनाव हो।

गवाह। जन्मपत्ती तो मैं लाया नहीं, जो आपको उमर बना दू ? किमती कितनी उमर है, कोई भी ठीक नहीं बता सकता। घण्टा, मिाट, पल अनुपलका फर्क पड़ेहीगा। किन्तु अन्दाजमें कह सकता हूँ और आप भी अन्दाजमें मेरी उमर जान सकते हैं,—सभी अन्दाजी है। सुनरां इस प्रश्नमें पूछनेकी आवश्यकता ही क्या है ? (हसकर) आप गिरहमें सुभे नहीं तोड सकते—मा कालीका कर है।

दारोगा। सुम सुशहरा कितना पाते हो ?

गवाह। मेरे सुशहरेका क्या ? एक एकदिन खजानेकी कुञ्जी ही मेरे हाथमें रहती है। मैं अन्दर जाता हूँ और अकेले पांच हजार रुपयेके गहनेका बख उठा लाता हूँ। मेरा सुशहरा क्या। मन्नाकी औरते सुभने बातचीत करती है,—जब जिसे जिस चीजकी जरूरत पडती है,—मैं खरीदकर गा देता हूँ। बिना मेरे उर्नका घाट बाजार ही नहीं सकता। मेरा सुशहरा क्या ? मालिक सुभे इतना मानत है, कि बिना मेरी रायके कोई काम ही नहीं करते। मेरा सुशहरा क्या ? मैं जो करता हूँ, वही होता है। मालिकसे ऐसा

आवे, तौमी निरहमें मुझे नहीं हरा सकते । अच्छा सुनिये, कष्ट विवाहकी बात,—

वीरभद्र । रहिये पाण्डियजी रहिये ।

गवाह । और ठहरने कहां प्राते है ? यह जिस तरह वाहियात बात पूछ रहे है, उससे इच्छा होती है, कि आप शाहीकी बात रुह डालू । रुहे डालता हूँ—देखिये । पि यह कहे गे, कि पाण्डियजी निरहमें नहीं ठहर सके, सो ही नहीं ।

वरोगा । (झुंझ झमकर) नहीं, पाण्डियजी । आप कहना नहीं पडेगा,—मुझे ऐसी शक्ति नहीं है, कि आप निरहमें पकड सकें ।

गवाह । तब आप हसते क्यों हैं ?

अवतक श्लोक चुपचाप हस रहे थे । “हंसते क्यों हैं इतना सुनते ही सब कीड़े उठाकर हंस पडे । पाण्डियजीक प्रतिद्वंद्वी गदाधर हज्जाम था । वह हंसते हंसते लोट गया । लुघडते लुघडते पाण्डियजीकी घोर जाने लगा । यह देकर पाण्डियजी अनन्योपाय ही विकट मधुर स्वरसे “वापरें वाप चिह्लाते घौर यह कहते हुए, “नील कोठीमें जीतौ मज्जल में कीड़े पडते हैं,” भाग गये ।

चनतीसवा परिच्छेद ।



हामी बन्द हुईं। शान्ति स्थापित हुईं। फिर गाम्भीर्यश्री घोर घटा देख पडने लगी। फिर काय्य चारम्भ हुआ। जिसमें और कोइ न सुनने पावे इसलिये दारोगाने घौरे घौरे शीरभद्रसे कहा,—‘व्यादा गवाहोंकी जरूरत नहीं है। गवाह व्यादा होनेसे प्रायः मरुद्गमा खराब हो जाता है। तीन अच्छे अच्छे गवाहोंको छांटकर अलग कर लीजिये। उन लोगोंका क्यान यदि सुहृदोंके रजहारसे मिल जाय, तो व्याप निश्चय जानियेगा, कि सुहृदमें व्यापकी औत होगी। तीन अच्छे गवाह ही काफी हैं।

शीरभद्र। इसके लिये चिन्ता क्या है। मोलकौलीकी अधिकांश व्यादमी उपयुक्त हैं।

पारापारी तीन गवाह आये और उनका रजहार लिया गया। शेरक गवाहने क्यान किया,—‘रमाप्रभादने दाहिने हाथसे पाछमेंसे एक मोहर उठा ली। फिर उसे घोतीके कोनेमें बांधकर आगे घोतीमें खोंस लिया।’

दारोगा बहुत खप हुआ। उन्होंने कहा,—‘बम, तीन गवाह ही बहुत हैं। और जरूरत नहीं है। पूरा प्रमाण मिला है।

शीरभद्र। और ही एक गवाह गुजरना क्या अच्छा होगा।

दारोगा । नहीं,—घोड़े ही गवाह बख्शे होते हैं । किन्तु एक दूसरे किम्बका गवाह हो, तो कोई खराब बात नहीं है ।

बोगभद्र घोर दारोगाके फुसफुसाकर कुछ परामर्श किया । फिर तुम्हें ही बोगभद्र उठ गये । दण्डभरके बाद कौट धाये । घोड़ी दैरके बाद घोर एक गवाह धाया । उसने कहा,—
“रमाप्रसादको हम पक्षपाते हैं । हम दलवाई हैं । बताशा पेडा और कलाकन्द बेचते हैं । रमाप्रसादने एकबार हमारी दूकानसे कलाकन्द चुराकर खाया था ।”

दारोगा चौंक उठे—“हे । तुम क्या कहते हो ! तुम्हारी दूकानमें चोरी हुई और तुमने धानेमें खबर न दी ?”

दलवाई । हुजूर । दो कलाकन्दके लिये धानेमें क्या खबर देता ?

दारोगा । एक दो कलाकन्द चुरागा और मगभद्र चुरागा दोनों बराबर ही हैं । दोनों चोरी ही हैं । यह तुमने क्या खराब काम किया, कि धानेमें चोरीकी खबर न दी । तुमने पकारान्तरसे चोरको प्रत्यय दिया है । जो धादमी चोरको प्रत्यय देता है, अदालतसे वह दण्ड पाता है ।

दलवाई । हुजूर । हम गरीब धादमी हैं,—क्या कहते कहते क्या कह पाया । हमें क्या कहना होगा, जो आप बख्शी तरह बता दीजिये ।

दारोगा । ऐसा कहो, कि कलाकन्द खाकर दाम नहीं दिया ।

दलवाई । इन चोर रमाप्रसादने हमारी दूकानसे कलाकन्द लेकर खाया । दाम मागनेपर भाग गया । आज

इसने दूकानपर आकर कहा,—“तुम शीघ्र मत करो,—शीघ्र ही तुम्हारा पैसा दे दोगे। फिर बात ही बातमें हमसे पूछा,—“कलकत्तेमें नीलकोठीमें मोहरके तोड़े आये हैं क्या ?” हमने कहा,—“आज हाथीपर कई तोड़े आये हैं। वे मोहर हीके तोड़े हैं, कि नहीं, सो नहीं जानते।” इतनी बातके सुनते ही रमाप्रसाद उठा। हमने कहा,—“कलकत्तका दाम क्यों नहीं देता ?” इसपर रमाप्रसादने कहा, कि मैं अभी आता हूँ। एक आदमीसे कुछ रुपये मिलना है। घाण हीका करार है। रुपये पाने हीसे आज तुम्हारा दाम देकर जाऊंगा। रमाप्रसादकी बातसे हमे सन्देह हुआ। हम उसने पीछे पीछे प्रायः सौ कदमपर धुपचाप चले। वह खड्गके मकानकी ओर नहीं गया, नीलकोठीकी ओर चला। धीरे धीरे नीलकोठीके घण्टर जा पहुँचा। हमने सोचा, कि यह लडका कैसा भूढ़ा है। निःसन्देह आज हमके जीमें घुराई है।

दरोगा। (धुपचाप नीरभद्रसे) ऐसा पोषक प्रमाण बुरा नहीं है, किन्तु और कुछ सावधानकर कहनेकी जरूरत है। गोखमाख अदालतमें नहीं चगता। अर्थात्क बगल हमने ठीक करके लिख लिया है। अदालतमें क्या कहना होगा, सो हम फिर मिला दोगे। (कुछ धुप रद्दकर) अच्छा, यहाँ हम एक बारके सिवाय और कोई भला आदमी नहीं है क्या ? यह सबबाई कुछ कथा भाणम होता है। पक्का आदमी चाहिये,—पक्का।

तीसवा परिच्छेद ।



रमाप्रसाद व्यभीतक चुप है । एक पुतलीकी तरह फुरमी-पर बैठा है । उसके प्रत्येक गिरते है क्या ? क्या वह कोई बात सुनता है ? क्या सुनने पाता है ? भाषरा देखता है क्या ? समझता है क्या ? कि उसकी घांखोंसे देख नहीं पडता, कानोंसे सुन नहीं पडता और मुहसे बोली नहीं निकलती ? क्या वह गूगा है ? उसके शिरपरसे इतना प्रत्यय तूषाग चला गया, तथापि वह इतना धीर स्थिर क्यों है ? ध्यानमय योगीकी भांति निश्चल निर्विकार क्यों है ?

गवर्होंका इणहार खतम होनेपर हारोगाने तीव्रदृष्टिसे रमाप्रसादकी घोर देखकर कहा,—“अगर तुम्हें कुछ कहना हो, तो अभी कहो । चुप रहनेसे नहीं बनेगा । फिर ऐसे तुम्हारी काजमें चुप रहना भी, अच्छा नहीं है । चुप रहनेसे ही छानि है । तुम्हारे ऊपर चोरोका गुरुतर अभियोग है । मुह्रेंके इणहारऔर गवर्होंके बयानसे तुम चोर साबित होते हो । यदि तुमने सचसच ही चोरी की है, तो साफ साफ कह दो । सच कहनेमें तुम्हारी ही भलाई है । सना खत्म हो सकती है,—बैलाग छूट भी सकते हो । अगर तुम छिपी बापूसे रो रो कर दुकानोगे,—“मैं अभी लडका हू । मोहरका लालच रोक नहीं सकता, इसीसे एक मोहर चुरा दी ।” तो छिपी बाहव

दया करके तुम्हें छोड़ भी सकते हैं। अगर बहुत होगा, तो दो रुपया चुर्नागा करेगे। कुछ डर नहीं है। तुम सच बात कहो। वह दो रुपया हम अपने पाकटले देनेपर राखी है। डर क्या है ? तुम तो गिरे लडके नहीं हो,—सच कहनेसे पुण्य होता है, झूठ बोलना महापाप है,—यह सब तो तुम जानते हो। सच कहनेसे भगवान् प्रसन्न होते हैं,—डिप्टी साहबकी झौडनेकी इच्छा । रहनेपर भी परमेश्वर प्रसन्न होकर तुम्हें रिहाई दे सकते हैं। इसीसे कहते हैं, तुम कभी सत्यपथकी मत छोड़ना। हमे विश्वास करो। हम तुम्हारे परम सुहृद हैं। हमे दूसरा मत समझना। हम जो कुछ कहते हैं, तुम्हारी भलाइ हीके लिये कहते हैं। अतएव कहो,—“हमने मोहर चुराई है।”

बालक तौभी चुप हो रहा ।

दारोगा । देखो, तुम गिरे लडके हो। सच कहकर अपनी जान बचाओ। हमारा उपदेश सुनो। झूठ बोलकर क्यों आफतमें फसोगे ? ऐसे प्रमाणपर तुम्हारे झूटनेका कोई उपाय नहीं दीखता। सच बात कहो, हाकिमकी दया होगी,—वह तुरत ही तुम्हें छोड़ देंगे।

बालक तौभी कुछ नहीं बोला ।

दारोगा । अच्छा, यदि बोलनेमें तुम्हें श्रम लागती हो, और सब व्यादमियोंके धामने “मैं चोर हूँ” यदि इस बातके कहनेमें क्षम्या लागती हो, तो दावात कलम कागज देते हैं,—तुमने किस तरह चोरी की थी, उसे लिखकर दस्तखत कर दो।

तीसवा परिच्छेद ।

रमाप्रसाद अभी तक चुप है । एक पुतलीकी तरह झुरची-पर बैठा है । उसके पलक गिरते हैं क्या ? क्या वह कोई बान सुनता है ? क्या सुनने पाता है ? माधरा देखता है क्या ? समझता है क्या ? कि उसकी छाँखोंसे देख नहीं पड़ता, कानोंसे सुन नहीं पड़ता और मुँहसे बोली नहीं निकलती ? क्या वह गू गा है ? उसके फिरपरसे इतना प्रलय तूफान चला गया, तथापि वह इतना घोर स्थिर क्यों है ? ध्यानमय योगीकी भाँति निश्चल निविकार क्यों है ?

गवर्होंका इजहार खतम होनेपर हारोगाने तीव्रदृष्टिसे रमाप्रसादकी ओर देखकर कहा,—“अगर तुम्हें कुछ कहना हो, तो अभी कहो । चुप रहनेसे नहीं बनेगा । फिर ऐसे तुम्हारी कालमें चुप रहना भी अच्छा नहीं है । चुप रहनेसे ही हानि है । तुम्हारे ऊपर चोरोका गुरुतर अभियोग है । मुहूर्त्के इजहारऔर गवर्होंके बयानसे तुम चोर साबित होते हो । यदि तुमने सचसच ही चोरी की है, तो साफ साफ कह दो । सच कहनेमें तुम्हारी ही भलाई है । सजा कम हो सफती है,—बैलाग छूट भी मनाते हो । अगर तुम डिप्टी वायूसे रो रो कर कहोगे,—“मैं अभी लडका हूँ । मोहरका लालच रोक नहीं सकता, इसीसे एक मोहर पुरा हो ।” तो डिप्टी साहब

बार बार बालकसे इस तरह उपेक्षित होनेपर दारोगाजीका क्रोधमग्न भडक उठा।—“हरामजादा ! पाषी ! बहमाश ! तू जानता नहीं, कि हमारा नाम राममिह दारोगा है !—हमारे घरसे पाष बकरी दोगे एक ही घाटपर पानी पीते हैं !—अगर तुम्हे काटकर दो सख्त कर डालें, तो तेरा बचानेवाला यहाँ कोई नहीं है ! अगर फिर मलाती करेगा,—और बोलेगा नहीं, तो एक ही धप्पहमें तेरी जान ले डालेंगे । यदि धम पूरी देखनेकी इच्छा तुम्हे नहीं है, तो अबभी कहते हैं,—बोल ! बालक चुप है ।

यह देखकर क्रोधान्व दारोगाने धप्पड मारनेके लिये हाथ उठाया ।

थापार विपरीत देखकर बीरभद्रने दारोगाका हाथ पकड कर धीरे धीरे कहा,—“आप शान्त होइये । हमारी बात सुनिये । चोरीके बाद ऐसी परीक्षा कुछ कुछ हुई थी । उस समय भी यह कुछ न होता था । धप्पडने मिवाय हमने और कइ तरहकी कष्टाई की थी, तौभी यह न बोला था । अन्तमें स्रुष्टि हो गया था । उस समय किसी किमीने यह ग्याल किया था, कि इसके प्राण निकल गये । तौभी यह विकारगस्त बालक बोला नहीं । उसे धप्पड मागिये, उसने हाँस लोड डालिये, फाँसीपर लटका डीनिये,—पर बह बोलेगा नहीं,—बह ऐसा वैसा चीर नहीं है । इसीसे कहते हैं, कि होइये ।”

रमाप्रसादने दावात, कालम कागजको छुवा भी नहीं । वह सब ध्योंके ल्यों ही घरे रहे ।

दारोगा । तुम बडे गंवार मालूम होते हो ! तुम घाप ही अपनेको चोर बगाकर गिरफ्तार कराते हो । तुम क्या चोर हो ?—इस प्रश्नका उत्तर हों या नहीं, सब सुझाव ही दिया करते हैं । जब तुम कोई जवाब नहीं दे सकते, तो अदागत निश्चय हो तुम्हें चोर कहकर पकड़ लेगी । अतएव ऐसी सुखताका काम कभी मत करो । अगर तुमने चोरी नहीं की, तो साफ साफ क्यों नहीं कहते, कि हमने चोरी नहीं की । अच्छा कहो, प्रीत बोलो,—हमने चोरी नहीं की ।”

रमाप्रसाद तौभी चुप ही रहा ।

दारोगा । देखो, हमने अनेक दुष्ट बदमाशोंको देखा है ; किन्तु तुम जैसा गंवार कभी नहीं देखा । यदि चोरीकी है, तो कहो,—चोरी की है,—और यदि चोरी नहीं की, तो कहो —“चोरी नहीं की ।—इस तरह चुप रहनेसे नहीं चलेगा ।—यह तमाशा या मसखरी नहीं है । तुम दोषी हो, कि निर्दोष इन दोनों प्रश्नोंमें एकका उत्तर देना ही होगा । अगर जवाब न दोगे, तो एक धप्पड़ लगते ही धाँखोंके सामने सरसों फूल उठेगी । बोलो, कि कहता हू—

इतना कहकर दारोगाने रमाप्रसादके सहकौ चोर देखा, तो रमाप्रसादको जैसा ही पाया । घमकीको विषय जाते, देखकर दारोगाने क्रोधसे कहा—“अरे ! हथौडीतो खे चा—इस छोकाके के हात तोड़कर रख दे ।”

हथौडी का गड्ढे पर बाखश उसी तरह चुप है ।

बार बार बालकसे इस तरह उपेक्षित होनेपर दारोगाजीक क्रोधानल भडक उठा।—“हरामजादा! पाजी! बदमाश तू जाता नहीं, कि हमारा नाम रामसिंह दारोगा है।—हमारे घरसे पाघ बकरी दोगे एक ही घाटपर पागी पीते है—अगर तुम्हे काटकर हो रख कर डापे, तो तेरा बचनेवाला यह कोई नहीं है। अगर फिर पलाकी करेगा,—और बोलगा नहीं, तो एक ही घण्टा में तेरी जान ले लेंगे। यदि हम परी देखनेकी इच्छा तुम्हे नहीं है, तो अभी कहते है,—बोल।

बातक घुप है।

यह देखकर क्रोधान्न दारोगाने थप्पड़ मारनेके लिये ज्ञाप उठाया।

ध्यापार विपरीत देखकर शीरभद्रने दारोगाका हाथ पकड़कर धीरे धीरे कहा,—“ध्याप शान्त होइये। हमारी बात सुनिये। धीरे-धीरे वाद ऐसी परीक्षा कुछ कुछ हुई थी। उस समय भी यह कुछ न बोला था। थप्पड़ने सिवाय हमने और कइ तरहकी कडाई की थी, तौभी यह न बोला था। थप्पड़ने रूझित हो गया था। उस समय किसी किमीने यह स्थान किया था, कि हमके प्राण निकल गये। तौभी यह विकाररहित बालक बोला नहीं। उसे थप्पड़ मारिये, उम्मीदान तोड़ डालिये, पांगीपर लटका दीजिये,—पर वज्र मोलगा नहीं,—बह ऐमा बैसा धीर नहीं है। इसीसे कहते है, कि ध्याप शान्त होइये।”

दरोगा। ध्यापकी बात हम उठा नहीं सकते, किन्तु थप्पड़ एक ही घण्टा में पाघ पलाकी सुकते।

वीरभद्र । आपने एक घण्टा लगानेसे वह बोलाता या न बोलाता, पर मूर्च्छित होकर गिर पड़ता, यह निश्चय था । पहले एकवार इसकी मूर्च्छा तोलनेसे हम बहुत कष्ट उठा चुके हैं । अन्तमें खिला पिलाकर इसे बलवान बनाया है । अगर हम इसकी इतनी सेवा शुश्रूषा न करते, तो आप सुहालहको देख भी न सकते । अबतक तो यह मर गया होता । जब सुहालहने मरनेके लक्षण न देख पड़े, तो सेवा करके उसे जिंदा रखना ही उचित है । जीवित न रहेगा, तो दण्ड किसे दिया जायगा ? दण्ड होने हीसे तो फल लाभ होगा । इस कठिन जाड़ेमें सुहालहको कहीं कष्ट न हो और वह बीमार न हो जाय, इसलिये हमने अपना कपडा उसे दे रखा है । सुहालह और दामाद दोनोंकी प्राणरक्षा एक तरह करना पड़ता है । सुतरां इस समय ऐसे सुहालह को और कष्ट देना उचित नहीं है । आप प्रमाण पाते हैं,—सुहालहको मोहर सहित गिरफ्तार करके ले जाइये,—बदालतमें हाजिर कर दीजिये ।

दारोगा । अच्छा, वही सही । अरे ! छथकड़ी और बेड़ी ले तो आ । बडा ही कठिन सुहालह है । अच्छी तरह हाथमें छथकड़ी और पैरमें बेड़ी पहनाकर ही आदमी दोनों हाथ पकडकर ले चलो । आगे पीछे आठ आठ सिपाही रहेंगे ।

वीरभद्र । न, न, न,—ऐसा मत कीजिये । इसे पैदल मत ले जाइये । ठोकर लगने हीसे मर जायगा । सब तरहसे सुहालहकी प्राणरक्षा करना उचित है । बहुत तकलीफ

उठागेपर दूराकी दीर्घनें ताकत आइं है । अतएव इसे पालकी-
पर से जारये और आगे पीछे पहरा रखिये ।

दारोगा । हम कुछ नहीं समझते,—आपका यह कैसा
सुहालह है ?

बीरभद्र । हम भी अभी अच्छी तरह नहीं समझते यह
कैसा सुहालह है । सुहालहकी प्रायश्चा तो चाहिये, इसीसे
पालकीका बन्दोबस्त करते हैं । पैरमें बेसी आलनेकी जरूरत
नहीं है,—हथकड़ी ही काफी है ।

। दारोगा । अच्छा, यही रही ।

नीलकौठीवाले पालकीके कहार आये ।

हाथमें हथकड़ी पहन, बीरभद्रका लाल शाल ओढ़कर,
आगे पीछे सिपाहियोंसे सुरक्षित हो, पालकीपर सवार होकर
सुहालह चला । हाथमें कड़वा बांधकर मानो वर विवाह करने
जाता है । भ्रमालोंकी रोगनीसे चारो तरफ उछेला हो गया
दारोगाभी मोहर ले और घोड़ेपर चढ़कर आगे आगे चले ।
बलभैके वक्त बीरभद्रने "उए मूल, हलील कीजिये," कहकर
दारोगा भाइयके पाकटमें एक कागज छाल दिया । सूजदर्शी
दारोगानी अशुभवसे समझा,—यह नोट है । पाकटमें हाथ
छोलकर नोटको दाव करके देख्ना,—नोटपर हाथ घेरा । नोट
पचास रुपयेका है, कि सौ रुपयेका,—यही विचारते बिचारते
दारोगाभी चले । सबके सामने मूल दरगीजकी खोलकर
देखनेका साहम उन्हे ग पडा । केवल यही पिन्ना बगी
रही,—नोट पचास रुपयेका है, कि सौ रुपयेका ।

बौरभद्र । आपके एक घण्टा लगानेसे वह बोलाता या न बोलाता, पर मूर्च्छित होकर गिर पड़ता, यह निश्चय था । पहले एकवार हमकी मूर्च्छा तोड़नेमें हम बहुत ऊँच-उठा चुके हैं । अन्तमें खिला पिलाकर इसे बलवान बनाया है । अगर हम हमकी इतनी सेवा प्रश्रुषा न करते, तो आप सुहालहको देख भी न सकते । अबतक तो यह मर गया होता । जब सुहालहके मरनेके लक्षण न देख पड़े, तो सेवा करके उसे जिंदा रखा ही उचित है । जीवित न रहेगा, तो दण्ड किसे दिया जायगा ? दण्ड होने हीसे तो फल लाभ होगा । इस कठिनाईमें सुहालहको कहीं ऊँच न हो और वह बीमार न हो जाय, इसलिये हमने अपना कपडा उँचे दे रखा है । सुहालह और दामाद दोनोंकी प्राणरक्षा एक तरह करना पड़ता है । सुतरां इस समय ऐसे सुहालह को और ऊँच देना उचित नहीं है । आप प्रमाण पाते हैं,—सुहालहको मोहर सहित गिरफ्तार करके ले जाइये,—अदालतमें हाजिर कर दीजिये ।

दारीगा । अच्छा, यही सही । अरे ! हथकड़ी और बेड़ी ले तो आ । बडा ही कठिन सुहालह है । अच्छे तरह हाथमें हथकड़ी और पैरमें बेड़ी पहनाकर दो आदमों दोनों हाथ पकड़कर ले चलो । आगे पीछे आठ आठ सिपाही रहेंगे ।

बौरभद्र । न, न, न,—ऐसा मत कीजिये । इसे पैदल नत ले जाइये । ठोकर लगने हीसे मर जायगा । सब तरहसे सुहालहकी प्राणरक्षा करना उचित है । बहुत तकलीफ

‘बरे बाप !’

सबसे काम उमी चोर लगे । चार मिनटतक किसीने धाक भी नहीं मुना । फिर दारोगाके मनकी उद्विग्न करके, सिपाही और कन्हारोंके मनको आतङ्कित करने—यह सुनो, यह सुनो,—भीषमसे भीषणतर शब्द,—यह सुनो, कहाँसे तो आ रहा है,—

‘बरे बाप !’

वह [चिह्नट ‘बरे बाप !’ ‘बरे बाप !’ की अवाज आ-पगे झुरीकी भाँति सबसे अन्तदृशको विह्वल करने लगी ।

कन्हारोंके पैर अब आगे नहीं दफ़ते,—ये लोग चौककर खड़े हो गये । दारोगाके पूछा,—“तुमलोग रुक क्यों गये ? धारी चोर बङ्गल है,—बाघ मिथ चोर डकैतका डर है,—हटानु सडे क्यों हुए ?”

यह बात कहते बाहूटे। फिर यही भैरवरव सबसे जानाई पडा,—

‘बरे बाप !’

प्रधान, सिपाहीने द्वाघ ओछकर धीरे धीरे कहा,—“हजूर । सुनिये,—इस लोप वरा कहे ? पान ही प्रतशा है,—इस प्रतशासे इस लोग न जान सकेंगे ।”

फिर लेधगर्जकी भाँति शब्द हुआ,—

‘बरे बाप !’

प्रधान सिपाहीने कहा,—“सुनिये,—प्रतशाकी तरफसे यह आवाज आती है ।”

इकतीसवा परिच्छेद ।



नीलकोठीसे घाता प्रायः दो कोन होगा। अमावस्याकी रात घोर अन्धकारमयी है। आकाशपट घोर मेघमायासे सुवज्रित है। टप् टप जल बरस रहा है। पथ पिछ्छहर हो गया है। शोरबर पालकीपर शब्दे जाते हैं। आनन्दसे, कि निरानन्दसे, जो कैसे कहे ?

एक कोन राह रुट गई। गत भयङ्कर है। घोघोर घटा मय अलस अन्धकारमें सब फोड़े मो रहे हैं। उच्चगण भी मानो शिंशु भुकाकर सो रहे हैं। माताकी गोदमें बच्चीकी तरह पक्षीगण त्रिदिन उच्चकी गोदमें सुखसे गाढ़ी नींद ले रहे हैं। भित्तियोंने भी मौन धारण कर लिया है। क्या बह भय भी थककर मो गई हैं ? इतने जाडोंमें न्यार भी तो नहीं झोलते ? घुगपूकी बोली क्यों नहीं सुन पडती ? नहीं, नहीं, सुनो, दूर—बहुत ही दूरपर घुगपू विकटध्वनि कर रहा है। उस विकट विभीषण स्वका बुद्ध भी खाल न करके शोरबरको लिये दारोगा बाबू जा रहे हैं।

घना अन्धकार और भी घना हो गया। व्योह ! यह क्या सुन पडता है,—भीषण गिनाह ! पृथ्वीका सर्वदिक् भेद करनेके, घोर अन्धकारतरङ्गको कपा व रके, न जाँ, कक्षासे एक प्रब्र था रहा है,—

दूकतीसवा परिच्छेद । १



नीलकोठीसे घाना प्रायः दो कोस होगा। अमावस्याकी रात घोर अन्धकारमयी है। व्याकाशपट घोर मैत्रमालासे सुसज्जित है। टप् टप जल बरस रहा है। पथ पिछलछर हो गया है। घोरवर पालकीपर चले जाते हैं। व्यानन्दसे, कि निरानन्दसे, सो कैसे कहें ?

एक कोन राह कट गई। रात भयङ्कर है। घनघोर घटा मय अत्यन्त अन्धकारमें सब कोई सो रहे हैं। वृक्षाण्य भी मगो शिर झुकाकर सो रहे हैं। माताकी गोदमें बच्चीकी तरह पक्षीगण तिदिव वृक्षकी गोदमें सुखसे गाढ़ी नींद ले रहे हैं। भिडिगो भी मौन धारण कर लिया है। कब वह सब भी थककर सो गई हैं ? इतनी जाडमें खियार भी तो नहीं झोलते ? घुमघुकी बोली क्यों नहीं सुन पडती ? नहीं, नहीं, सुनो, दूर—बहुत ही दूरपर घुग्घू विकटध्वनि कर रहा है। उस विकट विर्भावण रवका झुञ्झ भी ख्याल न करके घोरवरको लिये दारोगा बाबू जा रहे हैं।

घना अन्धकार और भी घन हो गया। चोह । यह क्या सुन पडता है,—भीषण तिनानद । पृथ्वीका सर्वदिक् भेद करके, घोर अन्धकारतरङ्गको कमा करके, न जाने, कहांसे एक अन्ध धारा रहा है,—

‘धरे बाप !’

सबसे काम उमो घोर लगे । धार निमटतक जिपीने झड़ भी नहीं सुना । फिर दारोगाने भगकी उद्वेगित करके, निपाही और कंधारोंने माको आतङ्कित करके—यह सुनो, यह सुने,—भीषणसे भीषणतर शब्द,—नह सुनो, यहासे तो धार रछा है,—

‘धरे बाप !’

वह विकट ‘धरे बाप !’ ‘धरे बाप !’ की अवाज शा-
घरो झुरीकी भांति सबके अन्तर्दृशको विह्वल करने लगी ।

कंधारोंने पैर अथवा चांगे तर्षीं रखें,—वे लोग चौकचर खडे हो गये । दारोगाने पूछा,—‘तुमलोग क्या ज्यों गये ? धारो और चङ्कल है,—बाघ सिद्ध घोर डकैतका डर है,—इतानु खडे क्या हुए ?’

यह बात कहते बाघूरे । फिर यही भैरवरु सबसे जानाई पना,—

‘धरे बाप !’

प्रधान, निपाहीने हाथ जोडकर घोर घोर कथा,—‘हजूर ! सुनिये—हम लोग क्या कहे ? पास ही प्रसथान है,—रस मसशासे हम लोग न जा सकीये ।’

फिर मेघगज्ज नकी भांति शब्द हुआ,—

‘धरे बाप !’

प्रधान निपाहीने कथा,—‘सुनिये,—प्रसथानकी तरफसे यह आवाज आती है ।’

दारेगा। प्रसन्नान पूर्वकी तरफ है। हमें मालूम होता है, कि व्यावाज पश्चिमसे आती है।

दूमरा निपात्ती। नहीं, व्यावाज उत्तरसे आती है।

पहला कच्चार। नहीं, व्यावाज दक्षिणसे आती है।

नशोंने स्थिर करने एकवाक्यसे कहा,—“व्यावाज चाहे जिधरसे आती हो, व्याज प्रसन्नान होकर किसी तरह नहीं आयेंगे।”

दमवार जोड़ा शब्द सुन पडा,—

घर बापरे बाप।”

पहला निपात्ती। हजूर। कुछ भी समझ नहीं पड़ता। दमवार ऐसा मालूम होता है, मानो शब्द दक्षिणसे आता है।

उस समय सबको ऐसा मालूम होने लगा, मानो चारों ओर “बापरे बाप”की व्यावाज सुन पड़ रही है। “बापरे बाप”, की व्यावाज मानो व्यावाजसे नीचे उतरती आती है।

सबको उत्साह देनेके लिये दारोगाने कहा,—“डर का है ? यहाँसे धाना पौन कोमसे क्यादि नहीं है। शायद वहाँ कोई व्यादमी मूलयनबासे छटपटाता हुआ ‘बापरे बाप!’ चिखाता हो, फिर चिन्ता क्यों ? फिर हम लोग इतने बलवान जादमी अथवा शस्त्र और मशाल लिये चले जा रहे हैं। अगर डाकूराज सांतिधा भी आवे, तो कुछ डर नहीं है।”

पहला निपात्ती। नहीं हजूर। यह शब्द व्यादमीका नहीं है,—बाप अथवा ही तरफ सुनकर देखिये न ? कोई व्यादमी मरनेपर रक्त हुआ है। वही पैरपर बैठकर ऐसा भयानक शब्द करता है। यह सुनिये, सुनिये,—

‘घरे बाप।’

शब्द मानो आकाशसे आ रहा है ।

दारोगा । उरो मत, उरो मत ।—इतनी रातमें इस वनमें
घट रहनेसे तो नहीं चलेगा,—चलो ।

निपाही । नहीं हुआ । अज्ञान होकर हमलोग न
जा सकेंगे ।

दारोगा । यदि अज्ञान होकर न जा सकेंगे, तो उस टेढ़े
रास्तेसे चलो । बेप्रायदा मील भरका फेर पड़ेगा, तुम्हें ही
कष्ट होगा ।

निपाही । हमलोगोंको चाहे तकलीफ हो,—आध बोसकी
जगह चाहे एक कोसका फेर पड़े, पर अज्ञान होकर तो
हमलोग न जायेंगे ।

दारोगा । अच्छा, तब टेढ़े रास्ते हीसे चलो—ऊह उर
नहीं है, चलो ।

आखीर सबकोई आध कोससे भी अधिक फेर खाकर
कटीली राहसे हो जाने लगे । उरसे हो अथवा कटीली राहके
कारण ही हो, बाहकगण जलद न जा सके ।

बोच बीचमें एकनारअवाण आती है,—

“अरे बाप ।”

आवाण सुनतेही सब आदमी चौंक उठते हैं । जितना
बेलोग अचमर होने लगे, उतनाही निवट बह “अरे बाप ।”
की अवाण साथ साथ जाने लगी,—उतनाही सबको अन्तरात्मा
सूझने लगी ।

‘प्राय’ छई पहर रात बीत गई । दारोगा दलबल सहित
बहुत ऊँचे जङ्गलकी राह खतमकर पकरी सड़कसे जाने लगे ।

उन्होंने कहा,—“यवा काव भी उर है ?” इस सहकसे प्रार्थ कोस या टाई पाज लौर जाने नीचे घाना मिलेगा ।

इसी समय एक गिराखल मन्मन्मैमेदी शब्द आया,—

“वापरे ताम ।”

प्रधान सिपाही । देखिये हुजूर!—सुनिये । शब्द मानो धीरे धीरे गूदी चला जाता है । मातूम होता है, कि यह शब्द पक्षीय हाथकी दूरीपर हो रहा है । और हमलोग चल नहीं सकते । हमलोगोंकी देह अणु हो गई है ।

दारोगा । उर क्या है, चलो ।—और थोड़ी दूर जानेसे घानेके फाटकपरकी रोशनी देख पड़ेगी ।

दारोगाके कहनेसे वहलोग फिर चलने लगे ।

कुछ दूरपर एक बड़ीक टखनें पारही ताडका एक पेड था । प्रधान सिपाहीने उ गली दिखाकर दारोगासे कहा,—“हुजूर ! यह देखिये,—कौन तो खडा है ! ऐसा मातूम होता है, कि उसका शिर आसमानमें जा लगा है और हाथ हम लोगोंकी ओर आ रहा है ।”

सबको उनी तरफ देखने लगे । कछार उरसे घबराकर “आरे हां रे, आरे हां रे ।” कहते हुए पालकीके साथ गिर पड़े । उसी समय फिर शब्द हुआ,—

“अरे वापरे वाप !”

उल्लोनोंको यह मातूम होने लगा, कि इसी ताडकचरुर्षी मुतसे यह शब्द आ रहा है । दारोगा साहब समझ गये, यह ताडका पेड है, भूल नहीं है, उन्होंने दाहरोको घस काया, चाबुत्त मारनेपर भी उदान हुए और कहा,—“देख

यह ताकता पेड है । और झुझ नहीं है । अगर फिर ऐसा बन्माशी करेगा, तो हड्डी तोड़कर थुर थुर कर देंगे ।”

मृतके डरसे मारका डर प्राय व्यक्त होता है । कष्टार लोग पालकी उठाकर फिर चलने लगे । वह “बापरे बाप,” का शब्द धीरे धीरे त्रिकटवर्ती होने लगा । ऐसा जात पढ़ने लगा, कि चार दस कदम चलतेही वह “बापरे बाप !” का शब्द राक्षसकी तरह उन लोगोंको गिगाज जायगा ।

धीरे धीरे पुश्तके फाटकपरकी रोशनी देख पढ़ने लगी पर “बाप रे बाप !” की आवाज और भी बढ़ने लगी । हृषमें शिवाइ या घुसा ।

एरोगा बाबू सोचने लगे,—“यह क्या ! क्या यह “बापरे बाप !” की आवाज धानके अन्दरसे उठीं आती ? ओह ! ऐसा त्रिकट शब्द तो हमने कभी सुना उठीं !”

एरोगाने घोड़ेको तेज दवावा । कष्टार भी तेजीसे जाने लगे । सिपाही लोग भी सोचने लगे । हादस बज्जके त्रिपिपिनी नार्द धांसे शब्द धाने लगा,—

“बरे बाप रे बाप !”

पानीमें पडु चकर जो झुट्ट देखा, उससे तबडो घाज्जु, ब हूसा । देखा, एक दोषाकार छय्यय, भीमकी भांति यज्जय पुदयकी कनिष्ठ बज्जुलीमें खूब मज्ज्मासे रखी थावकर उमें लटका रगा है । वह बीरपुदय क्यल छोटी उ मरुपर घटक रहा है । पैर चौड़ेको मोवउठे बडे है । बाया हाथ गोद- गे कसरनें बाध दिया गया है । एक एादनी टूणपर चढ़कर गेप बोचनें उसकी पीठपर ये त मारता है । वह भीज्जुब

मन्थासे लोग यत्ने रातलगा इमी तरह झूल रहा है । उसकी दोनो काल लाल आंखें भानो व्याप ही व्याप निकली आती है । दीर्घ गिन्धान जोरसे चल रहा है । वक्ष स्तीत हो रहा है । और बीच बीचमें वक्ष बोलता है,—

“अरे बापरे बाप ।”

सब कोई निमेषशून्य लोचनसे उस आदमीको देखने लगे । रामप्रसाद भी पालकीसे उतरकर उसे देखने लगा । दारोगाजी भानो मन्त्रमुग्ध होकर खड़े हुए । उस समय वक्ष भीम प्रवृत्त, मदुर तथा उच्चरवसे बोल उठा,—

भाई ! एक एक बार काली काली कहो । भाई !— एक एक बार शङ्करी बोलो । भाई ! और कुछ मत कहो,— मन ही मन काली काली कहो !”

दारोगाजीने हुक्म दिया, कि रस्मी काटकर इसी नीचे उतारो । उन्होंने यह भी कहा,—“व्याज रात ज्यादा घोंत गई है । हम बहुत थक गये हैं—दोनों चनामियोंको यथा स्थानमें यत्नपूर्वक रक्षा करो । अभी हम अपने कमरमें जाकर सोवेंगे ।”

अन्तीसवा परिच्छेद ।

कात्यायनीको सबने छोड़ दिया था, छोड़ा था नहीं केवल श्मशुदयालने । पाली हुईं भौा भी उठ गई, पर श्मशुदयाल नहीं भागा । भागा तो दूर रहे, कात्यायनीका इंस जितना बढ़ने

लगा, अन्नकष्ट नितना अधिक होने लगा, कात्यायनीकी सन्तानोपर रघुदयालका उता ही अनुराग एव आकर्षण बढने लगा रघुदयाल आधापंट खाकर ही रहता, पर रमाप्रसाद, बहु एव माता कात्यायनीको पेटभर खानेके लिये अनुरोध करता । लक्ष्मी तो उसका प्राण ही थी । लक्ष्मी कभी रघुदयालके कन्धेपर कभी गोदमें और कभी शिरपर सुशोभित होती है । रघुदयाल कभी रोरावत बनता है, लक्ष्मी उसपर सवार होकर आगनभरमें घनती है । आन रघुदयालको सबेरे हो कुछ काम थापडा,—लक्ष्मीके लिये दूध खीजना,—चाहे जिस उपायसे हो, रघुदयाल सबेरे कात्यायनीके हाथमें चाधसेर दूध रखकर, फिर मकानसे निकलता । इसवार वह चावल, दाल, नमक और तेलकी फिरकरने जाता है ।

रघुदयालको तेज चलनेकी शक्ति अपूर्व थी । बहुत शिघ्रा, बहुत अभ्यास और बहुत यत्नसे यह शक्ति सञ्चित हुई थी । वह बिना कष्ट ही आसानीसे दश बारह मिनटमें एक कोस राह चल सकता था । अगर हाथमें लम्बी लाठी रहती, तो आठ ही मिनटमें वह एक कोस चला जाता था । इस तरह एक दममें सोलह कोस राह चलनेपर भी रघुदयालको विशेष कष्ट न होता था,—हृत्पतातक न था । इस समयके अधिकांश आदमी,—बकील, महरबाला, डिपटी, किरानी, मम्पाटक,—इस बातका अविश्वास कर सकते हैं किन्तु सत्यतय ही उस समयके कोड कोड आदमी इतना तेज चल सकते थे । उस समय शिघ्रा थी, दृष्टिमें ताका थी, उपयुक्त अस्त्र था, दुर्गा थी, उन्माह था, आकर्षणकता थी,—इन्हीसे लोग चल भी सकते थे । किन्तु

इस समय एक तरह रोगोंकी चलनेकी शक्ति जाती रही ।
 ग्लेगगाड़ी, घोडागाड़ी, ट्रामगाड़ी, बैलगाड़ी पैरमाडा, मोटर
 गाड़ी, पालकी, डोली,—जिधर व्याख पैन्धे, उधर ही थर
 सब सवारियां मजी तय्यार रहती और मानो सुमाफिनोस करती
 हैं,—“व्याव्यो, व्याव्यो, हमारे पाम आव्यो, हमारे कचेपर
 मवार होव्यो—हम तुम्हें आशामसे ले जायगी ।” जो द्रम
 रुपया कमाते हैं, वह भी पाच पैसा देकर ट्रामपर सवार होती
 हैं बिना सकार तकादा करने जाता हैं, प्रायः ट्रामपर चढ़कर ।
 मछलीवाली मियालदृष्टसे तूताधानार जाती हैं,—घोडागाड़ी
 पर चढ़कर । हलधर मोटी,—दर्भतल्लेकी चार पैसेवाली
 गाड़ीपर चढ़कर अलीपुर जाता हैं । रामलखन पिडाने एक
 दिन कोलूटोवेसे वागवानार जानेके लिये पाच पैसा ट्राम भाडा
 मांगा था । निम्नश्रेणीके लोगोंकी तो दशा ऐसी हैं । उच्च
 श्रेणीके लोगोंकी अवस्था कितनी शोचनीय हो गई हैं, सो बुद्धि
 मान लोग विचार कर देख लें । कडी धूप पडनेपर इस समय
 घोडागाड़ीकी छतपर खनका परदा टाला जाता हैं । ऐसी
 दशामे पैरमें दर्द क्यों न होगा ५ चलनेकी शक्ति जाती क्यों
 न रहेगी ? गाठोंको वातरोग क्यों न जकड लेगा ? मन्दाग्नि,
 अजीर्ण, अम्बरोग क्यों न पैदा होगे ? डाइविर्टीम ही क्यों न
 होगा ? और अकालमृत्यु ही क्यों न आनेगी ?

पंचाम वर्ष पछेदे लोग ऐसे पङ्ग १ हुआ थे । उस समय
 यदि किसीको कहीं जाता पडता था, तो वह पैन्ल ही जाता
 था । दशवारह भले चादमी—एक साथ मिलकर, माथमें
 वर चाकर एव मोटिया और बंदगीवालेको लेकर किसी

उत्सव था पक्के उपलक्षमें घर जाते थे,—नित्य सात आठ कोम राह चलने थे, पर चलनेको तकलीफ एकदम कुछ भी मालूम नहीं होती थी। राहमें आपसमें बातचीत, हसी दिहानी करते और सरस सड़ीत बलापते, नाना नगर ग्राम देखते, नद नदी तथा सरोवरकी शोभा निरखते, अनेक अपरिचित आदमियोंसे बातचीत करते, शस्यशालिनो वसुन्धराका सौन्दर्य अरुभव करते करते चले जाते थे। कहीं पहाड, कहीं भरना, कहीं बडे बडे वृक्ष, कहीं गड्ढोंका उछलना कूदना, कहीं मोरका नाच,—सभी पथिकोंकी दृष्टि तबे पडते थे और चुग कौसी अच्छी लगती थी। और ऐसे सूक्ष्म सुखचिके समयमें, रम यदि वीभत्स न हो, तो कहते हैं,—कोष्ठ साफ और मन प्राण मनुष्य रहते हैं। उस समय चीजे मस्ती मिलती थीं। दूध बजे चट्टीपर पहुँचकर घड़ी मामें होता, कि बरा खाय। दूध, दही, घी वगैरह सभी मिलते थे। तभी पैसेका सेरभर दूध मिलता था। अच्छा घी रुपयेका पाच सेरसे कम न आता था। दही दूध और चीजे साथ गलेतक खिचडी खा लीपर भी कुछ कष्ट न होता था। सांभरके वक्त खट्टी डकार भी न आती थी। पेटमें खोंचा भी न मारता था। आदमी पीछे, दो तीन पैसा खर्च करने हीसे ऐसा अच्छा भोजन मिलता था। पैदल चलना, निर्मल वायुसेवन, निर्मल सरोवर या नदीका जल पीना,—यही चुषाके कारण,—निर्भोगताका हेतु है। ठमाठस भरपेट खाकर एक कोम राह चलनेपर सब भस्म हो जाता था,—यार भूख ष्योंकी खोंहो बनी रहती थी।

पर अब वह समय—यह दिन नहीं है। इस समय

पैदल चला व्यपमानरुचक है । व्यपमान दूर जाय,—इस समय पथ चलनेका अवसर नहीं है । पहले तो चलनेकी शक्ति नहीं,—थोडा चलने हीसे हाफना पडता है,—पैर दर्द करने लगते है,—बुटनेमे पीडा होने लगती है । दूसरे ३ बड़ेके जाल जैसा रेलपथ चारो ओर फैला हुआ है, पैदल चला जाय, तो कहां ? फिर रेलगाडीसे उतरते ही देखिये, तो घोडागाडी, बैलगाडी, इक्का, पालकी आदि मालुद है । यदि नदीके किनारे रेलपथ हुआ, तो नभो-मण्डलके तारोंकी भाति नदीपर नावोंको सुशोभित पाइयेगा । माभी लोग सुसाफिरीको पुकारत है,—“हमारी नावपर आइये,” “हमारी नावपर आइये”, कोई माभी यात्रीको गोदमे उठाकर नावपर लिये जाता है, कोई माभी सुसाफिरीकी गठरी शिरपर रखकर दौडा जाता है और सुसाफिरी गठरी खो जानेके डरसे उसने पीछे हाफता हाफता दौडा जा रहा है, किसी नावका माभी यात्रीका दाहिना हाथ पकडे है और एक दूसरी नावका माभी उसका बाया हाथ धरे है, दोगो अपनी अपनी ओर खींचते है । यात्री “छोड दे, छोड दे,” कहकर चिक्का रहा है । इतनेमे तीमरा माभी बाया और यात्रीकी कमर पकडकर खींचो और कहने लगा,—“हमारी नाव सबसे अच्छी है । हमारी नावपर यह कडगर जा चुके है । बाबू हम आपको पहचानते है ।” यात्री तीन तरफसे खोचे जानेपर धवरा उठा और बाहि मधुच्छटा ।” कहने लगा । फलत मनुष्यको कोड पैदल चलने नहो देगा, मागे चलना निषिद्ध है । अथवा चलनसे मानो

है मामकी लेल होगी,—इस तरहकी कोई राजाया प्रचारित हुई है ।

। किन्तु रवुदयालके समय चलनेके निनाय और कोई उपाय न था । बड़े आदमी पालकीपर आते जाते थे, बाकी आदम पैदन ही चलते थे ।

। नौकाकी मवारो नई सुखकी मवारो है । विशेष करके घनोलोग सपरिनार नौकापर चढकर ही काशीजी जाते थे । नावपर चढकर भ्रमण करनेसे म्यास्या बहुत अच्छा रहता है । भुख भी खव लगती है । घेडेकी मवारो भी उस समय थी । लोग रान सवारी भी करते थे । घेडेकी सवारीमें जैसा आनन्द है वैसा ही उग्रकार भी है ।

चाहे जिन तरफसे देखिये, उस समय विलासिताके उपकरणके अभावे लोगोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता था, बलयोग्य भी खूब था, कष्ट नहिणु था अधिक थो, माथही माथ मनकी सुतों भी समधिक थी ।

इस समय नगरेकी राजत्वका मध्यान्ह,—पूर्ण मरुहिका समय है ।—चारो ओर जयघण्टा घहरा रहा है—इस समय रैलगाडी, घोडागाडी बगैरहके बिना किसी तरह चल नहीं सकता । हम लोग एक तरह मानो कलके आदमी हो रहे हैं । कलमें रहते हैं, कलसे उठते और कलहीसे बैठते हैं,—मानो अपना व्यस्तिय है ही नहीं । जन कलवा, गौशनी कलकी, गानदा—रुलका, मायलागा—कलका ;—शुल्करो का पत्येक घर मानो कलका ही बना हुआ है और कलहीसे चालित होता है । ममेरे चारपाईसे उठतेही दरिदेगाक्ति

थे। जो कुछ पुरस्कार पाते, उससे कात्यायनीके परिवारका भरण पोषण करते थे। गांवके बीस सट्टयाज रघुदयालको गुरुकी भाति पूजते और उनका पदरज छेते थे। रघुदयालका आकार प्रकार, युद्ध कौशल और विक्रम देखकर यदि कोई बडे आदमी कहते,—“रघु! तुम हमारे यक्षा रक्षी, खाना पीना कपडा और पन्द्रह रुपया महीना देंगे।” रघु कहते,—“हुनूर! माफ कीजिये! हमारे एक बूटे मा है। उसे अकेले छोडकर हम कहीं रह नहीं सकते।”

सक्षत्री रक्षीग कपडा बहुत प्रसन्द करती थी। रघुदयाल यदि कहीं लाल कपडा पुरस्कारमें पावाते, तो लाकर सक्षत्रीको पहनाते पहनाते कहते,—“अच्छा, यताव्यो तो यह कैसा कपडा है?”

सक्षत्री। अच्छा है,—रंगा हुआ है,—बहुत अच्छा कपडा है। तुमने कहा पाया?

रघु। हम तुम्हारे वास्ते खरीद लाये हैं।

सक्षत्री। नहीं,—तुम भाग लाये हो। तुम्हारे पास पैसा कहाँ है? मा कहती हैं, कि रघुदयाल पैसा कहाँ पावेगा? मांगा हुगा कपडा मैं न पहूंगी,—माने मनाकर दिया है।

रघुदयाल चुप रहता, कुछ उत्तर न देता था।

उस समय डकैतीका प्राडुर्भाव था। पर रघुदयालने उरने मारे उन प्रदेशमें डकैती न होती थी। युवावस्थामे रघुदयालने, डकैतीके प्राय पचास दलोंको डकैती करते पकडा था। कहीं डकैती होती, तो रघुदयाल क्रुद्धते फादते बहा जा पहुँचते था। डकैतीसे गप्प कर कहते,—“फैको छाठी तखवार।” अगरे

वे ग. सुनते, तो रघुदयाल उन्हींकी छाठीसे उाके पैर तोड़ दंते थे । रघुदयालने हुद्दारसे कितने ही डकैतोंकी छाठिया व्यापही व्याप हाथसे छट पडती थीं ।

इस तरह रघुदयालका नाम फैल गया । डकैत लोग उनकी शरणमें आ गिरे । बन्दोबस्त यह हुआ कि उनने गायसे बारह कोमके व्यन्दर कौई डकैती न करे ।

पन्दरह वर्षतक खाना पीना कपडा और दूध सपया महीना देकर रघुदयालने शङ्करीप्रसादके यहां ऐसे सिद्ध विक्रमसे काकातिपात किया । शङ्करीप्रसादकी मृत्यु होनेपर सुख सुभ्य अस्त हुए, विषय वैभव विनष्ट हुआ — कात्यायनीका सब कुछ खाहा होगया पर रघुदयाल उसी तरह नौकर रहे, — बिना वेतन, बिना भोजनच्छादा उसी तरह नौकर रहे, सिर्फ यही गद्दी, खद जो कुछ कमाते उसे कात्यायनीकी देकर उसी तरह नौकर रहे ।

चौतीसवा परिच्छेद ।

पाठकको याद होगा, कि इनके पहले कात्यायनीने घरमें डाका पडा था । डकैत लोग सब कुछ लूट ले गये थे, कुछ भी न छोड़ा था ।

डकैतोंने कात्यायनी वगैरह किसीको कष्ट न दिया था, न मारा, पीटा था और न भा शङ्करीके गृहमें ही प्रवेश किया था । अगर प्रवेश करते, तो दक्षीपूनाकी लामची, घान और

भौद्धर भी न बचती । मालूम होता है, कि डकैत कुछ भद्र और सभ्य थे ।

महावीर, महापराक्रमशाली रघुदयालने रहते कात्यायनीके घरमें जाका कैसे पडा ? रघुदयाल उस दिन घरपर न थे,— धन कमानेके लिये दश ग्यारह कोस दूर निकल गये थे । यथागियम तीसरे पहर वह घर लौटनेके लिये उठन हुए । उस गांवके जमीन्दारके एक ही लडका है । उसे सांपने काट लिया है । चारो ओर हाहाकार मच गया है । अनेक चौका गण आये है, पर किसीका किया कुछ भी नहीं होता । लडकेके प्राण निकला चाहते है, मुझसे फेना निकल रहा है ।

रघुदयालने सुना, कि जमीन्दारके लडकेको सांपने चूस लिया है । अब रघुदयाल मकान न जा सके । वह लौटे और जमीन्दारके मकानपर गये । देखा, कि सदर घरमें कोई नहीं है,—केवल एक आदमी बैठा है । पर अन्दरमहलमें जोगोंकी अपार भीड लगी है और कोलाहल तथा रोनेके शब्दसे गृह परिपूर्ण है । रघुदयालने हाथ जोडकर कहा,—“महाशय । आपसे एक बात कहना है ।”

जो आदमी बैठा है, वह जमीन्दारी सरिश्तेका सजाषी और एक प्रयाग कर्मचारी है, वह जमीन्दारका निकट सम्बन्धी भी है । रघुदयालकी बात सुनकर उसने विरक्त हो कर कहा,—“भाई आज बड़ी भारी विपद आ पडी है । तुम चले जाओ, क्या यह बात सुननेका समय है ?”

रघुदयाल । विपदकी बात हम जानते है । जिस लडकेकी सांपने काट खाया है, उसे एकवार हम देखना चाहते है ।

खनाथी पदमेसे ही क्रोध बैठे थे,—उन्होंने कहा,—
“तुम्हारी बुद्धि नैसी है। मालिक, मालकिन और अन्यान्य
स्त्रियां रो पीट रही हैं,—रोगीका मृत्युसमय व्या पहुं चा है।
तुम खाग क्या देखने जाओगे ? चले जाओ यहाँसे,—
यद्माश ।”

रघुदयाल । (हाथ जोड़कर) हुजूर । क्रोध मत कीजिये ।
हम बुरी नियति नहीं आये,—हम सापके त्रिप उतारनेकी
दो एक औषधि जानते हैं ।

खनाथी । यह वैषा पागल है ! इस देशके जितने
प्रधान प्रधान गुणी और सापका मन्त्र जाननेवाले हैं, सभी
आये, पर किसीका किया कुछ भी नहीं हुआ,—और तुम
रुहति हो, दो एक औषधि जानते हैं । यह दो एक औष
धिकी काम नहीं है । मुझे दिरु मत करो,—अपने घर जाओ ।
भीतर जादूईऔर गोलमाल बजानेकी जरूरत नहीं है ।

रघुदयाल । हुजूर । भाप कीजिये,—क्रोध मत कीजिये,—
हमे अन्दर मत जाने दीजिये,—या आप यह बता सकते
हैं, साप कहाँ है ? आनेके वक्त राहमें सुना है, कि साप पकड़
कर रख लिया गया है । सापको एकबार हम देखना
चाहते हैं ।

खनाथी । तुमने तो शकोदम कर डाला । जोंककी
तरह चिपट गये । उस प्रकाण्ड मोदमा सापकी देखकर
तुम क्या करोगे ? उनके पाम जाना ही कौन है ?

रघुदयाल । सापके पाम जानेमें डर कुछ भी नहीं है ।

खनाथी । यह देखो,—दो रस्सीके फाड़नेपर,—पहुं

दृष्टके नीचे एक बड़ा भारी घड़ा रखा हुआ है। उसीमें सांप है। सांप जैसा लम्बा है वैसा ही मोटा भी है। मेरे हाथसे हो बायो होगा। प्रधान भाडनेवालोंने एकवार घड़े परका पत्थर उठा लिया था। सांप धनसे टकनेको छटाकर दो हाथ ऊंचा उठ गया था। वह सांप नहीं, कालसांप है! सर्वनाश मत करो,—उसके पास मत जाओ।

रघुदयाल। हुजूर। कुछ भी डर नहीं है।—आप चुपचाप बैठे बैठे सिर्फ देखिये।

खशाब्दी। अरे बापरे। तुम घड़ेका टकना खोलोगे क्या? टकना मत खोलो। अगर सांप किसी तरह घड़ेसे निकल जायगा, तो गांवके सब आदमियोंको डर लेगा।

रघुदयाल। महाशय! आप शीर मत कीजिये,—चुपचाप बैठे बैठे देखिये, कि हम क्या करते हैं। कुछ डर नहीं है।

रघुदयाल धीरे धीरे घड़ेकी ओर नितना ही जाते थे, उतना ही सांपकी फुमकार सुनते थे। निकट पहुँच और गम्भीर गर्जना सुनकर उन्होंने कहा,—“सांप, सांप, सांप! बेटा, बेटा। तुमने इतना क्रोध क्यों किया है? तुम्हें छोड़ देंगे। जिसे तुमने काट खाया है उसे बचाओ।”

रघुदयालने जमीनपरसे कुछ धूल उठा ली। हाथिने हाथमें धूल रहीं, बाये हाथसे पत्थर छटाकर टकना खोला। सांपने धीरे धीरे शिर उठाया। सटपट नैससे मागो रघुदयालकी ओर देखता रहा। रघुदयालने कहा,—“क्यों बेटा? तुम्हें डर क्या है? इतना कहकर उन्होंने हाथकी धूल जमीन

पर फेंक दी। केवल घोड़ीसी घूल फेककर सांपके शिरपर डाल दी। फिर रघुदयालने कहा,—“बेटा। डर नहीं है। हम तुम्हें छोड़ देंगे। अब तुम हमारे साथ आओ और जिसे काट लिया है उसे बंधा करो।”

अब रघुदयालने धीरे धीरे दाहिने हाथसे सांपका गला पकड़ लिया। सांप तेजझीन, तिर्जोंव हो गया,—आप ही आप धीरे धीरे उसका शिर छटक गया। रघुदयालने दाहिने हाथपर सांपको खेटा लिया। सांपकी पूछ रघुदय लका गला जमेटर पीठपर बेरोंकी भांति छटकने लगी। सांप सो गया। रघुदयालने कहा,—“बेटा। सो जा।”

इसी अवस्थामें दाहिना हाथ पसारकर सांपको लिये आनन्दसे पूरे जल्दी जल्दी खजांचीके पास जाकर रघुदयाल कहने लगे,—“महाशय। कुछ डर नहीं है। रोगीजी जायगा। सांप अच्छी जातिका है। रोगीको कुछ भी डर नहीं है। अनेक प्रकारके गोहमा होते हैं। अगर यह जङ्गली होता, तो किसी तरह हमारी बात न सुना और रोगी भी अच्छा न होता।”

खजांची—“सर्वमाश हुया सर्वमाश हुया” कहकर भागनेका उपक्रम करने लगे। इसी वक्त धावुके मकानमें एक दरवानने रोते रोते बाहर आकर कहा—“खजांचीजी। छोटे बाबूका रङ्ग अच्छा नहीं दीखता—आप शीघ्र आरये,—माखिक बुना रहे है।”

इसका कहनेके बाद दरवाजाकी नजर रघुदयालपर पड़ी। दरवानने उन्ह एकवार देखा, दोबार देखा,—तोभी उसे

प्रतीति न हुई,—तीन बार देगा। अन्तमें कक्षा,—“कौन ? गुरुजी। हा गुरुजी हो तो हैं।”

दरवाने गुरुजीके चरणपर मस्तक प्रणाम पदरज लिया और कक्षा,—“गुरुजी। रक्षा कीजिये—बड़ी विपद है।

गुरुजी। इतने दुबले क्यों हैं ? हमतो पछ्चान ही न सके।”

रघुने आशीर्वाद देकर कक्षा,—“बोरु ! चिरजीवी हो ! हमे पछ्चान लिया तो ?”

दरवाका नाम बीरबाहु है। वह जमीन्दारका गृहस्थक है। बीरबाहुके शिक्षक रघुदयाल है। उसका नाम जैसे बीरबाहु है, दोगे बाहु भी वैसे ही अमानुलम्बित है। वह पहले डकैतोंके दलमें था। सरदार हो गया था। रघुदयालके उपदेशसे डकैती छोडकर गृहस्थके गृहका दरवान बन गया है। बीरुने रोते रोते रघुसे कक्षा, “गुरु आप आ गये हैं, तब कुछ चिन्ता नहीं है, छोटे बाजूकी जात बंध जायगी। आप शीघ्र हमारे साथ आइये।”

खजांची यह मानरा देखकर शान्त हो गये। आगे आगे बीरबाहु बीचमें रघुदयाल और पीछे बीच हाथके अन्तरपर खजांची, इस तरह तीनों आदमी अन्दर चले।

पैतीसर्वा परिच्छेद ।



गोहमन सांपके काटनेपर क्या घादभी बचता है ? डाक्टर
 वेंतान्त कुमार बी० ए० एम० बी० बोला उठे,—“गर्हीं,—बचता
 नहीं । सांप काटनेके वक्त अगर जखममे विष छाल सके, तो
 आदमी किसी तरह गर्हीं बच सकता । जगतमें ऐसी कोई
 भी शक्ति गर्हीं है, जिससे विषकी गति झुझ भी सक सके ।”

डाक्टर पुद्गल भैरव बाबू एम० डी०ने इस बातका अनुमोदन
 करके कहा,—“ठीक है । इच्छलण्ड, फ्रान्स, जर्मनी और अमे
 रिकाके बड़े बड़े शुभचर्मविशिष्ट डाक्टरगण अतक इस
 रोगको औषधि गर्हीं निकाल सके हैं । हमने भी सांपके काटे
 हुए किसी आदमीको बचते गर्हीं देखा ।”

बाबू विश्वमकेश्वरी—वैज्ञानिक गरशार्हलमे कहा,—विज्ञान
 नका बल अमीम धनना होनेपर भी, विज्ञानके बलसे एक
 तट्टेमें सौ योजन दुरका समापार धा सकनेपर भी,—विज्ञान
 सर्हा पराजित है । विज्ञानका फन्दा लगाकर चर्मको पकड़
 सकते हैं,—अधिक दवा,—विज्ञानजालमें सारी पृथ्वीको फसा
 मर्षष्ट सकते हैं, पर विज्ञान अलिके त्रिद्वट अज्ञान है ।”

हलधर होमियोपाथने कहा,—सब याले ठीक हैं । मैं काल
 रासि गर्हीं उरता, शीतलासे निडर रहता हूँ, विडम्बिक
 पथेगमें भी मैं अमय दे देता हूँ, पर जय सुना, कि सांपन
 नाटा है, तप समल जाता हूँ, कि रोगी कभी बचेगा गर्हीं ।”

सदेशहितैषी, सद्गता श्रीमान् महेश्वरनाथ भाटसिन्धी कहा,—“यदि हम उस वक्त जीते रहते, अन्ततः हम यदि उस समय माताके गर्भसे बाहर निकलने पाते,—जिस समय डाक्टर फेररने इस भारतीय दौल प्रजा पुञ्जका रक्तरूप एक लाख रुपया गवरमेण्टसे लेकर सांपके विषकी चिकित्साकी दृष्टा परीक्षा आरम्भ की थी, तो हम उस वक्त ऐसे प्रबलवेगसे विराट विद्याल, विधम चान्दोलन मचा देते, द्वादश दैवदारु बुल्ल दीर्घ दीर्घ इतने अधिक आवेदन करते, हिमाखयके तुङ्ग श्दङ्गपर खडे होकर ऐसी अभ्रमेटी विकट वक्तृता भाडते, कि इस प्रबलप्रताप दृष्टिश्च सिद्धकी भयसे कापते कापते हमारी शरण लेना पडती ।”

फलत, इस समय यही मुननेमें आता है, कि सभ्यसभार और शिचित सभारमें सांपके विषकी औषधि नहीं है। सुतरां वकील, हाकिम, स्कूलमाएर, एड्शनमाएर, पोस्टमाएर, तक कहते हैं, कि गोहमन सांपके काटखीपर आदमी फिर नहीं बचता ।

सभ्यसभारमें, शिचित नगरीमें चाहे सांपके विषकी औषधि न हो, पर असभ्य सभारमें, अशिचित गांवमें किसी किसी इतर व्यक्तिने पास सांपके विषकी ऐसी अच्छी अच्छी दवाइयां थीं। अब भी शायद कुछ कुछ हैं। सायतको इतनी तोब, विनीषण अगिरसिमें भी शायद आज भी वे सब महौषधियां भग्नीभूत नहीं हुईं ।

रघुदयालके वक्तमें सभ्यता कुछ कम थी। इष्ट उष्टियां रैदायके हथंडा एशामे तब कानने छाय ही जगा था ।

उस वक्त बहुत घादमी लगाड़ी काटनेका काम करते थे ।
सुतरां उस समय सभ्यता श्वेत पद्मकी कूड़ी भर देख पड़ी थी ।
उस समय रघुदयालके पास सांपके विषको दवा थी ।

पन्थकार भी कुछ चसभ्य है । उन्होंने विश्वासपात घाद
मियोमे नफल सर्प चिकित्साकी बात सुनी है, विधधर सांपके
काटेहुए घादमीको भला चङ्गा होकर बसार यात्रा निर्वाह
करते देखा है ।

हमारे देशमें, विशेष करके हुगली, बर्दवान, बाङ्गला बिर्डीमें
पहले सांपका खेल होता था । अब भी कहीं कहीं होता
है । पहले होता था बड़े समारोहसे चार अनेक छोटे छोटे
गावोंमें, अब होता है चुपचाप एकाम्तमें और बहुत कम
गावोंमें । सांपके खेलके देवता महादेव मन्षा इत्यादि हैं ।
बहुत दूर दूरसे सांपका विष उतारोवासे घोभा इकट्ठे होते
थे । वे लोग अपने अपने साथ अनेक प्रकारके विधधर सांप
लाते थे । बड़े बड़े धुरम्बर उल्लाह व्याते थे । घसखा चेलोंको
गिने कौन ? शिवमन्दिरके सामने बांस या काठके लूँचे लूँचे
मन्ष बनाते थे । ऐसे बहुतसे बड़े बड़े मन्ष बहा सुशोभित
होते थे । सब मन्ष व्यापधमें मिले रहते थे, इच्छा होनेपर
एक मन्षसे दूसरेपर और दूसरेसे तीसरेपर जा सकते थे ।
उल्लाह लोग चेलोंके साथ सांपको पितारी लेकर मन्षपर व्याते
और सांपका विषम खेल आरम्भ करते थे ।

उस वक्त उल्लाह लोग उन्नतप्राय रहते थे । पहले
उल्लाहोंने वादानुवाद चला,—“इस सास कोई नया और नियजा
सांप लाया है, कि नहीं ?” यदि किसी उल्लाहने दृष्टा, कि

“हाँ जाये है,” तब उससे पूछा गया,—“इस सापके विषकी
 औषधि भी ध्यापिकार कर सके हो, कि नहीं ?” यदि उसने
 हमे कहा, कि “हाँ निकाजा है,” तो उसी समय चारो चोर
 जयध्वनि धोने लगे। पहले वह साप सबको देखाया गया।
 अन्यान्य उस्तादोंने बादागुवाए आरम्भ किया,—सर्प नई जातिका
 है या पुरानी जातिका ? जब बादागुवाएमें वह ठीक हुआ,
 कि यह साप नया है, तो उस उस्तादके ध्यानकी सीमा
 नहीं रहती।

पहले यह काम समाप्त हो जानेपर अन्य रूपसे साप
 दिखाये जाने लगे। किसी उस्तादने अपने बेलोका सर्प
 सापसे भूपित किया,—सापकी पगडो पहनाई,—कुण्डलाकार
 शिरपर लपेटकर भग शीघमें रखा। कोई सर्प गलेका हार
 बना, कोई बलय हुआ और कोई मेखलाकी भाति प्रोमित
 हुआ,—इसी तरह जिस उस्तादसे नितना हो सका, अपने
 बेलोको साधागुसार उतगा सज दिया। दर्शकोंमें यदि किसीने
 कहा,—“यह साप दुन्दुब, मिस्त्रिज है, इसके विषके दात तोड
 दिये गये हैं। सर्पोंको छः महीने या वर्षभरसे खानेको नहीं
 मिला है, इससे वे सब सुर्दा सरीखे हो रहे हैं, इसीसे उस्ताद
 लोग उन्हें जिस तरह चाहते हैं भुकाते हैं और अपनी
 इच्छागुसार उन्हें व्यवहार करते हैं। यह सुनकर उस्ताद
 कहते हैं,—“आपने क्या कहा ? साप तीनहीन और विषद
 नविहीन है ? यह देखिये, परीक्षा लीजिये।”

उस दिन अपनी राखची भाषामें कोई अयोग मन्त्र पाठ
 किया। मन्त्रपरका साप क्रमशः स्तब्ध होने लगा। फ

और भी बजा, आखें घक् घक् चलने लगीं। फिर एक मन्त्र पढ़कर उस्तादने सांपकी देहपर चाय फेरा,—सांप षों षों करके गर्जने लगा। तब उस्तादने कहा,—“महाशय सांप नोचे जाता है, चपटा विक्रम दिखायेगा, ध्याप खोग सावत्रान हो जाइये।”

सांप कन धैलाकर गम्भीर गर्जन करता हुआ मस्तकमे नोचेकी और चला। खोग मारे धरके भागने लगे। यह देखकर उस्तादने कहा,—“भागिये मत, साप किमीको काटेगा नहीं। बकरी मगाइये,—देखियेगा, कि सापके काटनेपर बकरी व्याधि दृष्टमें भर जाती है, कि नहीं। तब समझियेगा, कि सांपके विषबाले दात है, कि नहीं।”

बकरी ध्याई, सापने उसे धर मया। देखते देखते उसकी देहके कौडे टप् टप् टपसनी लगे। बकरी में में करतो हुद्द गिर पड़ी। खोग ताण्णुव करने लगे।

गुरुकी व्याशानुसार शिष्यने सापके समीप धाकर उसपर कूह धूल ढाज दी। साप फिर निस्तेज निष्प्रभ और मडुचित हुआ। फिर घेलेने उसे सापने शिरकी पगडोवा ली।

बाना रज्ज, नाना धवयव, माना सुखने मर्ष खिलने दिखाये जाते थे। धीर हृण्णवर्ण, हरिद्रावर्ण, मिश्रवर्ण—वर्णका तार मध्य कितना था। वर्णन करनेकी शक्ति नहीं, देखते ही बपता है। कौद् कौद् गोहमन सांप बहे कर्म है,—आठ चापत्र कम नहीं, कौद् वामनागार है,—रूप जेषा पन है, किन्तु समाप्त शाय उद शायमे व्यादा नहीं है।

लेखने अन्तमें मपशुद्ध होता है। कौसा भीमश और

अलौकिक थापार है। इसके बाद सांपका काटना धारम्भ होता है। इसमें जानकी वारी घा आती है। कोई उस्ताद दर्शकअल्लीको समोधन करते कहता है,—देखो, यह विषैला महाकालसर्प हमारी जीभमें काटेगा, किन्तु मर गे नहीं,—मन्त्र और औषधिके जोरसे बच जायगे।” उस्तादने जीभ बाहर निकाली। तेजस्वी सांपने जोरसे डब लिया। व्याघ्राशु मार घेलोने उस्तादको दवा दी, मन्त्र उच्चारण किया, तोमौ उस्ताद तिस्तीज होकर पड रहे। मन्त्रके ऊपर सोनेकी चैष्टा की, पर चैलोने सोने न दिया, उठाकर बैठा दिया। दो घण्टा औषध देने और मन्त्र उच्चारण करनेपर उस्ताद धीरे धीरे चागने लगे। सूखे पैडकी तरह धीरे धीरे सजीव हो उठे। उस्तादके प्राण बचे, वह इसे और बोले,—हमारी यह औषधि धन्वन्तरि-मुष्ठा है।” अगर कोई कष्ट बैठता, “सांपके दांत टूटे हुए है,” तो फिर बकरीपर परीक्षा होती।

इस तरह सांपका खेब खतम हो जानेपर उस्ताद लोग दर्शकोंको सांपके विषकी औषधि बाटते और कहते थे,—“मन्त्र सोखनेकी सामर्थ्य किसीकी नहीं है। अयोग्यपात्रको मन्त्र बताना भी सुखने मना कर दिया है। देखना, सांपने जिपकी दवा देकर किसीसे पैसा मत लेना। जो पैसा लेता है, उनसे पापकी सोभा नहीं रहती और औषधि अपना गुण ही नहीं दिखाती। अतएव सावधान। पैसा मत लेगा।”

सांपका खेब अभीतक किसी किसी गांवमें होता है, पर

वैशा महोत्सव नहीं होता और गुण्यो उस्ताद भी नहीं आते, उन तरहकी औपधि नहीं मिलती और वैसी मन्त्रशक्ति भी नहीं देख पडती ।

सापके उस्तादोंको सांपके विषकी दवायोंके जुम होनेका कारण है,—समाजकी उपेक्षा । जितना ही अङ्गरेजी शिक्षाका धाढम्बर बढ़ने लगा, शिश्चित लोग सांपके उस्तादोंको उतना ही घृणाकी नजरसे देखने लगे । उस्तादोंकी देहमें खी क्रिया हुआ कपडा नहीं, पैरमें जूता नहीं, पाकटमें घडी नहीं, शिरमें एलवर्ट फ़ैशन केश नहीं, फिर उस्ताद लोग घृणाकी दृष्टिसे क्यों न देखे जायगे ? उस्ताद लोग जोड़ीपर चढकर दवा करने नहीं जाते,—रोगीको देखकर प्रेसक्रिपशन नहीं देते, विजिट नहीं लेते, फिर उस्ताद लोग घृणाकी दृष्टिसे क्यों न देखे जायगे ? घुटनेके ऊपर मैली धोती, कमर कसी हुई बाल बिखरे हुए, गाखूा बढ़े हुए, तलबे फटे, उ गली भव जालम अलग, रङ्ग काणा,—हे अङ्गरेजी विज्ञाना विरेश्वर । ऐसे उस्तादोंसे बातचीत करनेमें तुम्हें कष्ट न होगा ? जिसे छूकर हाथ घोनेमें तुम्हें एक टिकिया साबुन खर्च करना पडेगी, उसे क्या जुम सहज ही? गरमें स्थान देना चाहते हो ? शिक्षाके प्रतापसे उस्तादोंकी देखकर ही तुम्हारे मनमें होगा—साणा फूट जानना बूझता है नहीं—ठग, चोर एवं नरघाती ।—दो एक पत्नी प्टी टे चौर हो चार मन्त्र उच्चारण करके घोखेबाणोसे लोगोंसे पैसा लेना ही इसका रोजगार है । विज्ञेय • जब अरोपके सारे वैज्ञानिक वीरगण अथतक सांपके विषकी कोइ दवा नहीं ठीक कर सके हैं, तब यह फटा दटा कपडा पडने,

बिरश्चर, घसभ्य, दर्भर जीव सांपके विषकी सुचिकित्सा जानेगा, यह क्या कभी सम्भव हो सकता है ?

ऐसे देशमें सभ्यताकी रीशनी जितना ही प्रवेश करने लगे, रीशनी उठे हुए घुग्घूको माति सांपके उस्ताद लोग उतना ही छिपने और अन्तहाग होने लगे ।

प्राचीन ऋषि प्रणीत, मन्थोंमें भी सर्प चिकित्साका विस्तृत वर्णन है । चरक पाँढये, देखियेगा, कि अति विशद भावसे सर्पचिकित्सा प्रकरणमें लिखे हुए रोगोंकी गाना व्यवस्थामें नागा प्रकारकी चिकित्साका उल्लेख है । कहीं कहीं अन्य कारने दर्पपूर्वक कहा है, कि रोगीकी अमुक अवस्थामें अमुक औषधि प्रयुक्त होनेसे वह अवश्य अच्छा हो जायगा । हिन्दू-चिकित्स शास्त्रमें एक तरह चरक मस्तकका मुकुटस्वरूप है । अनेक आदमी इसे सर्वश्रेष्ठ गुरुकी भांति मानते हैं । आज चरकका आशिक अजुवाए पाठकर यूरोप और अमेरिका विमोहित हैं वही मछाप्राज्ञ चरक लोगोंको सुलानेके लिये झूठ ही सर्पविषका चिकित्सा विषयक प्रवन्ध इतने विशद और विस्तृत भावसे लिखेंगे—क्या यह विश्वासयोग्य बात है ? बुद्धिमानकी धारणामें आता है ? तब दुःख यही है, चरककी चिकित्सा इन समय उठ गई है, यह कहना अतुष्टि न होगी । परीक्षा करके फल देखनेवाले अभीतक पैदा नहीं हुए । चरक ने जिन जड़ी वृष्टियोंका उल्लेख किया है, उनमें अधिकांशको तो खोग पहचानते ही नहीं । विना गुरुके बताये पहचान लेनेका उपाय भी नहीं है,—किन्तु गुरु नहीं हैं ।

इसी तरहके गाना कारणोंसे इस समय इन देशकी सप्रल

छत्तीसवा परिच्छेद ।

सर्प चिकित्सा लोप हो गई है। सांपके विषकी सुचिकित्सा
रही, यह समझकर आज हम भी निश्चिन्त हैं। कारण
अङ्गरेगोने कष्ट दिया है,—सापके विषकी औषधि नहीं है।
इसीसे रघुदयाल जैसे चिकित्सक भी अब नहीं देख पड़ते
पाठक। एकवार एक अङ्गरेज मजिस्टरकी कन्याको सांपने
काट लिया। रघुदयालने सुचिकित्साद्वारा उसे अच्छा किया।
विनायतके किमी वैज्ञानिक पत्रमें उस समय इस अपूर्ण सर्प
चिकित्साकी बात,—मृतप्राय रोगीको जी-न प्राप्तिकी बात,—
लिखी गई थी। उस समयके अङ्गरेज वैज्ञानिक चिकित्सक
दलमें इस बारेमें कुछ आन्दोलन मचा था, पर वह आन्दोलन
स्थायी न हुआ। जैसा उदय,—वैसा ही विलय।

छत्तीसवा परिच्छेद ।

रघुदयाल हाथपर सापको लेटाये हुए वीरवाहुके साथ
गौन्दारके आन्दर मङ्गलमें गये। जाते ही एक छाँडीमें
सापको यत्नपूर्वक रख दिया। छाडीको जककर अस्फुटम्
में काइ मत उच्चारण किये।
जमौन्दारके लडकेकी उमर पन्द्रह वर्षसे ज्यादा न होगी।
वह गौरवान्ति देह सांपके विषसे अर्णरित होकर मागे
बर्ण हो गई है। रोगी चेतनाहीन है। जीभ कुछ बाहर

बांध दिया । पीठको भी इसी तरह छुरेसे थोडामा थोर डाला फिर उसमें कुछ रस डाला, उसका सुह किसी औषधिसे बन्द करके उसपर कपडा लपेट दिया और स्यासे बाध रखा ।

सापने बालकके पैरके बाये अङ्गुठेमे काट लिया था । अब रघुदयाल उस स्याको परीक्षा करने लगे । जरामको रघुदयालने छुरेसे खण्ड खण्ड कर डाला । एक मंत्र उच्चारण करके जखमके मुंहपर एक सफेद पत्थर चपका दिया । फिर एक पत्ते का रस लेकर नाक और कानमे डाल दिया । जखममे घाठ अङ्गुल ऊपरके भागको रघुदयालने छुरेसे चीरा । कुछ ध्यादा फाडा और उसमें सुह लगाकर सूा चूमने लगे । चूस कर काला काला रस मुंहसे फेकने लगे । कुछ देरतक इसी तरह खून निकालकर अन्तमें जखमके मुंहपर फिर एक उजला पत्थर चपका दिया ।

अब रघुदयालने मालिकसे कहा,—“उत्तम दही, पानी भात, अमाठी, दो डाय और मछलीके भोलका—जल्द बन्दोवस्त कीजिये ।”

“तथास्तु”—कहकर मालिक चल खड़े हुए । गृहिणी और उसकी मासने उनका अनुगमन किया । इधर रघुदयाल एक अपूर्व खरमें अज्ञोष भाषामें एकान्त मगसे मत पढ़ने लगे ।

मत्रकी भाषा सस्कृत है, कि हिन्दी, बङ्गला है, कि टिब्रू,—सो कुछ समझ नहीं पडता । भाषा गद्य है, कि पद्य,—यह भी समझमें नहीं आता । कभी सुर खूब ऊचा उठता है और कभी खूब नीचे उतर आता है । रघुदयाल कभी हसते हैं, कभी रोते हैं, कभी विरतिभाव प्रकट करते हैं, कभी मधु

कष्टी मंत्र मन्त्रीय गते है । कभी "मार मार" कहता है, कभी
 विकट शरीर भागा उधारण करते है । हा खराब बातोंकी
 सुकर वागमें उ गला देता परकी है । फिर उस समय रजु-
 दयाल मागे उपाय था,—शरी प्रज्ञावान नृत्य थे । बांसको
 एक कैची ठेकर कभी व्यपने व्यूपर मांगी है, कभी पत्तों पर
 पटकता है, कभी कभी धीरे धीरे रोगी न व्यूपर मांगी है और
 कभी कभी धाँड़ीके छकीपर । रजु-याल इस तरह प्रायः
 साढ़े तीन घण्टे तक बात चढ़ता रहे ।

चकते पकन उका गला बैठ गया । जानने रजु-याल
 धीरेसे मापकी माहर निकारा । मापकी सामने रजक
 मन हो मग मत पढ़ने लगे । फिरसे मर्षे धोर धोर मर्षीय
 धीरे धारा, मर्षीय द्वाकर धा ग र पेतावर मागे रजु धा
 गया । धा मापका सभाविद धा म् ककार धारस धा
 र दयाल आनन्दम कपकर उठ खड़े हुए, प्रमत्तचित्त गला
 बजा बजा कर मापन गधत कहा —"सा । अथ एव नही है ।
 अथक गडकीकी जग बग आयता, पर मापकी धीरे धा
 पनेगा, मांगी नही धारा ।

रजु-यालने रोगीको पनीगा जगरे देता कि
 अथ बात नहीं है । अथक पर जग धा मागे
 धोर धागे प्रड मये है । अथ धारा धीरे
 माप कि पढ़े । अर्धीसे जिम गीटोकी रजु-
 तिरपर अथकया धा अथ एव धीरे धा उठा कि
 उठा धा रजु उलटा धीका धोर धा । र
 धीरे धा धा । अथ धा धा धा धा धा

बाप दिया । पीठको भी इसी तरह कुरेसे थोडामा चीर डाला फिर उसमें कुछ रस डाला, उसका सुंह किसी औषधिसे बन्द करके उसपर कपड़ा लपेट दिया और स्यासे बांध रखा ।

सापने वातकके पैरके बाये अङ्गुठमें काट लिया था । अब रघुदयाल उस स्यानको परीक्षा करने लगे । जखमको रघुदयालने कुरेसे खण्ड खण्ड कर डाला । एक मत्र उच्चारण करके जखमके सुंहपर एक सफेद पत्थर चपका दिया । फिर एक पत्थेका रस लेकर नाक और कानमें डाल दिया । जखमसे व्याठ अङ्गुल ऊपरके भागको रघुदयालने कुरेसे चीरा । कुछ ध्यादा फाडा और उसमें सुंह लगाकर खून चूसने लगे । चूस कर कागज काला खून सुंहसे फेकने लगे । कुछ देरतक इसी तरह खून निकालकर अन्तमें जखमके सुंहपर फिर एक उजला पत्थर चपका दिया ।

अब रघुदयालने मालिकसे कहा,—“उत्तम दही, पानी भात, ग्रमानी, दो डाय और मक्खलीके भोलका—जल्द बन्दोबस्त कीजिये ।”

“तथास्तु”—कहकर मालिक चल खड़े हुए । गृहिणी और उनकी सामने उनका अनुगमन किया । इधर रघुदयाल एक अपूर्व स्वरमें अवोध भाषामें एकान्त भासे मंत्र पढ़ने लगे ।

मंत्रकी भाषा संस्कृत है, कि हिन्दी, बङ्गला है, कि टिबेट,—सो कुछ समझ नहीं पडता । भाषा गद्य है, कि पद्य,—यह भी नमझमें नहीं आता । कभी सुर खूब ऊंचा उठता है और कभी खून नीचे उतर आता है । रघुदयाल कभी हसते हैं,

हैं और कभी खोलता है। चारा खोलकर उसने रघुदयालको देखा। अधिक दृग्गतक नगर न जान सका। रघुदयालको देखकर उसने आंखें मूट दीं, फिर विश्राम करने लगा।

आगे देखते बाद फिर उसी आंख खोलकर रघुदयालको देखा और धीरेसे पूछा,—“तुम कौन हो ?” फिर माताको टिगकर कहा,—“तुम यहाँ क्यों ? मैं कहाँ हूँ ?”

लडक़े फिर आंखें मूट ली।

रघुदयाल लडक़ेको देखपर हाथ फेरने और मन धी मन मंत्र उच्चारण करने लगा। बालकने फिर जागकर कहा,—“मा ! बड़ी मूख लगी ते। यह कौन आदमी है, मा ?”

घाजापाकर बालकने पिता,—पितामही होगे निकट आये ? रघुदयालने कहा,—“अब कुछ चिन्ता नहीं है। अभी आपका लडका उठकर बैठेगा। आप उसके शिरछाने कच्चा नारियल दहो, जमागी और पानीभात रख दीजिये। उठकर बैठते ही खावगा।”

कच। नारियल का छानेपर रघुदयालने उसका मुँह काटकर उसमें पत्ते का रस छोड़ दिया। मिलाकर घोडा घोडा लडकेको पिलाने लगा। बालकने जागकर कहा—“मा ! बड़ी पैशाव लगी।”

रघुदयालने उक्तो ही। लडकेने ही उक्तो पैशाव किया। पैशाव कारोके बाद घट तकियापर उठकर बैठा और बोला,—“बड़ी मूख लगी है। जल्दी कुछ खानेको दो।”

रघुदयालने फिर नारियलका छान पीनेको दिया। इस बार मितु धेने नहीं मिनाममें दिया। बालक धूट धूट करके पी गया।

रघुदयाल फिर ताली बजा बजाकर नाचने लगे । रोगी धिक्त पहा हुआ था । जीभ कब सु हमे घुम गई, सो किमीने न देखा । देखते देखते रोगो करवट फेरकर सोया ।

लडकेको करघट पदलते देखकर निकट बैठे हुए पिता माताके अनन्दकी सीमा न रहीं । माताकी आखोंसे आसूकी धारा चलने लगी । रघुदयाली कहा,—“मा । रोतो क्यों हो । और एक घण्टेमें आपका लडका उठ खडा होगा ।”

माता खीचादिनी सुलभ लज्जाकी छोडकर रघुदयालसे कहा,—“अप सुनसे रहा नहीं जाता । अगर तुम कहो, तो हम एक पार लडकेको गोद ले ।”

रघुदयालने कहा,—“मा । घोडा और घैरे धारिये । गोद लेनेका समय आ रहा है ।”

रघुदयालने एक पत्तिका रस पिचोड करके पधलीमें रखा और कहा,—“शीघ्र घोडावा टटका दूध गर्म करके ले आइये ।”

तुरत ही गाय दुही गई । दूध गर्म किया गया । रघुदयालने आध सेंरके अन्दाज दूध लिया । उस पत्तिका रसको दुधमें मिलाकर एक छोटे नितुसे गोलीको पिलाने लगे ।

दूध इस बार वाहर नहीं गिरा,—भीतर गया । रघुदयालने कहा,—“देखिये, मा ! आपका लडका दूध पी रहा है, आइये और तजदीक आकर देखिये,—पर बीलीयेगा नहीं, रोइयेगा भी नहीं ।”

माता पुत्रके निकट आकर बैठ गई और निमेषशून्य नेत्रसे पुत्रके सुखकी ओर ताकने लगी ।

दाइकेने फिर करवट बदली ।— लडका कभी आस न देता

अब कोई चिन्ता नहीं है । यह जड़ी व्यापकी दिये जाते हैं ।
इसे करडे में बांधकर अपने ही घात रखिये । कभी कभी इस
'जड़ीको लडनेको सुघाते रहियेगा ।'

अब रघुदयालने ब्राह्मण जमीन्दारका पटरा ले तथा हाथ
जोड़कर कहा,—महाशय । काम रातम हो गया । अब
हम जाते हैं । अभी हमें बहुत दूर जाना है ।"

"यह कैसी बात है ?" इतना कहकर ब्राह्मण जमीन्दारने
आँखोंमें आसू भरके रघुदयालको हीनों हाथोंसे जकड़कर पकड़ा
और कहा—"तुम जाओगे कहाँ ? इतनी रात बीत चुकी है,
तुमने अबतक जल भी ग्रहण नहीं किया—तुम जाओगे
कहाँ ? हमारी माने तुम्हारे लिये अपने हाथसे भोजन
बनाया है, तूम भोजन करो और यहीं रहो । तुम हमारे
लडनेके जीवनदाता हो—तुम्हें हम छोड़ नहीं सकते । यह
देखो, हमारी स्त्री तुम्हारे लिये घालीमें रखकर पाच सौ
मोहर लिये जाती है, यह देखो, हमारी स्त्री जिस हीरे-
की अगुठीको अपनी उंगलीमें पहनती थी वह हजार रुपयेसे
भी ज्यादा दामके हीरेकी अगुठी मनेकी धालीके ऊपर
शोभायमान है । और यह देखो, हमारी स्त्री तुम्हारे लिये
अक्षत भरकर अन्तत दश बारह नग सोनेका गहना लिये जाती
है,—इसीसे कहते हैं, कि तुम जाओगे कहाँ ? तुम्हारे लिये
प्राण दे देनेपर भी हम अणुसुक नहीं हो सकते—सामान्य
अर्थ तो कुछ है ही नहीं ।"

रघुदयालने हमकार उत्तर दिया,—"महाशय । हम
कीजिये,—सांपकी चिकित्सा करने पैसा नहीं लिया जाता,—

साप उमी तरह फा फैलाये खड़ा है । रघुदयालने गलेमें कपडा डालकर उसे प्रणाम किया और सामने दूध रखकर कहा,—देवता । तुम्हारेवास्तु यह दूध लाये हैं, ग्रहण करो ।

सापने दूध नहीं पिया । रघुदयालने कहा,—“किमीके सामने साप दूध न पियेगा । सांपके सामने कपडेका परदा टाग दो—जिसमे सांपका दूध पीना कोई देख न सके ।”

परदा पड गया । रघुदयालने कहा,—“सापने थोडा ही दूध पिया है । और नही पियेगा ।”

रघुदयालने प्रीतिपूर्वक सापको पकडकर द्वाडीमे रख दिया और कहा,—“बालकके भोजनके लिये अलग बन्दोबस्त करो । हम कुछ दूर छटकर खडे होते हैं । दहीका आधा हिस्सा लेकर माठा तय्यार करो—दही और माठा दोगो खिलाना होगा ।”

बालकने बैठ कर पनीभात, दहीमाठा और आमामीमे नमन मिलाकर खाया । च्या इती प्रबत थो, कि राव अचर्योत सामग्रीको बालकने गम्ती तरह खाया । बालककी इच्छा कुछ और भीठा भात खानेकी थी । रघुदयालने मनाकर दिया । उन्होंने कहा,—रानमें और नही,—सबेमे मा भुङ्करो और मा मनसाको पूजा देकर तब भात और मद्धतीका रसा खाना । माकी पूजा देकर नाडका प्रगाद माख खाओ ।

अलग बिद्दौनेपर बालक जाकर बैठा ।

उम समय तीन पहर रात बीन चुकी थी । रघुदयालने कहा,—“बाहरवाले खरनें बहुत आदमी आपके तडकेको देखनेके लिये छुटपटा गये हैं । अब उन्हें दहा आनेकी आधा रा-

अब कोई चिन्ता नहीं है । यह जड़ी व्यापको दिये जाते हैं । इसे कपड़ेमें बांधकर अपने ही पास रखिये । कभी कभी इस जड़ीको लडकेको सुघाते रछियेगा ।”

; अब रघुदयालने ब्राह्मण जमीन्दारका पदरज ले तथा हाथ जोड़कर कहा,—महाशय । काम खतम हो गया । अब हम जाते हैं । अभी हमें बहुत दूर जाना है ।”

“यह कैसे बात है ?” इतना कहकर ब्राह्मण जमीन्दारने व्याखोंमें व्याख भरे रघुदयालको दोनों हाथोंसे जकड़कर पकड़ा और कहा—“तुम जायोगे कहा ? इतनी रात नीत चुकी है, तुमने अबतक जल भी ग्रहण नहीं किया—तुम जायोगे कहा ? हमारी माने तुम्हारे लिये अपने हाथसे भोजन बनाया है, तूम भोजन करो और यहीं रहो । तुम हमारे लडकेके जीवादाना हो—तुम्हें हम छोड़ नहीं सकते । यह देखो, हमारी स्त्री तुम्हारे लिये थालीमें रखकर पाच रुी मोहर लिये आती है, यह देखो, हमारी स्त्री जिस हीरेकी अंगूठीको अपनी उंगलीमें पहनती थी वह हजार रुपयेके नी ज्यादा दामके हीरेकी अंगूठी मन्त्रीकी धालीके ऊपर आभायमा है । और यह देखो हमारी स्त्री तुम्हारे लिये अन्न भरकर अन्नत दण्ड वारह नग मोनेका गहना लिये आती है—इसीस कहते हैं, कि तुम जायोगे कहा ? तुम्हारे लिये प्राण दे देनेपर नी हम दण्डतल नहीं हो सकते—मामाप धर्य तो कुछ है ही नहीं ।”

रघुदयालने हमकर उत्तर दिया,—“महाशय । हमारा कीजिये,—मापक ! विक्रिहा करके पैसा नहीं दिया जागा,—

हम एक कागी कौड़ी भी न लेंगे। गुणने माग कर दिया है। हम हाथ जोड़कर कहते हैं, हमारा इतना ही उपकार कीजिये, कि हमें लोभ मत देखाइये। हम मोटिया मजर टहरे, हमें वही पारिणामिक, वही बर दीजिये, कि हम लंभ रोक सकें। यह होने हीसे आम ऋणमुक्त हो जायेंगे।”

जमीन्दारके नेत्रसे आसूकी धारा बह निकली। उन्होंने रोते रोते कहा,—“यह कैसी बात है। यह कैसी अद्भुत बात है। यह कैसी अभावनीय बात है। हमने तो मगमें यह सङ्कल्प कर लिया था, कि तुम्हें इसी गावमें बमावेंगे,— पांच सौकी आमदनीका एक भौजा तुम्हारे नाम लिख देंगे। हमने तो ऐसा ही स्थिर किया था, किन्तु यह केवल कल्पना ही ठहरी। अथवा हम स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं।”

रघुदयालने कहा,—“इस दासको क्षमा कीजिये। नाराज मत होइयेगा।”

ब्राह्मण जमीन्दारने उत्तर दिया,—“अच्छे से सब बातें नीले होंगी। सारा दिन तुमने मजदूरकी भांति काम किया है और अबनरु पेटमें कुछ पडा नहीं,—इस समय कुछ जतन करो, फिर भरपेट भोजन करना। मगरे हम तुम्हारे बारेमें विवेचना करे गे।”

उस समय रघुदयालने मापकी छाडीको दाहिने हाथमें उठा लिया। बाये हाथमें अपनी लम्बी लाठी पकटी। अंग कहा,—“मापके काटे हुए आदमीके यहाँ जल ग्रहण करना भी हम लोगोंको मना है। सर्प चिकित्साविद्या बड़ी कठिन

है । दाग खेनेसे बुराई होती है, विद्याका लोप हो जाता है ।
व्याप घने चना कीजिये ।”

यह बात कहकर उत्तरकी अपेक्षा बिना किये ही रघु-
दयाल लाठी लेकर लम्बे लम्बे डेगसे घरके बाहर हो गये ।
रघुदयाल विद्युत् वेगसे चले । और कोई उन्हें न देख सका ।

ब्राह्मण जमीन्दार, पत्नी एवं जननीने “ाययौ तस्यौ”,—
कठपुतलीकी भांति, किकर्त्तव्यविमूढकी नाइ सन्दही हो
रहे, अन्तमें कुछ प्रकृतस्य होकर रोते रोते ब्राह्मण जमीन्दारने
हरवान धीरवाहुसे कहा,—“वीरवाहु । देखो तो रघुदयाल
कित्त राहसे गया ।”

धीरवाहुने हाथ जोड़कर कहा,—“हुनूर । हम कहाँ
देखें ? रघुदयाल अबतक दो कोम चले गये होंगे ।”

यही एक दिन रघुदयाल कात्यायनीके घरकी रक्षा न कर
सके । इसदृश्यपतिगण—बहुत दिनसे सुयोग और सुविधा
खोज रहे थे । आज रघुदयाल घसुक ग्राममें मर्म चिकित्साने
काममें अटक गये हैं यह सुनकर वे लोग कात्यायनीके घरका
सब कुछ लूट ले गये ।

सतीसवा परिच्छेद ।



किमी कात्यायनीके घरमें जाका डलवाया, यह सुनेकी
आश्चर्यकता सभी नहीं है । किम दुराचारीके यत्न एवं
घट्टावटके साधमरी कात्यायनीके परिवारपर यह जाकास्मी

खड्गघात हुआ, अभी इससे जाननेसे कुछ फल नहीं। किस उद्देश्यकी सिद्धिने लिये, जिस रुखाफलके पानके वास्ते कात्यायनीका सब कुछ खरा लिया गया, यह सुनने हीसे अब क्या होता है ?

डाका पडनेके बाद मचमुच ही कात्यायनीको षड्रूप मरगा पडा। अभीतक व्याज चीन बेचकर कष्टसे कात्यायनीका निब्वार होता था। डाकेमें सब कुछ लुट गया,— अब बेचेंगी क्या ?

डाका पडनेके कुछ ही दिन बाद गोचालिनने दूध देना बन्द कर दिया। मोदीने सीधा रोक दिया। घोबीने कपडा धोना छोड दिया। इसी समयसे सबेरे ही रघुदयाल एवं रमाप्रसाद लक्ष्मीके वास्ते दूध खरीदने या मागने बाहर निकल जाते थे।

एक बात व्याख्यानक मालूम होती है।— कात्यायनी कहती है,—“प्राय, सौ जवानोंने अनेक प्रकारके हथियार लेकर हमारा घर लूट लिया। डकैतों ने हम लोगोंको मारा पीटा नहीं, गांभी नहीं दी और मा शङ्करीकी कोठरीमें भी लूट नहीं मचाई। लक्ष्मीपुजाकी मोहर और धनको नहीं लिया।” बात यही है—रघुदयाल अकेला,—सहाय और सम्पत्तिहीन है,—और कोई वाहुवल अर्धबल कुछ भी नहीं है। रघुदयालकी उमर भी बहुत हो गई है। हा सौ जवानोंने क्या अबतक रघुदयालके डर हीसे कात्यायनीके घरमें डाका नहीं डाला था ? इस प्रयोग वयसमें अगर रघुदयालको पांच या दश आदमी प्रकड थे, तो रघुदयालकी सामर्थ्य कहा

है ? मौजगाओंके मुकाबले रघुदयाल क्या कर सकते हैं ? तब डाकू लोग इतने रिश्वतक रघुदयालनी गैरहाजरीका मौका लो खोज रहे थे ?

अनेक समय आदमी नामके प्रतापसे भी जयलाम करता है । इस रघुदयालनी उमर चाहे ज्यादा हो, किन्तु नामकी महिमा धो, पसार था, दश आदमी एक जगह बैठे हैं, यदि एक अङ्गरेज या अफगान घुमा उठाये, तो दश आदमी भाग खड़े होंगे । दश आदमियोंका बल एकत्र करनेपर अवश्य ही एक अङ्गरेज या अफगानके बलसे ज्यादा होगा, तब आदमी लोग भागते क्यों हैं ? इसका कारण है,—अङ्गरेज या अफगानको नाम महिमा और पसार !

उसी तरह नामकी महिमा और पसारके गुणसे रघुदयाल धर्मविनयी हो उठे थे । इसके सिवाय उमर कुछ ज्यादा होनेपर भी रघुदयालका बलविक्रम उता गही घटा था । शरीरमे व्यभीतक विलक्षण बल था । बराने अलावा राठी और खेननेके कौलमें भी उनका समकक्ष उस देशमें और कोई न था । जोरसे एकगुना होता है, पर कौशलसे दशगुना होता है । रघुदयालके गौरव हुंकारसे डाकू लोग धरधर कापते थे । इसीमे ध्यानकल रघुदयालको प्राय लाठी नी उठाया पड़ती थी ।

और भी एक कारण है । इस प्रदेशके नितने लड्डबाज, डाकू या जवान हैं—प्राय सभी रघुदयालके शिष्य प्रशिष्य हैं । इस प्रदेशमें जो कोई काठी पकड़ना जानता, वही रघुदयालको गुरुजी कहकर पुकारता और कितने ही तो प्रणाम करने

पदरज लेते थे। सुतरां जिस घरके रक्षक रघुदयाल हैं, डाका द ५ पडे ?

जिन जमीन्दारने रघुदयालको यत्ना डाका डाला था, उसके अधीनस्थ लठ्ठवाज कहते थे,—‘हुदूर। जिस घरकी रक्षा रघुदयालने हाथमें है, हजार डाकू भी उसमें पहुँचकर कुछ भी नहीं कर सकते। रघुदयाल यदि घनुर्बाण गरे और तीर चलाने तो उसके नामने कौन ठहर सकता है ? वह विषकी घुम्ती तीर जिसकी देहमें लगेगी नहीं मर जायगा। हम लोग कात्यायनीका घर लूटने जा कर प्राण न दे सकेंगे। तब जिस दिन रघुदयाल घरमें नहीं रहेगा, उस दिन आयास ही घरको लूट सकेंगे।’

जमीन्दारने देखा, कि हमारे लठ्ठवाजोंके हृदयमें रघुदयालका आतङ्ग बैठा है। उन्होंने खलमरुत्ता किसीसे कुछ न कहकर पञ्जाब प्रदेशसे आठ भयाक टील डोलवाले पन्ना लठ्ठवाजोंको बुलाया और देशस्थ लठ्ठवाजोंको यह आज्ञा दी,—‘तुम लोग देखते रहो, कि रघुदयाल किस दिन घरमें नहीं रहेगा,—उसी दिन डाका डाला होगा।’

जिस दिन रघुदयाल अन्य गावमें सर्पचिकित्सा कर रहे थे, उसी दिन कात्यायनीके घरमें डाका पडा। डाकू चोने रघुदयालकी खातिर और मा शङ्करीते माहात्म्यसे शङ्करी गृहमें न तो प्रवेश किया और न लठ पाट ही भगाया।

उसी जमीन्दारने रघुदयालकी वृद्धकादर पापना दरवा बतानेकी रीति की थी गाठ खरया सहीगा देण्ड तय्यार थे,

पैर रघुदयाली उगरी बात ७ सुनी । झूठ तानेके तौर पर कहा,—“हम रुपयेके भिखारी नहीं हैं।”

इता बडा पसार प्रतिपत्ति सम्पन्न दिग्विजयी पुरुष जब जाके हाथ ७ व्याघ्र, तब वह रघुदयालपर कुछ जुद्ध हुए । विप्रेषत कात्यायनीके घरसे उन्हें भिा निकाले, कात्यायनीका घर सहज ही दखल न होगा । जमीन्दार शिक करने और उन्हें कात्यायनीके घरसे निजालनेके लिये अनेक उपाय सोचने लगे ।

जमीन्दार भी सोचते हैं,—रघुदयाल जब मो जाय, तो एक धादमी बेजकर उसे खूब खूब करवा डालना या ठीक नहीं है ? पर काटेगा कौन ? प्रजाय किससे करे ? अच्छा कौशलसे विध दे देनेमें क्या दोष है ? हमारे इस कामका पता तो किसीको लगेगा नहीं, अथवा रघुदयालको सहज उपायसे मार डालना या भगा देना पड़ेगा ।

“एक चालाकी येनना होगी । मदेश तेली कलकत्तेमें रोजगार करता है । व्यापार करने बडा धादमी हो गया है । यहाँ हमारी जमीन्दारीमें रहनेपर भी हमें उतना मागता नहीं । उसे कर्जमे लाना होगा । डाकुओंसे उतका घर घुटना जेनेपर अन्तत बीस हजार रुपया नफाद और दूध चेशर भी हाथ लगेगा ।

“बीस हजार रुपया मिये या न मिये, हम उकैती करीज कलङ्क रघुदयालके मृत्यु करके उते गिरफ्तार करा देंगे । पुलिस हमारे हाथमें है । उकैती हो जानेके ही एक निम बाद दारोगाओंको बुजा और अकान्तमें परामर्श करके उतको

धुपचाप समझा दे'ग,—“यह काम रघुदयालके है। यदि आप सहायता दें, तो अभी डकैतीका किनारा कर दें। पर रघुदयालको पकड़ना सहज नहीं है। लाठी गहनेपर रघुदयाल पांच सौ आशुमियोंको भगा सकता है। इसलिये उसे बहुत सावधानी और कौशलके साथ पकड़ना होगा।” यदि माल सहित गिरफ्तार कराया जाय, तो और भी अच्छा है। इसकी चेष्टा करा होगा।”

ऐसा स्थिर करके जमीन्दारने मदेश तेलीको यहा डकैती कराई। कई हजार रुपयेका व्यसनाप और कई हजार तकट सुटवाकर अपनी घरमें रखा।

डकैतीके दो एक दिन बाद जमीन्दार अपनी कचहरीमें बैठकर ह्राय ह्राय करने लगे,—“देश अराजक हो उठा? देशमें रहना भार हो गया। चारो ओर डाकुओंका डर है। यदि हम डाकेका किारा न कर सके,—डाकुओंको यदि गिरफ्तार न करा सके, तो देशमें रहना मुश्लिल हो जायगा।”

देखने देखते दारोगा साहब जमीन्दारके रुकागपर आ पहुँचे। दोनो आशुमियोंने एक कोठरीमें यकान्त बैठकर क्या परामर्श किया, वह ज़िमीको मालूम न हुआ। अन्तमें दारोगामाहबने मुझसे यह बात सुन पडो,—“बडे साहब बहुत नाराज है। यदि इस बार मालसहित डकैतीको गिरफ्तार न कर सके, तो हमारी नौखरो चली जायगी।” जमीन्दारने कहा,—“कुछ डर नहीं है।”

उस प्रथम दिन,—उस अर्ध दिनकी बात एक बार याद करीजिये, रघुदयाल लक्ष्मीके लिये दूध खोजनेकी बाहर निकले

हैं। अपने गांवमें दूध न मिलनेपर दूसरे गांवमें गये हैं।
 इधर दूधके अभावसे लक्ष्मीका जख्म सूख रहा है। काव्यायनी
 सोच रही है,—“रघुदयाल कक्षा चला गया, अभीतक लौटा
 नहीं, जो रघुदयाल हम दिा हो दण्ड बीतते बीतते दूध
 लाकर लक्ष्मीको देता था, आज एक पहर समय बीत गया
 पर रघुदयाल अबतक आया क्यों नहीं? प्राय ढेढ़ पहर
 दिन चढ़ आया, तौभी रघुदयाल आया क्यों नहीं?”

किन्तु रघुदयाल और वह रघुदयाल नहीं है। रघुदयाल
 धृत, षष्ठ पिपीडित, जर्जरित और संज्ञा रहित है।

रघुदयाल दूसराली किमी गावमें जाकर एक गोबालेके
 यहाँ दूध माग रहे हैं,—“कहतें हैं, अभी तुम व्याधसेर दूध दो,
 पैसा उस नैला या कल दे जायग।”

गोबाला कह रहा है,—“तुम्हारा विश्वास क्या? तुम कौन
 हो? तुम्हें कभी देखा नहीं, तुम्हें पहचानते भी नहीं—
 दूध उधार कैसे दे?”

रघुदयाल कहते हैं,—“बच्चा!, एक काम करो। यदि
 तुम्हें विश्वास न हो, तो तुम्हारे गावकी कटिया काट देते
 हैं, हो वोभ घाम गड देंतें हैं। तुम हम वचन भरकर दूध
 हमें दो।”

इतना कहकर रघुदयालने गोबालेको बर्तन दिखाया और
 कहा,—“एक लडकी है। अगर वह दूध न प्रायेगी, तो मर
 जायगी। इसीसे दूधके लिये इतना व्याकुल हैं। तुम्हारे
 घरमें भी तो लडके खटकिया हैं,—भना कही तो भूख लगान
 पर वह मम कितना रोते हैं?”

गोआलेने दिखलि नही की। उसने कहा, कि वर्तन निकालो, दृष्ट देते हैं।

रघुन्याने वचन निकाला,—उसमें सेरभर दूध आता है। गोआला दूध जाली लगा। जब वर्तन व्याधा भरगया, तब रघुदयालने कहा,—“बस और नहीं।”

गोआलेने कहा,—लो, वर्तन भरे देते हैं।

गोआला दूध लाज रखा है। रघुदयाल रुठ्ठानयनसे देख रहे हैं। इसी बीचमें न जाने कछासे छटातु किभूत किमाकार, पर्यंतप्रमाण देह विशिष्ट, अतुल बलशाली दण्ड बारह तर-राज-सोंने आकर रघुदयालको पकड़ लिया और तुरत ही जकड़ कर बाध भी डाला। बांधकर रघुदयालको पीठपर लात, घुमा और लाठी मारने लगे।

अब दो जवानोंने आकर रघुदय लते दोनों हाथ पकड़ लिये। दो आँदमियोंने मजबूतीसे कमरको पकड़ा। एक आदमीने गला धरा और दो मजुखोंने दोगे पैरोंको पकड़कर बाध दिया। रघुदयालने हाथिने हाथमें दुपका वर्तन घर्तमान था। एक आदमीने जब उस हाथको पकड़ा तब रघुन्यालने कहा,—“यह क्या करते हो ? वर्तन गिर पड़ेगा दूध बरसद हो जयगा।”

इतना कहते ही वर्तन झुककर झड़ दूर जा रहा। रघुदयली देखा, कि अष्टमने एक रुख मिलनर घुमे पकड़ा है,—फिर नहीं चोरे। उा दण्ड बारह पठता डाकुण्यो। रघुदयालको इस तरह पीटा, कि बच्चे ही होश हो गये।

रघुदय जगिम पता नहीश पत्त नि, उसी समय शरीरगा, आठ मजिदमन और पचास चौकीदार लेकर उधा पहुँचे।

उन्होंने 'सबके सामने बेहोश रघुदयालकी कमरसे नेवर और रुपये भरी एक थैली निकाली। उन्होंने थैलीका कुछ खोज कर कहा,—“थोरोका माल मिला है। डाकैका माल पकड़ा गया है। कुछ माल मिला है, बाकी माल मिलने भी शायद अब कोई मद्दे नही है।”

फिर रघुदयालने सुहनें जल दिया गया। रघुदयालकों हीय हूय। चारों ओर दृष्टा हो गया, कि डाकूओंका घर नार पकड़ा गया है। रघुदयालके हाथमें हथकड़ी और पैरमें बेडी डालकर उसे बैल गाड़ीपर धानेमें ले गये।

नौ बची यह घटना उपस्थित हुई। एक बन्ने रघुदयाल धानेमें पडु जाये गये। एक बनेसे सान्कतक दारोग ने माली मार देने और पञ्चुचरोंका नाम बतानेके लिये भगज खासा किया। रघुदयालने कहा,—“हम कुछ भी नहीं जानते। हम निर्दोष हैं। हमने इस गिन्दगीमें प्राय डकैतोंके पचास एकको गिरफ्तार कर दिया है। हम खुद डकैती करेग यह आपकी निश्राम होता है। किसी दुष्टने मनुष्यने पडयत रचकर हमारा ऐसी दुर्दशा को है। हम निर्दोष हैं,—हमें छोड़ दीजिये। हम इसके बारेमें कुछ भी नहीं जानते।”

रघुदयालकी बातका विभाग दारोगाने कुछ भी नहीं किया दारोगा माहजने कहाया,—“यह डाकूओंका सरदार यहा ही घन्माय है। इसका एक उ गनीमें रगी बाघकर लटका दो। इन्ने यदय से शान्त बात समूल करना है, कि नहीं। पछान भागमें आगका छीटा दो और यह रघुदयाल ने ल गगनी। व ने व ग्रयारे सध भाग लघता है, कि नहीं ?

गोआलेने दिरुक्ति नहीं की। उसने कहा, कि वर्तन निकालो, दूध देते हैं।

रघुदयालने वचन निकाला—उसमें सेरभर दूध आता है। गोआला दूध जलने लगा। जब वर्तन व्याघ्रा भरगया, तब रघुदयालने कहा,—“बन और नहीं।”

गोआलेने कहा,—लो, वर्तन भरे देते हैं।

गोआला दूध जल रहा है। रघुदयाल मल्लिणायनसे देख रहे हैं। इसी बीचमे न जाने कहासे छटात् किभूत किमाकार, पर्वतप्रमाण देह प्रशिष्ट, अतुल बलशाली दश वारह नर-राक्षसोने आकर रघुदयालको पकड लिया और तुरत ही जकडकर बाध भी डाला। बांधकर रघुदयालकी पीठपर लात, घूमा और लाठी मारने लगे।

जब दो जवानोंने जाकर रघुदयालके दोनों हाथ पकड लिये। दो आँदमियोंने मनघूरीसे कामरको पकडा। एक आदमीने गला धरा और दो मनुष्योंने दोनों पैरोंको पकडकर बाध दिया। रघुदयालके दाहिने हाथमें दुधका वर्तन वर्तमान था। एक आदमीने जब उस हाथको पकडा तब रघुदयालने कहा,—“यह क्या करते हो ? वर्तन गिर पड़ेगा दूध बरबद हो जावगा।”

इतना कहते ही वर्तन लुठककर कुछ दूर जा रहा। रघुदयालने देखा, कि अष्टमूचने एक स्थान मिलकर हमें पकडा है,—फिर नहीं बोले। उन दश वारह पटा डाकुओंने रघुदयालको इस तरह पीटा, कि वह बे होश हो गये।

रघुदयाल जिस वन बेजोश पड़े थे, उसी समय वारोगा आठ किरियस और पचास चौकीदार, लेशर वहा पहुँचे।

उसो रातमें दारोगा साहब रमाप्रसादको लिये घानेमें धाके धाके ही रघुदयालकी रस्मी काटनेकी आशा से ।

रघुदयाल रमाप्रसादके साथ रखे गये । एकसे ठो चुप । साहब बजा । किन्तु कौन किस लिये घानेमें धाया है, क्यों होको ऐसी दशा हुई है, उस समय कोई भी ममभक्त न मका । एव रघुदयालके इशारेसे मना करनेके कारण रमाप्रसादकी भी कुछ पूछनेकी हिम्मत न पड़ी ।

पिछली रात है । चार बज चुका है । पाचका वक्त है । घाटेका दिन है, इसीसे अबतक खूब अन्धकार छाया है । "अमासियोंको उपयुक्त न्यानमें रखो,"—इतना कहकर दारोगा साहब शयनागारमें चले गये ।

धात्रागुमार कनिष्ठबल और चौकीदारोंने रघुदयाल और रमाप्रसादको घषकडी और नेडी पहनाकर एक ही कोठरोमें रख दिया । घाट चौकीदार और घाट बनवा पटान उस लोगोंकी चौकसीके लिये सुकरर हुए ।

रातभर कोई भी न सोया । ऐसा अन्धा बन्देवस्त करके कनिष्ठबल तथा घानेके अन्यान्य कर्मचारीगणने सुखसे गाड़ी नौद की ।

इतने कष्टके बाद क्या रघुदयाल सोये ?—क्या रमाप्रसादको नौद पड़ी ?

आदेश — कार्यमें परियत हुआ । रघुदयाल भुलने लगे । भुलते भुलते बीच बीचमें दोल खाने लगे ।

जिस समय रघुदयालकी ऐसी अवस्था थी, उसी समय नील कोटाके गायत्र दीवान वीरभद्रकी चिट्ठी दारोगाको मिली । उसमें लिखा था कि नीलकोठामें मोहर चोरी गई,—बाप श्रीधर व्याइये । वीरभद्रका खत पाकर दारोगा साहब घोड़ेपर सवार हुए और नीलकोठीकी ओर तीरकी भांति चले । चलनेके वक्त रघुदयालके पारमे कुछ कहना भूल गये । इस अवस्थामें रघुदयाल कबतक रखे जायगे, यह बात उन्होंने किसीसे न कही और किसीने उनसे पूछा भी नहीं । इसीसे दारोगा साहबके लौट आनेतक रघुदयालकी इसी अवस्थामें रहना पडा ।

इस अवस्थामें प्राय हो अर्धघण्टे रघुदयाल चुपचाप रहि । चुपचाप कष्ट सह लिया । जब अस्वस्थ हो उठा, तब रघुदयाल धीरे धीरे "बाप रे बाप" कहने लगे । जैसे जैसे दूर होती थी वैसे वैसे "बाप रे बाप" शब्द बढने लगा । जब गतने हो बले, तब उस गगामेरी "बाप रे बाप" शब्दसे दूरी दिशाये पूर्ण हो गई । सुननेमें आया है, कि यह भीषण शब्द ही कोमलतक सुना पडा था । लोग वाहते हैं, कि तीन घण्टे गत बीतनेपर भी इन "बाप रे बाप" शब्दके कारण चतुष्पथवर्ती लोगोंकी गैर टट गई थी । उस सम्भित गगामेरी गिादको सुनकर स्त्रीपुरुष, बालक नाजिकी आनन्दये कांप उठे थे । गूढने मोचा था— "गायद मध्याप्रपय कोष्टपत्र वक्षो है ।"

प्रायः वच सकते हैं ? सोचे नहीं केवल रघुदयाल और रमा प्रसाद । ठीक नहीं कह सकते,—शायद एक प्रहरी भी नहीं सोया ।

बालक रमाप्रसाद नींदका बहाना किये सोया है मही, पर बीच बीचमें गिर उठाकर एक बार रघुदयालको देख लेता है । रघुदयाल बांधे हुए दोगे हाथोंको उठाकर कहते हैं,—“न, इस तरह मत उठो—देखो मत । चुप चाप पड़े रहो ।” यह देखकर रमाप्रसाद पड़ा रहता है ।

रमाप्रसाद और रघुदयाल दोगे ही उल्काशित हैं । रमा प्रसाद सोचता है,—“रघुदयाल इस तरह क्यों कैर किये गये हैं ?” और रघुदयाल सोचते हैं,—“रमाप्रसाद क्यों इस तरह हानतने ठूमा गया है ?” रमाप्रसाद विचारता है,—“रघुदयाल जैसा माधु व्यादमी इस मसारमें विगल है । व भोम जैसे बली हैं सही, पर चोरी डकैती कभी नहीं करते, वरश्च चोर डाकू ओको पकडा ही उाका काम है । जो रघुदयाल भियम ह्नेको देखकर घाप नहीं रांत, भियमह्नेको सिगा देते हैं उहीं रघुदयालने ग्राह गेता को डुरुमै रिधा, कि गिरधतार होपार एक उंगलीमें रखो वापकर कडीसे पटना किये गये ? क्या किसीने माथ उहोंने लडाईं भगडा किया ? पर रघुदयालतो कराह गिय नहीं है । बिना नामानो अनुमतिने वे कभो शरा भी नहीं उठाव । थो येम, दृश ०—कृश ममम्ह नहीं पजता । चारो बीर गिनोयिना ही धरणा ० ।”

रघुदयाल सोच रहे हैं— यह दुपनीन किन व्यपरायसे शकते गयत ? —पगम मन्नाय है—पर यो भी तो

उठतीसवां परिच्छेद ।



दुःखमागरसे भी समय समयपर मुखकी तरङ्ग उठती है। मेघमरे गाकाणमें भी दभी कभी चन्द्रमा भांक लेते हैं। रघुदयाल एव बालक रमाप्रसाद शृङ्खलायुक्त व्यवहृत्, प्रहारित, प्रपीडित, दर्माहत, श्रूसव्यामें नोंधे हैं,—व्याज दोगे एक ही कोठरीमें हैं,—भुतरा बाल्यादित, पुलकित एव स्फीत हैं। रघुदयालको कारागारमें देखकर बालक रमाप्रसादने मागी निधि पाई। रघुदयालने भी रमाप्रसादको पाकर मागी प्राय पाया,—उ गनीकी व्यथा मानो दूर हो गई।

दारीगा नाहपका दानन प्राय पन्दरह हाथ लम्बा होगा षं डा माढ़े चार हाथसे ज्यादा नहीं है। मधुदयाल कोठरीमें एक पार्श्वमें उपविष्ट व्यथवा व्यर्हृत्प्रापित हैं। इनके बाद ही पहरेवाले बैठे हैं। उनके बाद रमाप्रसाद बैठा है। कोठरीमें दो खिडकिया हैं। दरवाजा खोलेका बना है। उसमें ताला लगा है। प्रत्येक खिडकीमें पास दो और दरवाजेके निश्ट चार प्रहरो लडे हैं। दानतमें पहरेका ऐसा बंदो बसत था।

सन्धेवस्तु न्यनेके समय पक्षा रहता है सही किन्तु स्वके यमुवार छनेशा काम नहीं होता। पहरेवालोंके आगते रहने की बात थी, किन्तु ये नव सोधे हैं। जाडेकी रातमें वे सीमा प्राय तीन बजेतक आगते रहे; बाकी रातमें बिना सोये क्या

प्रायः वचन सजते हैं ? मोचे तहाँ केवल रघुदयाल और रमा प्रमाद । ठीक तहाँ कह सकते,—शायद एक प्रहरी भी नहीं सोया ।

वानक रमाप्रमाद कीदका बहाना किये मोया है नही, पर बीच बीचमे शिर उठाकर एक बार रघुदयालको देख लेता है । रघुदयाल बाधे हुए दोनो हाथोंको उठाकर कहते है,—“न, इस तरह मत उठो—देखो मत । चुप चाप पड रहो ।” यह देखकर रमागमाद पडा रहता है ।

रमाप्रमाद और रघुदयाल दोनो ही उत्काण्ठित है । रमा प्रमाद सोचता है,—“रघुदयाल इस तरह क्यों कैद किये गये है ?” और रघुदयाल सोचते है,—“रमाप्रमाद क्यों इस तरह हानतने ठसा गया है ?” रमाप्रमाद विचारता है,—“रघुदयाल जैसा माधु व्यादमी इस ससारमें विग्न है । व भोम जैसे बली है सही, पर चोरो जकैतो क रो नहीं करते, बरफ वोर डाकु व्योको पकडाा ही उनका काम है । जो रघुदयाल भिखम जेको देखकर व्याप तही खाते, भिखमज्जेको गिला देते है, उन्ही रघुदयालने व्याज रेंचा कौन जूझमें किया, कि गिरफ्तार होकर एक उ गलीमें रखी बागकर कडीसे उटना दिये गये ? क्या किमीने साथ उन्होने लड़ाइ भगडा किया ? पर रघु दयालकी बराह गिय तहा है ! क्या नाताता अनुमतिके व कभी शस्त्र भी नही उठाते ! यो येना ज्ञाना है—कुछ मनमन्त तहीं पठता ? धारो गोर विभीषिका ही दीरगा है ।”

रघुदयाल सोच रहे है—यह दायीरा किन व्यपराधमे जालदगे गायी ? गणगात ममान्द होकर कौरे नो तो

पामिन होजाता । मालूम होता है, अपराध गुस्तर है खून तो नहीं कर डाला ? क्या यह कभी सम्भव हो सकता है ? हमारी समझमें तो कुछ भी नहीं आता !—भाजरा क्या है ?

रमाप्रसाद सोचने लगा,—“रघुदयालकी पकड़ा कैसे ? वे तो सहज ही पकड़े जानेवाले नहीं । अन्यान्य रूपमें झूठा अभियोग खड़ाकरके उन्हें पकड़ा बहुत ही कठिन काम है । तब क्या वे सचरुच ही दोंधी हैं ?—इसीसे गिरफ्तार हो गये हैं ? जिनके जाठी लेनेपर पाच सौ आदमी डरके मारे भाग खड़े होते हैं, वे बिना दोष सहज ही पकड़ाई देंगे ऐसा तो विश्वास नहीं होता ! तब अवश्य ही रघुदयालने कोई कसूर किया होगा !”

दोनों ही चिन्तामागरने निभन्न हैं । दोनों ही किनारा पकड़नेमें असमर्थ हैं । दोनों ही की छाती फट रही है, पर सुच किसीका भरो नहीं खुलता । इसीसे रमाप्रसाद उठ उठकर रघुदयालकी ओर ताकता था । किन्तु चतुर रघुदयाल उसे उम तरह उमनेके लिये मना करते थे । इस तरह प्रायः बीस मिनट बीत गये ।

उनचालीसवा परिच्छेद ।

जो दो पहरेवाले हागतके भीतर बैठे थे, उन लोगोंनि लड़कपामें रघुदयालसे जाठी खेलना सीखा था । रघुदयाल इस समय उन्हें पहचाने अथवा न पहचाने पुर वें लोग उन्में,

अच्छी तरह पहचानते हैं। रघुदयालने हथारों चले हैं। कितने चले तो ऐसे हैं, जो पहचाने और किसी उस्तादसे लाठी खेपना सीखकर रघुदयालने पाम व्याधे और उसे होचार दित जाठो खेपनेकी विद्या सीखकर पकड़े हो गये। रघुदयालना पाम इसी तरह मशहूर हो गया था। जब बाहरवाजे प्रहरी गोर नौदमें अश्वेत हो गये,—किसीकी नाक जोरसे बोलने लगी, तब भीतरवाला प्रहरी "कौन है," "बाा है," कहकर फुट्ट गोरसे चिन्ता उठा। इतनेपर भी किसीकी नौद न टूटी, एकका बोला न सका।

बालक रमाप्रसाद घबराकर बोल उठा,—"कहाँ, हम लोगोंने तो कुछ किया नहीं।"

रघुदयाल एक दृष्टिसे प्रहरीके मुखकी ओर ताकने लगा। इतने छाथ जोड़कर धीरे धीरे कहा,—"गुरुजी! हमें पहचानते हैं?"

रघुदयालने धीरेसे ही कहा,—"बोलो मत। यह छोटी मतली लाठी पड़ी है, उसे खेकर खिडकीको लगा दीजिये, फिर ठक् ठक् आवाज करो। अन्तमें हमसे बातचीत कीजिये।" प्रहरीने रघुदयालकी आज्ञारुमार काम किया, तोभी बाहरका कोई प्रहरी न आगा।

प्रहरी फिर रघुदयालने पाम जाकर बैठ गया और बोला,— "हमें पहचान लिया तो?"

रघुदयाल। नहीं।

प्रहरी। कैसे पहचान सकेंगे। आज प्राय बारह चौदह वर्ष हुए, आपने हमने लाठी खेपनेकी विद्या सीखी थी।

धामिन होजाता ? मालूम होता है, अपराध गुस्तर है रून तो नहीं कर डाला ? क्या यह कभी सम्भव हो सकता है ? हमारी समझमें तो कुछ भी नहीं आता !—भाजरा क्या है ?

रमाप्रसाद मोचने लगा,—“रघुदयालकी पकड़ा कैसे ? वे तो सहज ही पकड़े जानेवाले नहीं । अन्यान्य रूपसे झूठा अभियोग खडाकरके उन्हें पकड़ना बहुत ही कठिन काम है । तब क्या वे मचसुच ही नौपी हैं ?—इसीसे गिरफ्तार हो गये हैं ? जिनके लाठी लेनेपर पाच सौ आदमी डरने मारे भाग खड़े होते हैं, वे बिना दोष सहज ही पकड़ाइ देंगे, ऐसा तो विश्वास नहीं होता ! तब अवश्य ही रघुदयालने कोई कसर किया होगा !”

दोनों ही चिन्तामागरमें निभम हैं । दोनों ही किनारा पकड़नेमें असमर्थ हैं । दोनों ही की छाती फट रही है, पर सुच किसीका भरो नहीं खुलता । इसीसे रमाप्रसाद उठ उठकर रघुदयालकी ओर ताकता था । किन्तु चतुर रघुदयाल उसे उस तरह उमनेके लिये मना करते थे । इस तरह प्रायः बीस मिनट बीत गये ।

उनचाखीसवा परिच्छेद ।

जो दो पहरेवापे द्वाजतके भीतर बैठे थे, उन लीर्गोन लड़कपानें रघुदयालसे लाठी खिलना सीखा था । रघुदयाल इस समय उन्हें पहचाने अथवा न पहचाने, पर वे लोग उन्हें

थच्छी तरह पहचानते हैं । रघुदयालके हथारों चले हैं । कितने चले तो ऐसे हैं, जो पहचाने और किमी उस्तादसे लाठी खेला सीखकर रघुदयालके पास आये और उसे दोचार दिा लाठी खेलनेकी विद्या सीखकर पकड़े हो गये । रघुदयालका नाम इसी तरह मशहूर हो गया था । जब बादरवाले प्रहरी घोर नौदमें अचैन हो गये,—किमीकी नाक जोरसे बोलने लगी, तब भीतरवाला प्रहरी "कौन है," "का है," कहकर फुट्टे जोरसे चिह्ना उठा । इतनेपर भी किमीकी गीद न टूटी, नाकका बोलना ग रुका ।

बालक रमाप्रसाद धराराकर बोल उठा,—"कहाँ, हम योगोंने तो ब्राह्म किया नहीं !"

रघुदयाल एक दृष्टिसे प्रहरीके मुखकी ओर ताकने लगा । उमने हाथ जोडकर धीरे धीरे कहा,—"गुरुजों ! हमें पहचानते हैं ?"

रघुदयालने धीरेसे ही कहा,—"बोलो मत । यह छोटी मतली लाठी पट्टी है, उसे खेकर सिडकोको रागा दीगिये, फिर ठक ठक आवाज करो । अन्तमें हमसे बातचीत कीजिये ।" प्रहरीने रघुदयालकी आज्ञाशुमार काम किया, लोभी बाहरका कोई प्रहरी न आगा ।

प्रहरी फिर रघुदयालके पास जाकर बैठ गया और बोला,—
"हमें पहचान लिया तो ?"

रघुदयाल । नहीं ।

प्रहरी । कैसे पहचान सकेंगे । आज प्रायः बारह चौदह वर्ष हुए, आपसे हमने लाठी खेलनेकी विद्या सीखी थी ।

घामिन होजाता ? मालूम होता है, अपराध गुरुतर है
खून तो नहीं कर डाला ? क्या यह कभी सम्भव हो सकता है ?
हमारी समझमें तो कुछ भी नहीं आता ।—मानरा क्या है ?

रमाप्रसाद सोचने लगा,—‘रघुदयालको पकड़ा कैसे ? वे तो
सहज ही पकड़े जानेवाले नहीं । अन्यान्य रूपसे भूटा अभि
योग खडाकरके उन्हें पकड़ना बहुत ही कठिन काम है ।
तब क्या वे सचमुच ही दोषी है ?—इसीसे गिरफ्तार हो गये
हैं ? जिनके लाठी टेनेपर पाच सौ आदमी डरके मारे भाग
खड़े होते हैं, वे बिना दोष सहज ही पकड़ाई देंगे ऐसा तो
विश्वास नहीं होता । तब अगश्य ही रघुदयालने कोई कसूर
किया होगा !’

दोनों ही चिन्तामागरमें निभय हैं । दोनों ही किारा
पकड़नेमें असमर्थ हैं । दोनों ही की छाती फट रही है, पर
सुह किसीका भी नहीं खुन्ता । इसीसे रमाप्रसाद उठ
उठकर रघुदयालको ओर ताकता था । किन्तु चतुर रघु-
दयाल उसे उस तरह उमनेके लिये मना करते थे । इस
तरह प्राय बीस मिण्ट घेत गये ।

उनचालीसवा परिच्छेद ।

जो दो पहरेवाले हाजतके भीतर बैठे थे, उा लोगों
लक्ष्मणने रघुदयालसे लाठी खेजना सीखा था । रघुदयाल
इस समय उन्हें पहचानी अथवा न पहचानी, पर ये लोग उन्हें

आपने डाका डाला है, यह सुकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिके गोप हैं सही, पर आप जैसा धर्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाता भी दुर्लभ है। यह क्या ? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कहानी अठारह पर्व महाभारत है।—फिर कहे गे।

प्रहरी। हमारी भी उससे कम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात व्यभी रहे—फिर कभी सुनें गे और सुनावे गे। उद्धारका क्या उपाय है ?

प्रहरी। उपाय ठीक करने हीके लिये हम और हमारे मित्र जाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने हीके लिये कौशलसे हम दोनोआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उम बगलमें जो लडका पडा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी। वह कौन है ?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—“किस वस्त्रमें यह लडका आज धानतने आया है ?”

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे धानेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा,—“यह पाना अनेक समय यमका दक्षिण-दिशमें पतन जाता है। यहाँ दो एक दिन रहनेपर याम-दिशागकके प्राण जानिको आशङ्का है। इन लिये भागनेका

आपने तीन दिन शिवा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिवा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ। उस दिन आपने दूध मीठा खिलाकर हमें विदा किया था। गुरुजी। आपका ज्ञान चुकनेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है ?

प्रहरी। यहा लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहाँ है ?

प्रहरी। यह जागकर ही आप क्या करेंगे ? लोग जाते हैं, कि हमारा मकान बर्देवान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो ?

प्रहरी। गुरुजी। क्या कौनियेगा। आपने क्या सुके पदचान लिया ?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पदचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो ?

गणेश चौकीदारके जनेऊ न था, तौ भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेकी कहा। गणेशने गुरुजीको अपना पदरज दिया। गुरुजी बोले,— प्राण शौतल हुए। फिर उन्होने कहा,—“आपकी ऐसी अवस्था क्यों है ? आप मन्दिशाली और प्रतापवान होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों हैं ?

प्रहरी। गुरुजी। अपनी कहानी कहनेते पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र हैं। आपके पास चीरीका माल मिखनेकी बात सुनकर हमें बडा ताज्जुब हुआ है।

आपने छाका डाला है, यह सुकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिके गोप हैं मही, पर आप जैसा धर्मगिष्ठ प्राज्ञयोमें पाता भी दुर्लभ है। यह क्या ? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कहानी अठारह पन्च महाभारत है।—फिर कहेंगे।

प्रहरी। हमारी भी उससे कम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहै—फिर कभी सुनेंगे और सुनावेंगे। उद्धारका क्या उपाय है ?

प्रहरी। उपाय ठोक करने हीके लिये हम और हमारे मित्र जाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने हीके लिये कौशलसे हम होनोवाद्मी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उस बगलमें जो लडका पडा है, उसे हमारा ही वाद्मी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करा उचित है।

प्रहरी। वह कौन है ?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—‘किस कष्टमें यह लडका आज धाजतमें आया है ?’

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे धानेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा,—‘यह धाना अनेक समय यमका दक्षिण द्वारस्वरूप बन जाता है। यहा हो एक दिा रहनेपर आप और बालकके प्राण जाओकी आशङ्का है। इस लिये भागनेका उपाय सोचिये।’

आपने तीग दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उत्साह अच्छे थे। तुम अच्छी तरह नाटी खेल सकते हो। तुन्दारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुन्दारी शिक्षा समाप्त हो चुको। तुम घर जाओ।’ उस दिन आपने दूध मीठा खिला कर हमें बिदा किया था। गुरुजी! आपका ऋण चुकानेका नहीं रघुदयाल। तुन्दारा नाम क्या है ?

प्रहरी। यहा लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहाँ है ?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेगे ? लोग जानते हैं, कि हमारा मकान वर्दमान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो ?

प्रहरी। गुरुजी। क्या कीजियेगा। आपने क्या सुभे पहचान लिया ?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो ?

गणेश चौकीदारके जनेज न था, तौ भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे परम राज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना पदरज दिया। गुरुजी बोटे,— प्राण शीतल हूँ।’ फिर उन्होंने कहा,—“आपकी ऐसी अवस्था क्यों है ? आप सन्तुष्टिशाही और प्रतापवान होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों हैं ?

प्रहरी। गुरुजी! अपनी कहानी कहनेके पहले आपको हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र हैं। आपके पास चिरीका माल मिलनेकी बात सुनकर हमें बड़ा ताप्युव हुआ है।

आपने डाका डाला है, यह सुकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिने गोप है सही, पर आप जैसा धर्मगिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाया भी दुर्लभ है। यह क्या ? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कछाड़ी अठारह पत्र महाभारत है।—फिर कहे गे।

प्रहरी। हमारी भी उससे कम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहे—फिर कभी सुनें गे और सुनावे गे। उद्धारका क्या उपाय है ?

प्रहरी। उपाय ठीक करने हीके लिये हम और हमारे मित्र जाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने हीके लिये कौशलसे हम दोगोआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। सुन्दारी उस बगलमें जो लडका पड़ा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी। वह कौन है ?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—“किम कस्यनें यह लडका आज हावतनें आया है ?”

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे आगेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा,—“यह थाना न्योक्त समय यमका दक्षिण चारम्हण्डप बन जाता है। यहा ही एक दिन रहोपर आप और पापकक प्राण जानेकी आशुता है। इस लिये भागनेका उपाय सोचिये।

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उत्साह अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।” उम दिन आपने दूध मीठा खिलाकर हमें बिदा किया था। गुरुजी। आपका ऋण चुकनेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है ?

प्रहरी। यहा लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मका कक्षा है ?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करोगे ? लोग जाते हैं, कि हमारा मसान वर्दवान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो ?

प्रहरी। गुरुजी। क्या कौजियेगा। आपने क्या सुभे पहचान लिया ?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो ?

गणेश चौकीदारके जनेऊ न था, तौ भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना पदरज दिया। गुरुजी बोले,—“प्राय श्रोतल हुए।” फिर उन्हाने कहा,—“आपकी ऐसी अवस्था क्यों है ? आप सगृहस्थाली और प्रतापवान होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों हैं ?”

प्रहरी। गुरुजी। आपकी कहानी कहतेते पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत दायर हैं। आपके पास चौराका साल मिर्चनेकी बात सुनकर हमें बडा ताज्जुब हुआ है।

आपने डाका डाला है, यह सुनकर हम और विस्मित हुए हैं। आप जातिके गोप हैं सही, पर आप जैसा धर्मालिख ब्राह्मणोंमें पाता भी दुर्लभ है। यह क्या ? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल। हमारी कष्टांगी अठारह पर्व मंडाभारत है।—फिर कहेंगे।

प्रहरी। हमारी भी उनसे कम नहीं है।

रघुदयाल। अच्छा, यह सब बात अभी रहै—फिर कभी सुनेंगे और सुनावेंगे। उद्धारका क्या उपाय है ?

प्रहरी। उपाय ठीक करने हीके लिये हम और हमारे मित्र जाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने हीके लिये कौशलसे हम दोनोंआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल। तुम्हारी उस बालमें जो लडका पडा है, उसे हमारा ही आदमी समझिये। हमारे साथ उसका भी उद्धार करा उचित है।

प्रहरी। वह कौन है ?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—“किम कस्तरमें यह लडका आज हाजतमें आया है ?”

रघुदयाल। यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे जानेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा,—“यह थाना अनेक समय यमका दक्षिण द्वारस्वरूप बन जाता है। यहा हो एक दिन रहनेपर आप और बालकके प्राण जानेकी आशङ्का है। इस लिये भागनेका उपाय सोचिये।

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खुश हैं। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।” उस दिन आपने दूध मीठा खिलाकर हमें बिदा किया था। गुरुजी। आपका ऋण्य गुरुनेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है ?

प्रहरी। यहा लोग हमें गणेशके नामसे पुकारते हैं।

रघुदयाल। मकान कहाँ है ?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेगे ? लोग जानते हैं, कि हमारा मकान बरैदान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो ?

प्रहरी। गुरुजी। क्षमा कीजियेगा। आपने क्या सुभे पहचान लिया ?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो ?

गणेश चौकीदारके जीऊ न था, तौ भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना पहरण दिया। गुरुजी बोले,—“ब्राह्मण श्रौतल हुए।” फिर उन्होंने कहा,—“आपकी ऐसी अवस्था क्यों है ? आप मञ्जुश्रीवाली और प्रतापवा होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों है ?

प्रहरी। गुरुजी। अपनी कहानी कहनेके पहरे आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत बय्य हैं। आपने पास चिरीका माख मिलनेकी बात सुनकर हमें बडा ताज्जुब हुआ है।

आपने डाका डाला है, यह सुकर हम और विस्मित हुए हैं। आप वालिके गोप हैं मही, पर आप जैसा धर्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमें पाता भी दुर्लभ है। यह क्या ? ऐसा क्यों होता है।

रघुदयाल । हमारी कहानी अठारह पर्व महाभारत है।—फिर कहेंगे।

प्रहरी । हमारी भी उससे कम नहीं है।

रघुदयाल । अच्छा, यह सब बात व्यभी रहे—फिर कभी सुनेंगे और सुनावे गे। उद्धारका क्या उपाय है ?

प्रहरी । उपाय ठीक करने छोके लिये हम और हमारे मित्र जाग रहे हैं। आपकी रक्षा करने छोके लिये कौशलसे हम दोनोआदमी आज इस कोठरीके अन्दर प्रहरी नियुक्त हुए हैं।

रघुदयाल । तुम्हारी उस बगलमें जो लडका पडा है, उसे हमारा ही आदमी खमभित्ते। हमारे साथ उसका भी उद्धार करना उचित है।

प्रहरी । यह कौन है ?

रघुदयालने बालकका यथार्थ परिचय दिया।

प्रहरीने पूछा,—“किस कसूरनें यह लडका आज हालतमें आया है ?”

रघुदयाल । यह हम कुछ भी नहीं जानते। हमारे खानेपर यह आया है।

प्रहरीने कहा—“यह धाना अनेक समय यमका दक्षिण दारस्वरूप बन जाता है। यहा ही एक दिन रहनेपर आप और बालकने प्राण जानकी आश्रय है। इस लिये भागनेका उपाय खोजिये।

आपने तीन दिन शिक्षा देकर कहा था,—तुम्हारे उस्ताद अच्छे थे। तुम अच्छी तरह लाठी खेल सकते हो। तुम्हारी विद्या देखकर हम खूब है। तुम्हारी शिक्षा समाप्त हो चुकी। तुम घर जाओ।” उस दिन आपने दूर भीटा खिला कर हमें बिदा किया था। गुरुजी! आपका ऋण चुकनेका नहीं

रघुदयाल। तुम्हारा नाम क्या है ?

प्रहरी। यहा लोग हमें गणेशजी नामसे पुकारते है।

रघुदयाल। मन्तान कहाँ है ?

प्रहरी। यह जानकर ही आप क्या करेगे ? लोग जानते है, कि हमारा मन्तान वर्दवान जिलेमें है।

रघुदयाल। कौन जाति हो ?

प्रहरी। गुरुजी। जमा कीजियेगा। आपने क्या सुके पहचान लिया ?

रघुदयाल। अच्छी तरह नहीं पहचाना। तुम क्या ब्राह्मण हो ?

गणेश चौकीदारके जनेऊ न था, तौ भी रघुदयालने उसे ब्राह्मण कहा और उसे चरण रज देनेको कहा। गणेशने गुरुजीको अपना पदरज दिया। गुरुजी बोये,—“प्राण शीतल हुए। फिर उन्होंने कहा,—“आपकी ऐनी अवस्था क्यों है ? आप सन्ध्विशास्त्री और प्रतापवा होकर इस नीच कर्ममें प्रवृत्त क्यों है ?”

प्रहरी। गुरुजी। अपनी कहानी कहनेके पहले आपका हाल जाननेके लिये हम बहुत व्यग्र है। आपके पास चीरीका माल मिजनेकी बात सुनकर हमें बड़ा ताण्डुब हुआ है।

